भारत सरकार
GOVERNMENT OF INDIA
राष्ट्रीय पुस्तकालय, कलकत्ता
NATIONAL LIBRARY, CALCUTTA

वर्ग संख्या
Class No. H 891.4316

पुस्तक संख्या
Book No. Su 743 k

रा० पु०/N. L. 38.
MGIP Sant.—45 NL (Spl/69)—4-8-69—1,00,000.

॥ श्रीः ॥

सुन्दरविलास.

Sundaradāsa

सटिप्पण.

Sundaravilasa

जिसमें

ज्ञानसमुद्र, ज्ञानविलास, अष्टकादि समग्र
सुन्दरदासकृत काव्यका वर्णन है

जिसको

पं० कृष्णविहारी शुक्ल तथा पं० शिवदुलारे
वाजपेयी द्वारा शुद्ध कराय,

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बम्बई

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-मुद्रणयन्त्रालयमें
मुद्रितकर प्रकट किया।

संवत् १९६७, शके १८३२. 1910

सर्वाधिकार "श्रीवेङ्कटेश्वर" यंत्रालयाधीशने
स्वाधीन रक्खाहै.

80

Rs. 8.00
Jodhpur, P. Mehta
SHELF LISTED
H
891.4316
Su743k
NATIONAL LIBRARY
No. 24900
Date 9.3.69
CALCUTTA-27
20.5 Cm

प्रस्तावना.

प्राचीन समयमें श्रीमान् कविवर सुन्दरदासजी हुये थे जिनके रचित ग्रन्थोंसे ज्ञात होताहै कि, उक्त कविराज फारसी भाषा भी भलीभाँति जानते थे, इनके जितने निर्मित-ग्रंथ पाये जाते हैं वे सब वेदांतमार्गके हैं. धन्य है, वेदान्त ऐसे कठिन विषयको ऐसी सरलता और काव्यकी मृदुलतासे वर्णन कियाहै कि, जिसके क्षणमात्रके पठन पाठनसे विषयासक्त मनुष्योंके चित्तमें भी वेदान्तरूपी सूर्य की दीप्ति चमकने लगती है. उक्त कविने प्रत्येक प्रसंगोंमें ऐसे रोचक मनभावन छंद रचना किये हैं जो पढने वालोंके चित्तको भक्तिपक्षमें चुंबकके समान आकर्षित करते हैं, परन्तु अबतक केवल "सुंदरविलासही" मुद्रित हुवा था उसमें अनुपमकाव्य गुणदेख पाठकोंकी रुचि इनके अन्यग्रन्थोंके अवलोकन करनेको उत्साहित होती थी इस कारण हमने बहुत परिश्रमसे, ज्ञानविलास, ज्ञानसमुद्र भक्तिके उत्पन्न करनेवाली गुरुमहिमाष्टकादि त्रयोदश अष्टकें एकत्रितकर सर्व मुमुक्षु जनोंके चित्त मनोरंजनार्थ अत्यन्त शुद्धतापूर्वक कठिन २ शब्दोंकी टिप्पणी बनवाय मुद्रित किया है. यद्यपि ऊपरके अलंकारोंके एकत्रित करनेसे पुस्तक बढगई है तथापि सर्व साधारण मनुष्यों की, सुगमताके लिये मूल्य अत्यंतही न्यून रक्खा है ॥

आपका-खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-मुद्रणयन्त्रालय-बंबई.

अथ

सुन्दरविलासादिकी-

अनुक्रमणिका।

विषयाः	पृष्ठांकाः
श्रीगुरुदेवको अंग	१
श्रीउपदेश चिन्तामणिको अंग	८
काल चिन्तामणिको अंग	१७
देह आत्माविछोहको अंग	२४
तृष्णाको अंग	२७
धैर्य्य उराहनेको अंग	३०
विश्वासको अंग	३३
देहमलीनके गर्भप्रहारको अंग	३६
नारी निन्दाको अंग	३८
दुष्टजनको अंग	४०
मनको अंग	४१
चाणकको अंग	४८
विपरीत ज्ञानको अंग	५३
वचन विवेकको अंग	५५
निर्गुणउपासनाको अंग	६०
पतिव्रताको अंग	६१
विरह उराहनेको अंग	६३
शब्दसारको अंग	६५
भक्तिज्ञान मिश्रितको अंग	६७

विषयाः	पृष्ठांकाः
विपर्ययको अंग	६८
स्वरूप बिस्मरणको अंग	७३
विचारको अंग	८०
सांख्य ज्ञानको अंग	८६
अपने भावको अंग	९७
जगत्मिथ्याको अंग	१००
अद्वैत ज्ञानको अंग	१०१
ब्रह्म निष्कलङ्कको अंग	१०८
शूरातनको अंग	१०९
साधुको अंग	११४
ज्ञानीको अंग	१२२
निस्संशय ज्ञानीको अंग	१३०
प्रेमज्ञानीको अंग	१३१
आत्मअनुभवको अंग	१३२
आश्चर्यको अंग	१४१

ज्ञानसमुद्र ।

प्रथमोल्लास ।

गुरुशिष्य लक्षण निरूपण	१४५
ग्रंथ वर्णन	"
जिज्ञासु लक्षण	१४६
गुरुदेवकी दुर्लभता	१४७
गुरु लक्षण	"
गुरुदेवकी प्राप्ति	१४८
शिष्यकृत प्रार्थना	१४९

विषयाः	पृष्ठांकाः
गुरुदेवकी प्रसन्नता	१५०
शिष्यकी प्रसन्नता	,,

द्वितीयोल्लास ।

उत्तम मध्यम, कनिष्ठ भक्तियोग निरूपण	१५१
श्रवणभक्ति वर्णन	१५३
कीर्त्तनभक्ति वर्णन	,,
स्मरणभक्ति वर्णन	,,
पादसेवनभक्ति वर्णन	,,
अर्चनभक्ति वर्णन	,,
स्तुत्यष्टक	१५४
वंदनाभक्ति वर्णन	१५५
दासत्वभक्ति वर्णन	,,
सख्यत्वभक्ति वर्णन	१५६
आत्मानिवेदन भक्ति वर्णन	,,
प्रेमलक्षणा भक्ति वर्णन	,,
पराभक्ति वर्णन	१५८

तृतीयोल्लास ।

अष्टांगयोगनिरूपण	१६१
यमको निर्णय	१६२
द्वितीय सत्यको लक्षण	,,
तृतीय अस्तेयको लक्षण	,,
चतुर्थ ब्रह्मचर्यको लक्षण	,,

विषयाः	पृष्ठांकाः
पंचम अष्टप्रकार मैथुनको लक्षण	१६३
षष्ठ क्षमाको लक्षण	,,
सप्तम धृतिको लक्षण	,,
अष्टम दयाको लक्षण	,,
नवम आर्यवको लक्षण	,,
दशम मिताहारको लक्षण	१६४
शौचको लक्षण	,,
दशविधि नियम वर्णन	,,
प्रथम तपको लक्षण	,,
द्वितीय संतोषको लक्षण	१६५
तृतीय आस्तिक्यकी लक्षण	,,
चतुर्थ दानको लक्षण	,,
षष्ठ श्रवण सिद्धांतको लक्षण	१६६
सप्तम ह्रीको लक्षण	,,
अष्टम मतिको लक्षण	,,
नवम जापको लक्षण	,,
दशम होमको लक्षण	,,
सिद्धासन लक्षण	१६८
पद्मासन लक्षण	,,
प्राणायाम लक्षण	१६९
तीन नाडी वर्णन	,,
दश वायु वर्णन	,,
चक्र अनुक्रम....	१७०
प्राणायामकी क्रिया	१७१

विषयाः	पृष्ठांकाः
गोरख उक्ति	१७१
कुम्भक प्रकार वर्णन	१७२
प्रत्याहार	१७२
पंचतत्त्वकी धारणा	,,
पृथ्वीतत्त्वकी धारणा	,,
जलतत्त्वकी धारणा	१७३
तेजतत्त्वकी धारणा	,,
वायुतत्त्वकी धारणा	,,
आकाशतत्त्वकी धारणा	,,
ध्यान वर्णन	१७४
पदस्थ ध्यान वर्णन	,,
पिंडस्थ ध्यान वर्णन	,,
रूपस्थ ध्यान वर्णत	,,
रूपातीत ध्यान वर्णन	१७५
समाधि वर्णन	,,

चतुर्थोल्लास ।

सांख्य निरूपण	१७६
सांख्य वर्णन	,,
पंचतत्त्व स्वभाव	१७८
राजसाहंकार	१७९
सात्त्विकाहंकार	,,
देहस्थूल वर्णन	१८०
अन्यभेद	,,

विषयाः	पृष्ठांकाः
ज्ञानेन्द्रिय त्रिपुटी	१८१
कर्मेन्द्रिय त्रिपुटी	,,
अहंकार त्रिपुटी	,,
लिङ्ग शरीर	१८२
जाग्रत् अवस्था वर्णन	,,
स्वप्नावस्था वर्णन	१८३
सुषुप्त्यवस्था वर्णन	१८४
तुरीयावस्था	,,

पञ्चमोल्लास।

गुरु शिष्य सम्वाद अद्वैत निरूपण	१८५
चतुराभाव वर्णन	१८६
प्राङ्गभाव वर्णन	,,
अन्योऽन्यभाव वर्णन	१८७
प्रध्वंसाभाव वर्णन	१८९
अत्यन्ताभाव वर्णन	,,

ज्ञानविलास।

गुरुदेवको अंग	१९४
स्मरण अंग	,,
साधु अंग	१९५
देहात्माविछोह अंग	,,
उपदेश चिंतवन	,,

विषयाः	पृष्ठांकाः
कालचिंतवन अङ्ग	१९६
तृष्णाको अङ्ग	१९७
देहमलीनको अङ्ग	,,
आधीन उराहनेको अङ्ग	,,
विश्वासको अङ्ग	१९८
दुष्टको अङ्ग	,,
मनको अङ्ग	१९९
शूरातनको अङ्ग	,,
वचन विवेकको अङ्ग	,,
निज भावको अङ्ग	२००
स्वरूप विस्मरणको अङ्ग	,,
सांख्यको अङ्ग	२०१
विचारको अङ्ग	२०२
आत्माअनुभवको अङ्ग	,,
ज्ञानीको अङ्ग	२०४

NATIONAL LIBRARY CALCUTTA

श्रीसुन्दराष्टकानि।

गुरुमाहिमाऽष्टक	२०४
गुरुदयाऽष्टक	२०५
गुरुकृपाष्टक	२०७
भ्रमविध्वंसाऽष्टक	२१०
गुरुज्ञानोपदेशाऽष्टक	२१२
पीरमुर्शिदाऽष्टक	२१५

विषयाः					पृष्ठांकाः
रामजीअष्टक	....	....	....	....	२१७
नामाऽष्टक	....	....	....	....	२१८
आतम अचलाऽष्टक	....	....	....	....	,,
ब्रह्माऽष्टक	....	....	....	....	२२०
पंजाबी भाषाऽष्टक	....	....	....	....	२२१
ज्ञान झूलनाऽष्टक	....	....	....	....	२२३
अजबख्यालाऽष्टक	....	....	....	....	२२४

इति.

ॐ श्रीपरमात्मने नमः ।

श्रीसुंदरविलास प्रारंभः ।

अथ श्रीगुरुदेवको अंग १.

इंदव छंद ।

मौज करी गुरुदेव दया करि, शब्द सुनाय कह्यो हरि नेरो ॥
ज्यों रविके¹ प्रगटे निशि² जात सु, दूरि कियो भ्रम भानु अँधेरो ॥
कायिक वाचिक मानस हूँ करि, है गुरुदेवहि वंदन³ मेरो ॥
सुंदरदास कहै कर जोरि जु, दादू दयालुको नित चेरो ॥ १ ॥

पूरण ब्रह्म विचार निरंतर, काम न क्रोध न लोभ न मोहै ॥
श्रोत्र⁴ त्वचा⁵ रसना⁶ अरु घ्राण सु, देखि कछू कहुँ नैनँ⁷ न मोहै ॥
ज्ञानस्वरूप अनूप निरूपण, जासु गिरा⁸ सुनि मोह न मोहै ॥
सुंदरदास कहै कर जोरि जु, दादू दयालहि मोर नमो है ॥ २ ॥

धीरजवंत⁹ अडिग्ग जितेंद्रिय, निर्मलज्ञान गह्यो दृढ आदू ॥
शील सँतोष क्षमा जिनके घट, लागि रह्यो सु अनाहद नादू ॥
बेष न पक्ष निरंतर लक्ष जु, और कछू नहिं वाद विवादू ॥
ये सब लक्षण हैं जिन माहिं सु, सुंदरके उर हैं गुरु दादू ॥ ३ ॥

भवजलमें बहिजात हुते जिन, काढि लियो अपनो करि आदू ॥
और सँदेह मिटाय दिये सब, कानिनि टेर सुनायके नादूँ¹⁰ ॥
पूरणब्रह्म प्रकाश कियो पुनि, छूटि गयो सब वाद विवादू ॥
ऐसि कृपा जु करी हम ऊपर, सुंदरके उर हैं गुरु दादू ॥ ४ ॥

---

१ सूर्यनारायण । २ रात । ३ नमस्कार–दंडवत । ४ कान । ५ खाल । ६ जिह्वा । ७ आँखैं । ८ वाणी । ९ वन–श्रवण । १० शब्द ।

कोउक गोरखको गुरु थापत, कोउक दत्त दिगंबर आदू॥
कोउक कंथर कोउक भर्थर, कोउ कवीर कि राखत नादू॥
कोउ कहै हरदास हमार जु, यूं करि ठानत वाद बिवादू॥
और तु संत सबै शिर ऊपर, सुंदरके उर है गुरु दादू॥ ५॥

कोउ विभूति जटा नख धारि, कहै यह वेष हमारहि आदू॥
कोउक कान फराय फिरै पुनि, कोउक श्रृंगि बजावत नादू॥
कोउक केश लुचाइ करै ब्रत, कोउक जंगम केशिववादू॥
यों सब भूलि परैं जितही तित, सुंदरके उर हैं गुरु दादू॥ ६॥

योगि कहैं गुरु जैन कहैं गुरु, बौद्ध कहैं गुरु जंगम मानै॥
भक्त कहैं गुरु न्यासि कहैं वन-, वासि कहैं गुरु और बखानै॥
शेख कहैं गुरु सूफि कहैं गुरु, या हित सुंदर होत हिरानै॥
वादु कहैं गुरु वादु कहैं गुरु, है गुरु सोइ सबै भ्रम मानै॥ ७॥

सो गुरुदेव लिपै न छिपै कछु, सत्त्व रजो तम ताप निवारी॥
इंद्रिय देह मृषा करि जानत, शीतलता समता उर धारी॥
व्यापक ब्रह्म विचार अखंडित, द्वैत उपाधि सबै जिन टारी॥
शब्द सुनाय संदेह मिटावत, सुंदर वा गुरुकी बलिहारी॥ ८॥

पूरणब्रह्म बताय दियो जिन, एक अखंडित व्यापक सारे॥
राग रु द्वेष करैं अब कौन सुं, जो अहि मूल वही सब डारे॥
संशय शोक मिट्यो मनको सब, तत्त्व विचार कह्यो निरधारे॥
सुंदर शुद्ध कियो मल धोइ जु, है गुरुको उर ध्यान हमारे॥ ९॥

ज्यों कपडा दरजी गहि ब्योंतत, काष्ठहिको बढई कसियानै॥
कंचनको जु सुनार कसै पुनि, लोहको घाट लुहारहि जानै॥
पाहनको कसि लेत शिलावट, पात्र कुम्हारके हाथ निपानै॥
तैसहि शिष्यवसै गरुदेव जु, सुंदरदास तबै मन मानै॥ १०॥

---

१ नग्न। २ हृदय। ३ उदासी। ४ मुल्ला। ५ झूठा। ६ बराबरी। ७ आत्मज्ञानका विचार करना। ८ मैल।

मनहर छंद ।

शत्रु हू न मित्र कोउ, जाके सब हैं समान;
देहको ममत्व छाँडि, आतमाही राम हैं ॥
और हू उपाधि जाके, कबहूँ न देखियत;
सुखके समुद्रमें रहत, आठों याम[1] हैं ॥
ऋद्धि[2] अरु सिद्धि[3] जाकें, हाथ जोरि आगे खडी;
सुंदर कहत ताके, सबही गुलाम हैं ॥
अधिक प्रशंसा हम, कैसे करि कहि सकें;
ऐसे गुरुदेवको हमारे, जु प्रणाम हैं ॥ ११ ॥
ज्ञानको प्रकाश जाके, अंधकार भयो नाश;
देहअभिमान जिन, तज्यो जानि क्षारधी ॥
सोइ सुखसागर, उजागर वैराग रजु;
जाके वैन सुनत, बिलात है बिकारधी ॥
अगम[4] अगाध[5] अति, कोऊ नहि जानै गति;
आतमाको अनुभव, अधिक अपारधी ॥
ऐसे गुरुदेव वंदनीक, तिहूँ लोक माहिं;
सुंदर बिराजमान, शोभत उदारधी ॥ १२ ॥
काहुसों न रोष[6] तोष[7], काहुसों न राग द्वेष;
काहुसों न वैरभाव, काहुसों न घात है ॥
काहुसों न वकवाद, काहुसों नहीं बिषाद;
काहुसों न संग न तौ, काहु पक्षपात है ॥
काहुसों न दुष्टवैन, काहुसों न लेन देन;
ब्रह्मको विचार कछु, और न सुहात है ॥
सुंदर कहत सोई, ईशनको महाईश;
सोई गुरुदेव जाके, दूसरी न बात है ॥ १३ ॥

---

१ पहर । २ विभूति ९ प्रकारकी । ३ अणिमा, गरिमादि अष्टप्रकार । ४ जिसका मार्ग कठिन । ५ जिसकी थाह नहीं । ६ क्रोध । ७ प्रसन्नता ।

लोहकूं ज्यूं पारस, पषानहू पलटि लेत;
कंचन छुवत होत, जगमें प्रमानिये ॥
द्रुमकूं ज्यूं चंदन, पलटही लगाय बास;
आपके समान ताकूं, शीतलता आनिये ॥
कीटकूं ज्यूं भृंगिहू, पलटिके करत भृंगि;
सोउ उडि जाइ ताको, अचरज मानिये ॥
सुंदर कहत यह, सगरे प्रसिद्ध बात;
सद्यं शिष्य पलटै सो, सदगुरु जानिये ॥ १४ ॥

गुरु बिन ज्ञान नहिं, गुरु बिन ध्यान नहिं;
गुरु बिन आतम, विचार न लहतु है ॥
गुरु बिन प्रेम नहिं, गुरु बिन नेम नहिं;
गुरु बिन शीलहु, संतोष न गहतु है ॥
गुरु बिन प्यास नहिं, बुद्धिको प्रकाश नहिं;
भ्रमहूको नाश नहिं, संशय रहतु है ॥
गुरु बिन बाट नहिं, कौडी बिन हाट नहिं;
सुंदर प्रगट लोक, वेद यों कहतु है ॥ १५ ॥

पढेके न बैठो पास, अक्षर न बाँचि सकै;
बिनहीं पढेते कैसे, आवत है फारसी ॥
जौहरीके मिले बिन, परखि न जानै कोई;
हाथ नग लिये रहै, संशय न टारसी ॥
वैदहु न मिल्यो कोउ, बूटीको बताइ देत;
भेद बिनु पाये वाके, औषध है क्षारसी ॥
सुंदर कहत सुख, रंचहु न देख्यो जाइ;
गुरु बिन ज्ञान जैसे, अँधेरेमें आरसी ॥ १६ ॥

गुरुके प्रसाद बुद्धि, उत्तमदशाको गहै;

---

१ सोना । २ वृक्ष । ३ शीघ्र । ४ मोक्षका मार्ग ।

गुरुके प्रसाद भव-दुःख[1] बिसराइये ॥
गुरुके प्रसाद प्रेम, प्रीतिहु अधिक बाढै;
गुरुके प्रसाद राम, नाम गुण गाइये ॥
गुरुके प्रसाद सब, योगकी युगति जानैं;
गुरुके प्रसाद शून्य[2]-में समाधि[3] लाइये ॥
सुंदर कहत गुरु-देव जू कृपालु[4] होइ;
तिनके प्रसाद[5] तत्त्वज्ञान[6] पुनि पाइये ॥ १७ ॥
डूबत भवसागर-में आइकै बँधावै धीर;
पारहु लगाइ देत, नावकूं ज्यूं खेव सो ॥
परउपकारी सब, जीवनके सारे काज;
कबहुँ न आव जाके, गुणनिको छेव सो ॥
वचन सुनाइ भय, भ्रम सब दूरि करैं;
सुंदर दिखाई देत, अलँख[7] अभेव सो ॥
औरहु सनेही हम, नीके करि शोधि देखे;
जगमें न कोउ हित-कारि गुरुदेव सो ॥ १८ ॥
गुरु मात गुरु तात, गुरु बंधु निज गात;
गुरुदेव नखं शिख, सकल सँवारयो है ॥
गुरु दिये दिव्यनैन[10], गुरु दिये मुख वैन;
गुरुदेव श्रवण दे, शबद उचारयो है ॥
गुरु दिये हाथ पाँव, गुरु दिये शीशभावः[9];
गुरुदेव पिंड माहिं, प्राण आइडारयो है ॥
सुंदर कहत गुरुदेव, जू कृपालु होइ;
फेरि घाट घरि करि, मोहि निसतारयो[11] है ॥ १९ ॥

---

१ संसारिक दुःख। २ एकान्त। ३ ध्यान करना। ४ दयालु। ५ कृपा। ६ ब्रह्मज्ञान। ७ अदृश्य। ८ जांघा। ९ शिरसे पाँवतक। १० अद्भुत दृष्टि। ११ पारकरना, मुक्ति।

कोउ देत पुत्र धन, कोउ देत बल घन;
कोउ देत राजसाज, देव ऋषि मुन्यो है ॥
कोउ देत यशमानं, कोउ देत रस आन;
कोउ देत विद्याज्ञान, जगतमें गुन्यो है ॥
कोउ देत ऋद्धि सिद्धि, कोउ देत नवनिद्धि;
कोउ देत और कछु, ताते शीश धुन्यो है ॥
सुंदर कहत एक, दियो जिन राम नाम;
गुरु सो उदारं कोउ, दिख्यो है न सुन्यो है ॥ २० ॥
भूमिहुकी रेणुंकी तो, संख्यां कोउ कहत है;
भारहू अठारद्रुम, तिनके जु पात है ॥
मेघनकी संख्या सोउ, ऋषिने कही विचारि;
बुंदनकी संख्या तेऊ, आइके विलातं है ॥
तारनकी संख्या सो तौ, कही है पुराणमांहिं;
रोमनकी संख्या पुनि, कितनेक गातं है ॥
सुंदर जहाँलौं जंतं, तिनहींको आवै अंत;
गुरुके अनन्त गुण, कापै कहे जात हैं ॥ २१ ॥
गोविन्दके किये जीव, जात है रसातलको;
गुरु उपदेशै सो तो, छूटैं यमफंदतैं ॥
गोविंदके किये जीव, वश परे कर्मनके;
गुरुके निवारे सूं, फिरत हैं स्वछंद तैं ॥
गोविंदके किये जीव, डूबत भवसागरमें;
सुंदर कहत गुरु, काढै दुःखद्वंद ते ॥
और हू कहाँलौं कछू, मुखते कहूँ बनाय;
गुरुकी तौ महिमा, अधिक है गोविंदते ॥ २२ ॥

---

१ अधिक । २ प्रतिष्ठा । ३ दानी, महात्मा । ४ धूलि । ५ गिनती । ६ वर्षाके बूँद । ७ नष्टहोना । ८ पुराणमें । ९ शरीर । १० जीवधारी । ११ स्वाधीन । १२ कष्ट झगडा ।

चिंतामणि पारस, कलपतरु कामधेनु;
औरहु अनेकनिधि, वारि वारि नाखिये ॥
जोई कछु देखिये सो, सकल विनाशवंत;
बुद्धिमें विचार करि, बहु अभिलाषिये ॥
तातें मन बचन करम, करि कर जोरि;
सुंदर चरण शीश, मेलि दीन भाषिये ॥
बहुतप्रकार तीनोंलोक, सब शोधे हम;
ऐसी कौन भेंट गुरुदेव, आगे राखिये ॥ २३ ॥
महादेव वामदेव, ऋषभ कपिलदेव;
व्यास शुकदेव जयदेव, नामदेव जू ॥
रामानंद सुखानंद, कहिये अनंतानंद;
सुरसुरानंदहुक, आनँद अछेव जू ॥
रैदास कबीरदास, सोझादास पीपादास;
दासहूके दासभाव, भावहूकी टेव जू ॥
सुंदर सकलसंत, प्रगट जगत माहिं;
तैसे गुरु दादूदास, लागे हरिसेव जू ॥ २४ ॥
गुरुदेव सर्वोपरि, अधिक विराजमान;
गुरुदेव सबहितें, अधिक गरिष्ठ[1] हैं ॥
गुरुदेव दत्तात्रय, नारद शुकादि मुनि;
गुरुदेव ज्ञानघन, प्रगट वसिष्ठ हैं ॥
गुरुदेव परम, आनंदमय देखियत;
गुरुदेव वर, वरियानहू वरिष्ठ[2] हैं ॥
सुंदर कहत कछु, महिमा कही न जाय;
ऐसे गुरुदेव दादू, मेरे शिर इष्ट[3] हैं ॥ २५ ॥
योगी जैन जंगम, संन्यासी बनवासी बौद्ध;

१ मर्य्यादापन्न । २ श्रेष्ठतम । ३ प्रिय ।

और कोउ वेष पक्ष, सब भ्रम भान्यो है ॥
तापस रु ऋषीश्वर, मुनीश्वर कवीश्वर;
सबनिको मत देखि, तत्त्व पहिचान्यो है ॥
वेदसार तत्त्वसार, स्मृति औ पुराण सार;
ग्रंथनको सार सोई, हृदयमाहिं आन्यो है ॥
सुंदर कहत कछु, महिमा कही न जाय;
ऐसो गुरुदेव दादू, मेरे मन मान्यो है ॥ २६ ॥
जीते हैं जु काम क्रोध, लोभ मोह दूरि किये;
और सब गुणिनिको, मर्द[1] जिन भान्यो है ॥
उपजै न ताप कोई, शीतलस्वभाव जाको;
सबहीमें समता[2] संतोष[3] उर आन्यो है ॥
काहूसों न रांग[4] द्वेष[5], देत सबहीको तोष;
जीवतही पायो मोर्ष[6], एकब्रह्म जान्यो है ॥
सुंदर कहत कछु, महिमा कही न जाय;
ऐसो गुरुदेव दादू, मेरे मन मान्यो है ॥ २७ ॥

इति श्रीगुरुदेवको अंग संपूर्ण ॥ १

अथ श्रीउपदेशचिंतामणिको अंग २.

हंसाल छंद ।

तो सहि चतुर सुजान परबीण अति, परै जनि पिंजरे मोह कूवा ॥
पाय उत्तमजनम लाय ले चपलमँन[7], गाय गोविंद गुण जीत जूवा ॥
आपही आप अज्ञान नलिनी[8] बंधो, बिना प्रभु विमुखे[9] कै बेर मूवा ॥
दास सुंदर कहै परमपद तौ लहै, राम हरि राम हरिबोल सूवा ॥ १ ॥
नफ्स[10] शयतानेंकुं[11] कैदकर आपने, क्या दुनीमें[12] फिरै खाय गोता ॥

१ घमंड । २ बराबरी । ३ सब्र । ४ प्रीति । ५ वैर । ६ मोक्ष । ७ चंचल । ८ कमलिनी । ९ पराङ्मुख । १० दिल । ११ बुरे राहोंमें लेजाने वाला । १२ संसार ।

है गुनेगार भी गुनाही करत है, खायगा मार तब फिरै रोता ॥
जिन तुझे खाकसें अजैब पैदा किया. तूं उसे क्यूं फरामोश होता ॥
दास सुंदर कहै शरम तबही रहै, हक्क तू हक्क तूं बोल तोता ॥ २ ॥
आबकी बुंदहि वजूद पैदा किया, नैन मुख नासिका कर सँजूती ॥
खेल ऐसा करै, ओहि लीये फिरै, जागके देख क्या करै सूती ॥
भूलि उस खँसमको काम तैं क्या किया, वेगही याद कर मर निपूती॥
दास सुंदर कहै सर्व सुख तौ लहै, भी तुहीं भी तुहीं बोल तूती ॥ ३ ॥
अवल्ल उस्तादके कदमकी खाक हो, हिर्स बेगुजार सब छोड फैना ॥
यार दिलदार दिलमाहिं तू यादकर । है तुझी पास तू देख नैना ॥
जानका जान है जिंदका जिंद है । सुखनिका सुखन कछु समज सैनाँ॥
दास सुंदर कहै सकलघटमें रहै । एक तू एक तू बोल मैना ॥ ४ ॥

मनहर छन्द।

कानके गयेते कहाँ, कान ऐसे होत मूढ;
नैनके गयेये कहाँ, नैन ऐसे पाइये ॥
नासिका गयेते कहाँ, नासिका सुगंध लेत;
मुखके गयेते कहाँ, मुख ऐसे गाइये ॥
हाथके गयेते कहाँ, हाथ ऐसे काम होत;
पाँवके गयेते ऐसे, पाँव कित धाइये ॥
याहिते विचारि देख, सुंदर कहत तोहिं;
देहके गयेते ऐसी, देह कित पाइये ॥ ९ ॥
बेर बेर कह्यो तोहिं, सावधान क्यूं न होइ;

---

१ मिट्टी । २ विचित्र ३ भूलना । ४ पानी । ५ देह । ६ नाक । ७ स्वामी ।
८ पहले । ९ पांव १० डाह । ११ छोडदे । १२ व्यसन । १३ आत्मीयमित्र ।
१४ बोलनेवाला । १५ चतुर ।

ममताकी मौटै शिर, काहेको धरतु है ॥
मेरो धन मेरो धाम, मेरे सुत मेरी वाम;
मेरे पशु मेरे ग्राम, भूल्योही फिरतु है ॥
तू तो भयो बावरो, बिकाई गइ बुद्धि तेरी;
ऐसो अंध कूप गेह, तामें तू परतु है ॥
सुंदर कहत तोहिं, नेकहू न आवै लाज;
काजको बिगारके, अकाज क्यों करतु है ॥ ६ ॥
तेरो ता कुपेच परयो, गांठि अति घूरि गई;
ब्रह्मा आइ छोरै क्यूंही, छूटत न जबहू ॥
तेल सूं भिजोई करि, चीथरां लपेटि राखै;
कूकरको पूंछ सूधो, होत नाहिं तबहू ॥
सासू देत सीख बहु, कीरीकूं, गिनत जाइ;
कहत कहत दिन, बीत गयो सबहू ॥
सुंदर अज्ञानी ऐसे, छोडै नाहिं अभिमान;
निसकत प्राण लग, चेते नाहिं कबहूं ॥ ७ ॥
बालुमांहिं तेल नाहिं, निकसत काहू विधि;
पत्थर न भीजै बहु, बरषत घन है ॥
पानीके मथत कहूँ, घीउ नाहिं पाइयत;
कूकसके कूटे कहूँ, निकसत कन है ॥
शून्यहीकी मूठी भरि, हाथ न परत कछु;
ऊषरमें बोये कहा, निपजैत अन है ॥
उपदेशैं औषध सो, कौनविधि लागै ताहि;

---

१ सत्त्व। २ कजा। ३ लुगाई। ४ गांव । ५ बावला। ६ मति ७ तनक। ८ शरम। ९ ऐंठना। १० चिरकुट । ११ बादल । १२ महेना। १३ भूसी। १४ मरुभूमि। १५ पैदा। १६ शिक्षा।

सुंदर असाधरोग, भयो जाके मन है ॥ ८ ॥
वैरी घरमाहिं तेरे, जानत सनेही मेरे;
दारा[२] सुत[३] वित्त[४] तेरे, खोसि खोसि खायँगे ॥
औरहू कुटुम्ब लोक, लूटैं चहुँ ओरहीते;
मीठी मीठी बात कहि, तोसूं लपटायँगे ॥
संकट परैगो जब, कोई नहिं तेरो तब,
अंतहीं कठिन वाकी, बेर उठि जायँगे ॥
सुंदर कहत तातें, झूठोही प्रपंच[५] सब;
स्वपनकी नाई यह, देखित बिलायँगे ॥ ९ ॥
बालूके मंदिरमांहि, बैठि रह्यो स्थिर होइ;
राखत है जीवनकी, आशा केऊ दिनकी ॥
पल पल छीजत[६] घटत, जात घरी घरी;
विनशतें[७] बेर कहा, खबर न छिनकी ॥
करत उपाय झूंठे, लेन देन खान पान;
मूसा इत उत फिरै, ताकी रही मिनकी ॥
सुंदर कहत मेरी, मेरी करि भूल्यो शठ;
चंचल चपल माया, भई किन किनकी ॥ १० ॥
श्रवण ले जाइकरि, नादकी[८] ले डारै फाँसी;
नैनहू ले जाइकरि, रूप वश करयो है ॥
नासिका ले जाइकरि, बहुत सुंघावै गंध;
रसनां[९] ले जाइकरि, स्वाद मन हरयो है ॥
त्वचाहू ले जाइकरि, नारिसूं परश करै;
सुंदर को इक साधु, ठगनिते डरयोहै ॥
काम ठग क्रोध ठग, लोभ ठग मोह ठग;

---

१ दुःसाध्यरोग। २ लुगाई। ३ लड़का। ४ सम्पत्ति। ५ बखेड़ा। ६ नुकसान। ७ नाश। ८ शब्द। ९ जीभ।

ठगनिकी नगरीमें जीव, आइ पर्यो है ॥ ११ ॥

पायो है मनुष्यदेह, औसर बन्यो है एह;
ऐसो देह बेरबेर, कहो कहाँ पाइये ॥
भूलत है बावरे तू, अबके सयानो होइ;
रतन अमोल सो, तौ काहेकूं ठगाइये ॥
समुझि विचार करि, ठगनिको संग त्यागि;
ठगबाजी देखि कहुँ, मन न डुलाइये ॥
सुंदर कहत ताते, सावधान क्यूं न होइ;
हरिको भजन करि, हरिमें समाइये ॥ १२ ॥

घरि घरि घटत छिजत, जात छिन छिन;
भिजतही गली जात, माटीकेसो ढेल है ॥
मुकुतिके द्वार आंइ, सावधान क्यूं न होइ;
बेर बेर चढत न, तियाको सो तेल है ॥
करि ले सुकृत[1] हरि, भजि ले अखंड[2] नर;
याहीमें अंतर परे, यामें ब्रह्ममेल है ॥
मानुषजनम यह, जीत भावै हार अब;
सुंदर कहत यामें, जुवाकेसो खेल है ॥ १३ ॥

यौवनको[3] गयो राज, और सब भयो साज;
आपनी दुहाई फेरि, दमामो[4] बजायो है ॥
लकुटी[5] हथ्यार लिये, नैन कर डाल दिये;
श्वेत बार भये ताके, तंबूसो तनायो है ॥
दशन[6] गये सु मानो, दरवान[7] दूरि किये;
जो घरी परी सो खान, बिछानो बिछायो है ॥
शीश कर कंपत सु, सुंदर निकार्यो रिपु[8];

१ पुण्य । २ अविनाशी । ३ जवानी । ४ नगारा । ५ लाठी । ६ दांत ।
७ ड्योढीदार । ८ वैरी ।

देखताहि देखत बुढापो, दौरि आयो है ॥ १४ ॥
देहको न देह कछु, देहको ममत्व छांड;
देह तौ दम.मों दिये, देह देह जात है ॥
घट तौ घटत घरि, घरि घट नाश होत;
घटके गयेते घटकी, न फिर बात है ॥
पिंड पिंडमाहिं, पिंड पिंडकूं उपावत है;
पिंड पिंड खात पुने, पिंडहीको पात है ॥
सुंदर न होय जासूं, सुंदर कहत जग;
सुंदर चैतन्यरूप, सुंदर विख्यात है ॥ १५ ॥

इंदव छंद।

ग्रीव त्वचा कटि है लटकी कच, हूं पलटे अजहूं रत वामी ॥
दंत गये मुखके उखरे नखेरे, न गये सु खरो खर कामी ॥
कंपत देह सनेहं सु दंपति, संपति जंपत है निशि जामी ॥
सुंदर अंतहु भीन तज्यो, न:भज्यो भगवंत सु लौणहरामी ॥ १६ ॥
देह घटी पगे भूमि मँडे नहीं, औ लठिया पुनि हाथ लई जू ॥
आँखिहु नाक परे मुखतें जल, शीश हलै कटिं ढीच नई जू ॥
ईश्वरकूं कबहूं न संभारत, दुःख परै तब हाइ दई जू ॥
सुंदर तौहुं विषयसुख वंछत, घोरे गये पै बँगै न गई जू ॥ १७ ॥

सवैया छंद।

पाइ अमूलक देह यहै नर, क्यूं न विचार करै दिल अंदर ॥
कामहु क्रोधहु लोभहु मोहहु, लूटत है दशहू दिशि द्वंदर ॥
तू अब वंछत है सुरलोकहि, कालहु पाइ परैं सु पुरंदर ॥
छांडि कुबुद्धि सुबुद्धि हृदय धरि, आतमराम भजे क्युं न सुंदर॥१८॥

---

१ नह। २ सच्चा गधा। ३ प्रेम। ४ पावँ। ५ कमर। ६ बाग घोडे की।
७ अमूल्य। ८ लडाक। ९ कामना करना। १० कुमति। ११ सुमति।

इंदव छन्द ।

इंद्रिनके सुख मानत है शठ, याहिहिते बहुते दुख पावै ॥
ज्यूं जलमें झख मांसही लालच, स्वाद बँध्यो जल बाहरि आवै ॥
ज्यूं कपि मूंठि न छांडत है, रसना वश बंध पर्‌यो बिललावै ॥
सुंदर क्यूं पहिले न संभारत, जो गुड खाय सु कान बिधावै॥१९॥
कौन कुबुद्धि भई घट अंदर, तू अपने प्रभुसूं मन चोरै ॥
भूलि गयो विषयासुखमें शठ, लालच लागि रयो अतिथोरै ॥
ज्यूं कोउ कंचन क्षारें मिलावत, ले करि पत्थरसूं नग फोरै ॥
सुंदर या नरदेह अमूलक, तीर लगी नवका कित बोरै ॥ २० ॥
देखनके नर शोभत हैं जस, आहि अनूपम केलि कुखंभा ॥
भीतर तौ कछु सार नहीं पुनि, ऊपर छीलक अंबर दंभा ॥
बोलत है परि नाँहिं कछू सुधि, ज्यूंहि बहारते वाजत कुंभा ॥
रूसि रहै कँपि ज्यूं छिनमांहिं सु, या हित सुंदर होत अचंभा ॥ २१ ॥
देखनके नर दीसत हैं परि, लक्षण तौ पशुके सबही हैं ॥
बोलत चालत पीवत खात सु, वे घर वे वन जात सही हैं ॥
प्रात गये रजँनी फिरि आवत, सुंदर यूं नित भार वही हैं ॥
और तु लक्षण आइ मिले सब, एक कमी शिर शृंग नहीं हैं ॥ २२ ॥
प्रेत भयो कि पिशाच भयो कि, निशाचरसो जितही तित डोलै ॥
तू अपनी सुँधि भूलि गयो, मुखते कछु औरकि औरहि बोलै ॥
सोइ उपाय करै जु मरै पँचि, बंधन तौ कबहूं नहिं खोलै ॥
सुंदर जा तनुमें हरि पावत, सो तनु नाश कियो मति भोलै ॥ २३ ॥
पेटते बाहिर होतहि बालक, आई जु मातु पयोधर पीनो ॥

---

१ दुष्ट । २ मछली । ३ रोवैं । ४ सोना । ५ राख । ६ नाव । ७ है । ८ अनूठा । ९ क्रीडा । १० मूल । ११ कपडा । १२ घडा । १३ बंदर । १४ रात । १५ राक्षस । १६ खबर । १७ यत्नकर करके । १८ कुच ।

मोह बँध्यो दिनहीं दिन और, तरूणे भयो तियके रस भीनो ॥
पुत्र प्रपुत्र बँध्यो परिवार सु, ऐसिहि भाँति गये पन तीनो ॥
सुंदर रामको नाम विसारि सु, आपहि आपकुं बधन कीनो ॥ २४ ॥
मातु पिता सुत भाइ बँध्यो, युवतीके कहे कह काम करै है ॥
चोरि करै बटपारि करै, किरषी, बनजी करि पेट भरै है ॥
शीतें सहै शिर घाम सहै कहि, सुंदर सो रणमाँहिं मरै है ॥
बाँधि रह्यो ममता सबसूं नर, या हित बद्धहि बद्ध फिरै है ॥ २५ ॥
तू टगिके धन औरकु ल्यावत, तेरउ तौ घर औरहि फोरै ॥
आग लगै सबही जरि जाइ सु, तू दमरी दमरी करि जोरै ॥
हाकिमको डर नाहिं न सूझत, सुंदर बेर निचोरै ॥
तु खरचै नहिं आप न खाई सु, तेरिहि चातुरि तोहिकुं बोरै ॥ २६ ॥

मनहर छन्द ।

करत प्रपंच इन, पंचार्निके वश पर्यो;
परदारा रतभै न, आनत बुराईको ॥
परधन हरै परजीवकी, करत घात;
मद्य मांस खाय, लवलेश न भलाईको ॥
होयगो हिसाब जब, मुखते न आवै ज्वाब;
सुंदर कहत लेखो, लेत राई राईका ॥
इहा तौ कियो विलास, यमको न तोहिं त्रास;
उहाँ तौ नहीं है कछु, राज पोपाबाईको ॥ २७ ॥
दुनियाकुं दौरता है, औरतकुं लौरता है;
वजदकू मौरता है, बटौ ईस राईका ॥
मुरगीकुं मोसता है, बकरीकुं रोसता है;

---

१ जवान । २ बाल युवा, वृद्ध तीनो अवस्था । ३ मार्गमें लूटना । ४ खेती । ५ जाडा । ६ युद्धम । ७ परस्त्री । ८ डर । ९ दंगा ।

गरीबकूं खोंसता है, बेमेहेर गाईका ॥
जुलमकूं करता है, धनीसूं न डरता है;
दोजखकूं[1] भरता है, खजाना बलाईका ॥
होयगा हिसाब जब, आवैगा न ज्वाब तब;
सुंदर कहत गुन्हेगार, है खुदाईंका[2] ॥ २८ ॥

कर कर आयो जब, खर खर काट्यो नार,
भर भर बाज्यो ढोल, घर घर जान्यो है
दर दर[3] दौस्यो जाय, नर नर आगे दीन;
बर बर बकत न, नेक अलसान्यो है ॥
सर सर सोधै धन, तर तर तोरै पात;
जर जर काटत, अधिक मोद[4] मान्यो है ॥
फर फर फूल्यो फिरै, डर डरपै न मूढ;[5]
हर हर हँसत न, सुंदर सकान्यो है ॥ २९ ॥

जनम सिरान्यो जाइ, भजन विमुख शठें;
काहेकूं भवन[6] कूप[7], विन मीच मरै है ॥
गहत अविद्या जानि, शुकनलिनी ज्यूं मूढ;
कर्म औ विकर्म करै, करत न डरै है ॥
आपहीते जात अंध, नरकमें बेर बेर;
अजहूं न शंक, मनमांहिं अब करै है ॥
दुःखको समूह, अवलोकिके[8] न त्रासहोइ;[9]
सुंदर कहत नर, नागपाश परै है ॥ ३० ॥

जग मग पग तजि, सजि भजि राम नाम
काम क्रोध तन मन, घेरि घेरि मारिये ॥
झूट मूट हठ त्याग, जाग भाग सुनि पुनि;

---

१ नरक। २ परमेश्वरका। ३ जगह जगह। ४ प्रसन्नता। ५ मूर्ख। ६ घर। ७ कुंवा। ८ देखकर ९ डर।

गुण ज्ञान आनि आन, वारि वारि डारिये ॥
गहि ताहि जाहि शेष, ईश शशि सुरें नर;
और बात हेतु तात, फेरि फेरि जारिये ॥
सुंदर दरद खोइ, धोइ धोइ बेर बेर;
सार संग अंग रंग, हेरि हेरि धारिये ॥ ३१ ॥

दुर्मिला छन्द ।

हठ योग धरों तन जात भिया, हरि नाम विना मुख धूरि परै ॥
शठ शोग हरो छिन गात किया, चरि चाम दिना भुख पूरि जरै ॥
भठ भोग परो घन वात धिया, अरि काम किंना सुख जूरिं मरै ॥
मठ रोग करो धन धात हिया, परि राम तिना दुख दूरि करै ॥३२॥
शुर ज्ञान गहै अति सोइ सुखी, मन मोह तजे सब काज सरै ॥
धुर ध्यान रहै पति खोइ मुखी, रण लोह बजे तब लाज परै ॥
सुर तानन है हति दोइ दुखी, तनुँ छोह सजे अब आज मरै ॥
पुर थान लहै मति धोइ रुखी, जन वोह रजै जब राज करै ॥ ३३ ॥

इति उपदेशचिंतामणिको अंग संपूर्ण ॥ २ ॥

अथ कालचिंतामणिको अंग ३.

इंदव छन्द ।

मंदिर म्हेल विलायत हैं गज, ऊंट दमाम दिना इक दो हैं ॥
तातहु मात तिया सुत बांधव, देख धुं पामर होत विछो हैं ॥
झूठ प्रपंचसुँ राचि रह्यो शठ, काठकि पूतरि ज्यूं कपि मोहै ॥
मेरिहि मेरि कहै नित सुंदर, आँखि लगे कहि कौनकु को है ॥ १ ॥
ये मम देश विलायत है गज, ये मम मंदिर ये मम थाती ॥
ये मम मातु पिता पुनि बंधव, ये मम पूत सु ये मम नाती ॥
ये मम कामिनि केलिं करै नित, ये मम सेवक हैं दिन राती ॥

---

१ न्योछावर । २ पकर । ३ चन्द्र । ४ देवता । ५ बनताहै । ६ संग्राम । ७ शरीर । ८ धराहर । ९ विलांस ।

सुंदर ऐसेहि छाँडि गयो सब, तेल जरयोसु बुझी जब बाती ॥ २ ॥
ते दिन चारि विराम¹ लियो शठ, तोर कहे कछु है² गई तेरी ॥
जैसहि बाप ददा गये छाँडि सु, तैसहि तू तजि³ पल फेरी ॥
मारहि काल चपेट अचानक, होइ घरीकमें राखकि ढेरी ॥
सुंदर ले न चले कछु ये सँग, भूलि कहे नर मेरेहि मेरी ॥ ३ ॥
कै यह देह जरायके छार, कियाकि कियाकि कियाकि कियाहै ॥
कै यह देह जमीमहिं गाडि, दियाकि दियाकि दियाकि दियाहै ॥
कै यह देह रहै दिन चार, जियाकि जियाकि जियाकि जियाहै ॥
सुंदर काल अचानक आइ, लियाकि लियाकि लियाकि लियाहै ॥ ४ ॥
देह सनेह न छाँडत है नर, जानत है थिर है यह देहा ॥
छीजत जात घटै दिनही दिन, दीसत है घटको नित छेहा ॥
काल अचानक आइ गहै कर, ढाह गिराइ करै तनु खेहा³ ॥
सुंदर जानि यहै निहचै धरि, एक निरंजनसूं कर नेहा ॥ ५ ॥
तू कछु और विचारत है नर, तोर विचार धरयोहि रहैगो ॥
कोटि उपाय करै धनके हित, भाग्य लिख्यो तितनोहि लहैगो ॥
भोरकि साँझ घरी पलमाँझ सु, काल अचानक आइ गहैगो ॥
राम भज्यो न कियो कछु सुकृत⁴, सुंदर यूं पछताइ रहैगो ॥ ६ ॥
भूलि गयो हरि नामकुँ तू शठ, देख धौं कौन सँयोग बन्यो है ॥
काल अचानक आइ गहे कँठ, पेख धुँ झूंठहि तान तन्यो है ॥
क्षार करै सब धोमकुँ लूटि, अनादिकुं ऐसहि जीव हन्यो है ॥
कोउ न होत सहाय कुटुंब, तनादिक सुंदर यूहिं सुन्यो है ॥ ७ ॥
बीत गये पिछले सबही दिन, आवत हैं अगले दिन नेरे ॥
काल महाबलवंत बडो रिपु, साधि रह्यो शिर ऊपर तेरे ॥
एक घरीमहँ मारि गिरावत, लागत ः ताहि कछू नहिं बेरे ॥
सुंदर संत पुकारि कहे सत, हूं पुनि तोहि कहूं अब टेरे ॥ ८ ॥

---

१ विश्राम । २ दैवयोग । ३ धूरि । ४ अच्छाकाम । ५ घर ।

सोई रह्यो कहाँ गाफिल ह्वै करि, तो शिर ऊपर काल दुहारै ॥
धामस धूमस लागि रह्यो शठ, आई अचानकै तोहिं पछारै ॥
ज्यूं वनमें मृगकूदत फाँदत, चित्र गलै नखसूं उर फारै ॥
सुंदर काल डरै जिनके डर, ता प्रभुकूं कहु क्यूं न सँभारै ॥ ९ ॥

चेतत क्यूं न अचेतन औंघत, काल सदा शिर ऊपर गाजै ॥
रोंकि रहै गढ़के सब द्वारनि, तूं तब कौन, गली हुई भाजै ॥
आइ अचानक केश गहै जब, पाकरिकै पुनि तोहि जु लाजै ॥
सुंदर कौन सहाय करै जब, मुंडहि मुंड बराबर बाजै ॥ १० ॥

तू अति गाफिल होइ रह्यो शठ, कुंजर[३] ज्यूं कछु शंक न आनै ॥
माय नहीं तनुमें अपनो बल, मत्त भयो विषयासुख ठानै ॥
खोसत खात सबै दिन बीतत, नीति अनीति कछू नहिं जांनै ॥
सुंदर केहरि काल महारिपु, दंत उखारि कुँभस्थलै[४] भानै ॥ ११ ॥

मातु पिता युवती सुत बाँधव, आइ मिल्यो इनसे सनबंधा ॥
स्वारथके अपने अपने सब, सो यह नाहिन जानत अंधा ॥
कर्म विकर्म करै तिनके हित, भार धरै नित आपुन कंधा ॥
अंत बिछोहैं[५] भयो सबसूँ पुनि, याहित सुंदर है जग अंधा ॥ १२ ॥

संत सदा उपदेश बतावत, केश[६] सबै शिर श्वेत[७] भये हैं ॥
तु ममता अजहूं नहिं छाँडत, मौतहु आइ सँदेश दये हैं ॥
आजु कि काल चलै उठि मूरख, तेरेहि देखत केत गये हैं ॥
सुंदर क्यूं नहिं राम सम्हारत, या जगमें कहु कौन रहे हैं ॥ १३ ॥

मनहर छंद ।

करत करत धंध, कछुहि न जानै अंध;
आवत निकट दिन, आगलै चपाक दैं ॥

---

१ बेहोश। २ अकस्मात्-एकाएकी। ३ हाथी। ४ मस्तक। ५ बिछुरना। ६ बाल। ७ सफेद।

जैसे बाज तीरकूं, दाबत है अचानक;
जैसे बक मछरीकूं, लीलत लपाक दें ॥
जैसे मक्षिकाकि घात, मकरी करत आय;
जैसे साँप मूषककूं, ग्रसत गपाक दें ॥
चेत रे अचेत नर, सुंदर सम्हार राम;
ऐसे तोहिं काल आय, लेइगो टपाक दें ॥ १४ ॥
मेरो देह मेरो गेह, मेरो परिवार सब;
मेरो धन माल मैं तो, बहुविधि भारो हूं ॥
मेरे सब सेवक हुकुम, कोऊ मेटै नाहिं;
मेरी युवतिको मैं तौ, अधिक पियारो हूँ ॥
मेरो वंश ऊंचो मेरे, बाप दादा ऐसे भये;
करत बडाई मैं तो, जगत उजारो हूं ॥
सुंदर कहत मेरो मेरो, करि जौन शठ;
ऐसे नहिं जानै मैं तौ, कालहीको चाँरो हूँ ॥ १५ ॥
जबते जनम धरचो, तबहींतें भूलि परचो;
बालपनमाहिं भूल्यो, समझ्यो न रुखमें ॥
यौवन भयो है जब, कामवश भयो तब;
युवतीसूं एकमेक, भूलि रह्यो सुखमें ॥
पुत्रहु प्रपुत्र भये, भूल्यो तव मोह बाँधि;
चिंता करि करि भूल्यो, जानै नहिं दुःखमें ॥
सुंदर कहत शठ, तीनूंपनमाहिं भूल्यो;
अंत पुनि जाइ परचो, कालहीके मुखमें ॥ १६ ॥
उठत बैठत काल, सोवत जागत काल;
चलत फिरत काल, काल उर धँस्यो है ॥
कहत सुनत काल, खातहूँ पिवत काल;

१ माछी । २ चूहा । ३ घर । ४ स्त्री । ५ खानेकी चीज । ६ अवस्था ।

H 891.4316/ Su 743 R
National Library Calcutta-27
24900 9.3.69 Rs. 8.00

कालहिके गालमाहिं, हर हर हँस्यो है ॥
तात मात बंधु काल, सुत दारा गृह काल;
सकल कुटुंब काल, काल जाल फँस्यो है ॥
सुंदर कहत एक, रामबिन सब काल;
कालहीको कृत्य कियो, अंतकाल ग्रस्यो है ॥ १७ ॥
जबते जनम लेत, तबहीते आयु घटै;
माई सों कहत मेरो, बरो होत जात है ॥
आज और काल और, दिन दिन होत और;
दौर्‌यो दौर्‌यो फिरत, खेलत अरु खात है ॥
बालपन बीत्यौ जब, यौवन लग्यो है आइ;
यौवनहु बीते बुढो, ढोकरो दिखात है ॥
सुंदर कहत ऐसे, देखतही बूझि गयो;
तेल घटि गये जैसे, दीपक बुझात है ॥ १८ ॥
सब कोउ ऐसे कहैं, काल हम काटत हैं;
काल तौ अखंडनाश, सबको करतु है ॥
जाके भय ब्रह्मा पुनि, होत है कँपायमान;
जाके भय सुरासुर, इंद्रहू डरतु है ॥
जाके भय शिव अरु, शेषनाग तीनोंलोक;
केइक कल्प बीते, लोमश परतु है ॥
सुंदर कहत नर, गरब गुमान करै;
तू तौ शठ एकही, पलकमें मरतु है ॥ १९ ॥
कालसम बलवंत, कोऊ नाहिं देखियत;
सबको करत अंत, काल महाजोर है ॥
कालहीको डर सुनि, भग्यो मूसापैगंबर;
जहाँ जहाँ जाइ तहाँ, तहाँ वाको घोर है ॥

---

१ निगलना । २ विना सीमाके सम्पूर्ण । ३ ब्रह्माका एक दिन । ४ अभिमान । ५ कठिनाई ।

कालभयानक भयभीत, सब किये लोक;
स्वर्ग मृत्यु पातालमें, कालहिको शोर है ॥
कालहिको काल एक, सुंदर अखंड ब्रह्म;
वासूं काल डरै जोई, चल्यो वहि ओर है ॥ २० ॥
वरषा भयेते जैसे, बोलत भँमीरी स्वर;
खंड न परत कहु, नेकहू न जानिये ॥
जैसे पुंगी बाजत, अखंडस्वैर होत पुनि;
ताहूमें न अंतर, अनेक राग गानिये ॥
जैसे कोई गुँडीकूं, चढावत गैंगनमाहिं;
ताहुकी सूं धुनि सुनि, वैसेही बखानिये ॥
सुंदर कहत तैस, कालको प्रंचड वेग;
रात दिन चल्यो जाइ, अचरज मानिये ॥ २१ ॥
माया जोरि जोरि नर, राखत यतन करि;
कहत है एकदिन, मेरे काम आइ है ॥
तोहि तो मरत कछु, बेर नहीं लागै शठ;
देखतहि देखत बबूला, सों विलाइ है ॥
धन तो धरयोही रहै, चलत न कौडी गहै;
रीते हाथनसे जैसो, आयो तैसो जाइ है ॥
करिले सुकृत यह, बेरिया न आवै फिरि;
सुन्दर कहत नर, पुनि पछताइ है ॥ २२ ॥
बावैरो सु भयो फिरै, बावरीहि बात करै;
बावरो ज्युं देत वायु, लागत बुरानो है ॥
मायाको उपाय जानै, मायाकी चातुरी ठानै;
मायामें मगन अति, माया लपटानो है ॥
यौवनके मद मादो, गिनत न कोऊ नातो;

१ झींगुर । २ आवाज । ३ पतङ्ग । ४ आकाश । ५ पुण्य । ६ पागल
७ जवानी ।

काम वश कामिनीके, हाथही बिकानो है ॥
अतिहि भयो बेहाले, सूझत न माथे काल;
सुंदर कहत ऐसो, और को दिवानो है ॥ २३ ॥
झूठो धन झूठो धाम, झूठो सुख झूठो काम;
झूठी देह झूठो नाम, धरिके भुलायो है ॥
झूठो तात झूठो मात, झूठे सुत दारा भ्रात;
झूठो हित मानि मानि, झूठो मान लायो है ॥
झूठो लैन झूठो दैन, झूठो मुख बोलै बैन;
झूठे झूठे करै फैन, झूठहीकूं धायो है ॥
झूठहीमें एतो भयो, झूठहीमें पचि गयो;
सुंदर कहत साँच, कबहुं न आयो है ॥ २४ ॥

दीर्घाक्षर-कबित्त ।

झूठे हाथी झूठे घोडा, झूठे आगे झूठा दौरा;
झूठा बाँधा झूठा छोरा, झूठा राजा रानी है ॥
झूठी काया झूठी माया, झूठा झूठे धंधे लाया;
झूठा मूवा झूठे जीया, झूठी याकी वानी है ॥
झूठा सोवै झूठा जागै, झूठा जूझै झूठा भागै;
झूठा पछि झूठा आगे, झूठे झूठी मानी है ॥
झूठा लीया झूठा दीया, झूठा खाया झूठा पीया;
झूठा सौदा झूठा कीया, ऐसा झूठा प्राणी है ॥ २५ ॥

मनहर छंद ।

झूठ यूं बँध्यो है जाल, ताहीते ग्रसत काल;
काल विकराल व्याल, सबहीकूं खात है ॥
नदीको प्रवाह चल्यो, जात है समुद्रमाहिं;

१ व्याकुल । २ पिता । ३ स्त्री । ४ सर्प । ५ धारा ।

तैसे जग कालहीके, मुखमें समात है ॥
देहसु ममत्व ताते, कालको भैं मानत है;
ज्ञान उपजेते वही, कालहू बिलात है ॥
सुंदर कहत परब्रह्म, है सदा अखंड;
आदि मध्य अंत एक, सोइ ठहरात है ॥ २६ ॥

इंदव छंद ।

काल उपावत काल खपावत, काल मिलावत है गहि माटी ॥
काल हलावत काल चलावत, काल खिलावत है सब आटी ॥
काल बुलावत काल भुलावत, काल डुलावत है बनघाटी ॥
सुंदर काल मिटे तबही पुनि, ब्रह्मविचार पढै जब पाटी ॥ २७ ॥

इति कालचिंतामणिको अंग संपूर्ण ॥ ३ ॥

अथ देहआत्मबिछोहको अंग ४.

इंदव छंद।

वे श्रवणा रसना मुख वेसहि, वेसहि नासिक वेसहि अंखी ॥
वे करवे पग वे सब द्वार सुं, वे नख शीशहि रोम असंखी ॥
वेशहि देह परी पुनि दीसत, एक विना सब लागत खंखी ॥
सुंदर कोउ न जानि सकै यह, बोलत हो सु कहाँ गयो पंखी ॥ १ ॥
बोलत चालत पीवत खावत, सिंचत है द्रुमकूं जस माली ॥
लेतहु देतहु देखत रीझत, तोरत तान बजावत ताली ॥
जामहिं कर्मविकर्म किये सब, है यह देह परी अब ठाली ॥
सुंदर सो कितहू नहिं दीसतं, खेलगयो इक खेल सु ख्याली ॥ २ ॥
मातु पिता युवती सुत बांधव, लागत है सबकूं अति प्यारो ॥

---

१ डर। २ उत्पन्न करताहै । ३ आँखी । ४ खाली । ५ पेड । ६ देह। ७ दिखाई देना। ८ स्त्री। ९ भाई बंधु।

लोक कुटुंब खरो हित राखत, होइ नहीं हमते कहुं न्यारो ॥
देह सनेह तहाँलग जानहु, बोलत है मुख शब्द उचारो ॥
सुंदर चेतनशक्ति गई जब, बेगि कहै घरबार निकारो ॥ ३ ॥
रूप भलो तबहीं लग दीसत, जौंलग बोलत चालत आगै ॥
पीवत खात सुनै अरु देखत, सोई रहै उठिकै पुनि जागै ॥
मातु पिता भइया मिलि बैठत, प्यार करी युवती गल लागै ॥
सुंदर चेतनशक्ति गई जब, देखत ताहि सबै डरि भागै ॥ ४ ॥

मनहर छंद ।

कौन भाँति करतार, कियो है शरीर यह;
पावकके माहिं देखौ, पानीको जमावनो ॥
नासिका श्रवण नैन, बदनै रसन बैन;
हाथ पांव अंग नख, शीशको बनावनो ॥
अजब अनूप रूप, चमक दमक ऊप;
सुंदर शोभित अति, अधिक सुहावनो ॥
जाहि छिन चेतन, शकति लीन होइ गई;
ताहि छिन लागत है, सबकूं अभावनो ॥ ५ ॥
मृत्तिकाको पिंड देह, ताहिमें जुगुति भई;
नासिका नयन मुख, श्रवण बनाये हैं ॥
शीश पांव हाथ अरु, अँगुरी बिराजमान;
अँगुरीके आगे पुनि, नखहु लगाये हैं ॥
पेट पीठ छाती कंठ, चिबुक अधर गाल;
दशन रसन बहु, वचन सुनाये हैं ॥
सुंदर कहत जब, चेतनशकाति गई;
वही देह जारि बारि, क्षार करि आये हैं ॥ ६ ॥

---

१ आत्मा । २ ब्रह्मा । ३ आग । ४ शरीर । ५ शक्ति । ६ अप्रिय । मिट्टी । ८ ठोडी । ९ होठ ।

देह तौ प्रगट यह, ज्यूंकी त्यूंही जानियत;
नयन झरोखेमांहिं, झाँकत न देखिये ॥
नाकके झरोखे माहिं, नेक न सुवास लेत;
कानके झरोखेमांहिं, सुनत न लेखिये ॥
मुखके झरोखेमें न, वचन उचार होत;
जीभहूकूं षटरस, स्वाद न विशेखिये ॥
सुंदर कहत कोऊ, कौन विधिजानै ताहिं;
पीरो कारो काहू द्वारा, जातोहू न पेखिये ॥ ७ ॥
मातु तौ पुकार छाति, कूटि कूटि रोवति है;
बापहू कहत मेरो, नंदन कहाँ गयो ॥
भैयाहू कहति मेरी, बाँह आजु दूरि भई;
बहन कहति मेरो, बीर दुख देगयो ॥
कामिनी कहत मेरो, शीश शिरताज कहाँ;
उन्हैं ततकालें रोइ, हाथमें धोरा लयो ॥
सुंदर कहत कोऊ, ताहि नहिं जानि सकै;
बोलत हुतो सो यह, छिनमें कहां गयो ॥ ८ ॥
रज अरु बीरजको, प्रथम सँयोग भयो;
चेतनशकति तब, कौन भाँति आई है ॥
कोऊ तौ कहत बीजें, मध्यही कियो प्रवेश;
किनहुक पंचमास, पीछेके सुनाई है ॥
देहको वियोग जब, देखतहि होइ गयो;
तब कोऊ कहो कहां, जाइके समाई है ॥
पंडितही ऋषीश्वर, तपेश्वर मुनीश्वर;
सुंदर कहत यह, किनहूं न पाई है ॥ ९ ॥
तबलौंहि क्रिया सब, होत है विविधभाँति;

१ देखना । २ पीट पीट । ३ पुत्र । ४ स्त्री । ५ शीघ्र । ६ जो स्त्रीमें रहताहै । ७ वीर्य्य जो पुरुषमें रहताहै । ८ घुसना । ९ जुदाई ।

जबलग घटमाहिं, चेतनप्रकाश है ॥
देहके अशक्त भये, क्रिया सब थकी जाय;
जबलग श्वासचलै, तबलग आश है ॥
श्वासहू थक्यो है जब, रोवन लगे हैं तब;
सब कोऊ कहैं अब, भयो घट नाश है ॥
काहु नहीं देख्यो किहिं, और किन कहाँ गयो;
सुंदर कहत यही, बडोही तमाश है ॥ १० ॥
देह तौ सुरूप तौलौं, जौलौं है अरूप माहिं;
सब कोउ आदर, करत सनमान है ॥
टेढी पाग बाँधि बेर, बेरही मरोरै मूछ;
बाहुहु सँवारै अति, धरत गुमान है ॥
देशदेशहीके लोग, आयके हुजूर होई;
बैठिकरि तखत, कहावै सुलतान है ॥
सुंदर कहत जब, चेतन शकति गई;
वहै देहताकी कोऊ, मानत न आन है ॥ ११ ॥

इति देहआत्माबिछोहको अंग संपूर्ण ॥ ४ ॥

अथ तृष्णाको अंग ५.

इंदव छंद ।

नयंननकी पलही पलमें क्षण, आधिघरी घटिका जु गई है ॥
याम गयो युग याम गयो पुनि, साँझ गई तब रात भई है ॥
आज गई अरु कालि गई परसों तरसों कछु और ठई है ॥
सुंदर ऐसहि आयु गई, तृषणा दिनही दिन होत नई है ॥ १ ॥

दुर्मिला छंद ।

कनही कनकूं बिललात फिरै, शठ याचत है जनही जनकूं ॥

---

१ शिथिल । २ दूसरा । ३ आँख ।

तनही तनकूं अतिशोच करै, नर खात रहै मनही अनकूं ॥
मनही मनकी तृषणा न मिटी, पुनि धावत है धनही धनकूं ॥
छिनही छिन सुंदर आयु घटी, कबहूँ न गयो वनहीं वनकूं ॥ २ ॥

इंदव छंद।

जो दश बीस पचास भये शत, होई हजार तु लाख मँगैगी ॥
कोटि अरब्ब खरब्ब असंख्य, धरापति होनकि चाह जगैगी ॥
स्वर्ग पताल कु राजु करौं तृषणा, अधिकी अति आग लगैगी ॥
सुंदर एक सँतोष विना शठ, तेरि तु भूख कधी न भगैगी ॥ ३ ॥
लाख करोर अरब्ब खरब्बनि, नील रु पद्म तहाँ लग खाटी ॥
जोरिहि जोरि भँडार भरे जब, और रही सु जमीतर दाटी ॥
तौहु न तोहिं सँतोष भयो शठ, सुंदर तैं तृषणा नहिं काटी ॥
सूझत नाहिंन कालहि तो शिर, मारि जु थाप मिलाइत माटी ॥ ४ ॥
भूख लिये दशहूं दिशि दौरत, ताहित तू कबहूं न अघै है ॥
भूखभँडार भरे नहिं कैसहु, जो धन मेरुसुमेरु हुं पैहै ॥
तू अब आगेहि हाथ पसारत, या हित हाथ कछू नहिं ऐहै ॥
सुंदर क्यूं नहिं तोष करै नर, खाइ जु खाइ कितोइक खैहै ॥ ५ ॥
भूख नचावत रंकहि रावहि, भूख नचाइ जु विश्व विगोई ॥
भूख नचावत इंद्र सुरासुर, और अनेक जहाँलग जोई ॥
भूख नचावत है अध ऊर्धहि, तीनहु लोक गिनै कह कोई ॥
सुंदर जाइ तहाँ दुखही दुख, ज्ञान विना न कहूं सुख होई ॥ ६ ॥
पेट पसार दियो जितही तित, तैं यह भूख कितीइक थापी ॥
वोर न छोर कछू नहिं आवत, मैं बहुभाँति भलीविध मापी ॥
देखत देह भये सब जीरन, तू नित नूतन आहि अद्यापी ॥
सुंदर तोहिँ सदा समुझावत, है तृषणा अजहूं नहिं धापी ॥ ७ ॥

---

१ मनुष्य। २ अवस्था। ३ एकसौ। ४ राजा। ५ देवलोक। ६ पृथ्वीमें गडी। ७ दरिद्री। ८ राजा। ९ संसार। १० देवता दैत्य।

तीनहिं लोक अहार कियो सब, सात समुद्र पियो पुनि पानी ॥
और जहाँ तहाँ ताकत डोलत, काढत आँख डरावत प्रानी ॥
दाँत दिखावत जीभ हलावत, याहित मैं यह डाकिनि जानी ॥
सुंदर खात भये कितने दिन, हे तृषणा अजहूं न अघानी ॥ ८ ॥
पाँव पताल परे गय नीकसि, शीश गयो असमान अबेरो ॥
हाथ दशोदिशकूं पसरे पुनि, पेट भरे न समुद्र सुमेरो ॥
तीनहुलोक लिये मुखभीतर, आँखिहु कान बँधे चहुँ फेरो ॥
सुंदर देह धरयो अतिदीरघ, हे तृषणा कछु छेह न तेरो ॥ ९ ॥
वाद वृथा भटके निशिवासर, दूर कियो कबहूँ नहिं धोषा ॥
तू हतियारिन पापिनि कोढ़िन, साच कहूं मत मानहु रोषा ॥
तोहिं मिलै तबते दुइ बंधन, तू मरि है तबहीं हुए मोषा ॥
सुंदर और कहा कहिये तुहिं, हे तृषणा अब तौं कर तोषा ॥ १० ॥
क्यूं जगमाहिं फिरै झख मारत, स्वारथ कौन परी जिहि जोलै ॥
ज्यूं हरियाइ गऊ नहीं मानत, दूध दुह्यो कछु सो पुनि ढोलै ॥
तू अतिचंचल हाथ न आवत, नीकस जाइ नहीं मुख बोलै ॥
सुंदर तोहि कह्यो कितनी बिर, हे तृषणा अब तू मत डोलै ॥ ११ ॥
तैं कहि कान धरी नहिं एकहु, बोलत बोलत पेटहि पाक्यो ॥
हूं कछु वात बनाइ कहूं जब, तैं तब पीसतही सब फाक्यो ॥
केतक द्यौस भये परबोधत, तैं अब आगेहिकूं रथ हाँक्यो ॥
सुंदर सीख गई सबही चलि, हे तृषणा कहिके तुहि थाक्यो ॥ १२ ॥
तूहि भ्रमाय प्रदेश पठावत, बूडत जाय समुद्रहि जाजा ॥
तूहि भ्रमाय पहाड चढ़ावत, वाद वृथा मरि जाइ अकाजा ॥
तैं सबलोक भ्रमाय भलीविध, भाँड किये सब रंकहु राजा ॥
सुंदर तोहिं दुखाइ कहूँ अब, हे तृषणा तुहि नेकु न लाजा ॥ १३ ॥

इति तृष्णाको अंग संपूर्ण ॥ ९ ॥

---

१ नाश । २ रातदिन ।

अथ धैर्य उराहनको अंग ६.

इंदव छन्द।

पाँव दिये चलने फिरने कहँ, हाथ दिये हरि कृत्य करायो ॥
कान दिये सुनिये हरिके यश, नैन दिये तिन मार्ग दिखायो ॥
नाक दियो मुख शोभत ता करि, जीभ दई हरिको गुण गायो ॥
सुंदर साज दिये परमेश्वर, पेट दियो बड पाप लगायो ॥ १ ॥
कूप भरे अरु वापि भरे पुनि, ताल भरे बरषाऋतु तीनो ॥
कोठि भरै घट माट भरै घर, हाट भरै सभही भरि लीनो ॥
खंडक खास बखार भरे परि, पेट भरे न बडोदर दीनो ॥
सुंदर रीतुहि रीतु रहै यह, कौन खडा परमेश्वर कीनो ॥ २ ॥

मनहर छन्द।

किधौं पेट चूल्हो कीधौं, भाठि किधौं भार आहि;
जोइ कछु झोंकिये, सु सब जरि जातु है ॥
किधौं पेट थल किधौं, वापि किधौं सागर है;
जेतो जल परै तेतौ, सकल समातु है ॥
किधौं पेट दैत किधौं, भूत प्रेत राक्षस है;
खाउँ खाउँ करै कछु, नेक न अघातु है ॥
सुंदर कहत प्रभु, कौन पाप लायो पेट;
जबही जनम भयो, तबहीको खातु है ॥ ३ ॥
विग्रह तौ विग्रह, करत अति बेरबेर;
तन पुनि तनक न, कबँहु अघायो है ॥
घट न भरत क्यूंहि, घटयो रहत नित;
शरीर सिराईमें तौ, कबहुँ न खायो है ॥

---

१ काम। २ बडाई। ३ बावली। ४ घडा। ५ बाजार। ६ कोठी। ७ बडापेट। ८ भट्टी। ९ लडाई।

देह देह कहतही, कहत जनम बीत्यो;
पिंड पिंड काज निशि, दिन ललचायो है ॥
मुद्गल गिलत, गिलत न तृपत होइ;
सुंदर कहत वपु, कौन पाप लायो है ॥ ४ ॥
पाजी पेट काज, कोटवालके आधीन होइ;
कोटवाल सो तो, शिकदार आगे दीन है ॥
शिकदार दीवानके, पीछे लग्यो डोलै पुनि;
दीवानहु जाय बादशाह, आगे लीन है ॥
बादशाह कहै या, खोदाय मुझे और देई;
पेटही पसारे वही, पेट वश कीन है ॥
सुंदर कहत प्रभु, क्यूंही नहीं भरै पेट;
एक पेट काज एक, एकके आधीन है ॥ ५ ॥
तैं तो प्रभु पेट दियो, जगत नचायो जिन;
पेटहीके लिये घर, घर द्वार फिरयो है ॥
पेटहीके लिये हाथ, जोरि आगे ठाढो होइ;
जोई जोई कह्यो सोई, सोई उन करयो है ॥
पेटहीके लिये पुनि, मेघ शीत घाम सहै;
पेटहीके लिये जाइ, रणमाँहिं मरयो है ॥
सुंदर कहत इन, पेट सब भाँडे किये;
और गैलै छूटे पर, पेट गैल परयो है ॥ ६ ॥
पेटसों न बली जाके, आगे सब हारि चले;
राव अरु रंक एक, पेट जीति लिये है ॥
कोउ बाघ मारत, विदारत है कुंजरकूं;
ऐसे शूरवीर-पेट, काज प्राण दिये हैं ॥
यंत्र मंत्र साधत, आराधत मशान आइ;

---

१ शरीर । २ लडाईमें । ३ रास्ता । ४ फाडना । ५ हाथी । ६ पूजत ।

पेट आगे डरत, निडर ऐसे हिये हैं ॥
देवता असुर भूत, प्रेत तीनूं लोक पुनि;
सुंदर कहत प्रभु, पेट जेरे किये हैं ॥ ७ ॥
प्रातही उठत जब, पेटहीकी चिंता तब;
सब कोऊ जात आपु, आपुके आहारकूं ॥
कोऊ अन्न खात पुनि, आमिषै भखत कोऊ;
कोऊ घास चरत, चरत कोउ दारुकूं ॥
कोऊ मोती फल कोऊ, वासरस पैय पान;
कोऊ पौन पीवत, भरत पेट भारकूं ॥
सुंदर कहत प्रभु, पेटही भ्रमाय सब;
पेट तुम दियो है जगत होन ख्वारकूं ॥ ८ ॥

इंदव छन्द ।

पेटहि कारण जीव हने बहु, पेटहि मांस भखै रु सुरापी ॥
पेटहि लेकर चोरि करावत, पेटहिकूं गठरी गहि कापी ॥
पेटहि पाशं गरेमहँ डारत, पेटहि डारत कूप रु वापी ॥
सुंदर काहिकूं पेट दियो प्रभु, पेटसों और नहीं कोइ पापी ॥ ९ ॥
औरनकूं प्रभु पेट दियो तुम, तेरतु पेट कहूं नहीं दीसै ॥
ए भटकाइ दिये दशहू दिश, कोउक रांधत कोउक पीसै ॥
पेटहि कारण नाचत हैं सब, ज्यूं घरही घर नाचत कीसैं ॥
सुंदर आप न खावहु, पीवहु, कौन करी इन ऊपर रींसै ॥ १० ॥

मनहर छन्द ।

काहेकूँ काहुके आगे, जाइके आधीन होइ;
दीन दीन वचन उचार, मुख कहते ॥
जिनकूँ तौ मैंद अरु, गैरव गुमान अति;

१ तंग । २ मांस । ३ लकडी । ४ दूध, पानी । ५ खराब । ६ शराबी । ७ फाँसी । ८ बंदर । ९ क्रोध । १० छोटा–बश । ११ नशा । १२ अभिमान ।

तिनके कठोर बैन, कबहूं न सहते ॥
तुम्हरेही भजनमूं, मन लवलीन अति;
सकलकूं त्यागिके, एकांत जाइ गहते ॥
सुंदर कहत यह, तुमही लगायो पाप;
पेट न इतो तौ प्रभु, बैठे हम रहते ॥ ११ ॥
पेटहीके वश रंक, पेटहीके वश राव;
पेटहीके वश और, खान सुलतान है ॥
पेटहीके वश योगी, जंगम संन्यासी शेख;
पेटहीके वश बनवासी, खात पान है ॥
पेटहीके वश ऋषि, मुनि तपधारी सब;
पेटहीके वश सिद्ध, साधक सुजान है ॥
सुंदर कहत नहीं, काहूको गुमान रहै;
पेटहीके वश प्रभु, सकल जहान है ॥ १२ ॥

इति धैर्य उराहनको अंग संपूर्ण ॥ ६ ॥

अथ विश्वासको अंग ७.

इंदव छंद ।

होइ निचिंत करै मत चिंतहि, चोंच दई वइ चित करैगो ॥
पाउँ पसार परचो कि न सोवत, पेट दियो वइ पेट भरैगो ॥
जीव जिते जलके थलके पुनि, पाहनमें पहुंचाय धरैगो ॥
भूखहि भूख पुकारत है नर, सुंदर तू कह भूख मरैगो ॥ १ ॥
धीरज धारि विचार निरंतर, तोहि रच्यो वहि आपही ऐहै ॥
जेतिक भूख लगी घट प्राणहि, तेतिक तू अनयासहि पैहै ॥
जो मनमें तृषणा करि धावत, तौ तिहुं लोक न खात अघैहै ॥
सुंदर तू मत शोच करै कछु, चोंच दई वह चूनहि दैहै ॥ २ ॥

१ सिद्ध–साधना करने वाला।

नेक न धीरज धारत हैं नर, आतुर होइ दशोदिश धावै ॥
ज्यूं पशु खैंचि तुरावत बंधन, जौलगि नीर अहार न आवै ॥
जानत नाहिं महामति मूरख, जा घर द्वार धनी पहुंचावै ॥
सुंदर आप कियो घट भाजन[1], सो भरि है मत शोच उपावै ॥३॥
भाजन आप घडे जितने भरिहैं, भरि हैं भरि हैं भरि हैं जू ॥
गावत हैं जिनके गुणजूं ढरिहैं, ढरिहैं ढरिहैं ढरिहैं जू ॥
आदिहु अंतहु मध्य सदा हरिहैं, हरिहैं हरिहैं हरिहैं जू ॥
सुंदरदास सहाय सही करिहैं, करिहैं करिहैं करिहैं जू ॥४॥
काहिकुँ दौरत है दशहूँ दिशि, तूं नर देख कियो हरिजूको ॥
बैठि रहै दुरिके मुख मूँदि, उघारत दाँत खवाइहि टूको ॥
गर्भ थके प्रतिपाल करी जिन, होई रह्यो तबही जड मूको ॥
सुंदर क्यों बिललात फिरै अब, राख हृदय विसवास प्रभूको ॥५॥
जा दिनते प्रभवास तज्यो नर, आइ अहार लियो तबही को॥
खातहि खात भये इतने दिन, जानत नाहिं न भूख कहीको ॥
दौरत ध्यावत पेट दिखावत, तू शठ कीट सदा अनहीको ॥
सुंदर क्यों विसवास न राखत, सो प्रभु विश्व भरै सबहीको ॥६॥
खेचर[2] भूचर जे जलकेचर[3], देत अहार[4] चराचर पोषै ॥
वे हरि जो सबको प्रतिपालत, ज्यूं जिहि भाँति तिहीविधि तोषै ॥
तू अब क्यूं विसवास न राखत, भूलत है कित धोखहि धोखे ॥
तोहिं तहाँ पहुँचाय रहै प्रभु, सुंदर बैठि रहै किन ओखे ॥७॥

मनहर छंद ।

काहेकूं बघूरा भयो, फिरत अज्ञानी नर;
तेरो वा रिजक तेरे, घर बैठे आइ है ॥
भावै तूं सुमेरु जाइ, भावै जाइ मारुदेश;

---

१ पात्र-वर्तन । २ आकाशके चलने वाले और पृथ्वीके चलने वाले ३ बगला । ४ भोजन-आहार ।

जितनोकभाग्य लिख्यो, तितनोहिं पाइ है ॥
कूपमाँझ भरि भावै, सागरके तीर भर;
जितनोक भाँडो नीर, तितनो समाइ है ॥
ताहितें संतोष करि, सुंदर विश्वास धरि;
जितनो रच्यो है घट, सोइ जु भराइ है ॥ ८ ॥
काहेकूं फिरत नर, हीन भयो घर घर;
देखियत तेरो तौ, आहार इक सेर है ॥
जाको देह सागरमें, सुन्यो शतयोजनको;
ताहूकूं तौ देत प्रभु, यामें नहिं फेर है ॥
भूख्यो कोउ रहत न, जानिये जगतमांहिं;
कीरी अरु कुंजर, सबनहीकूं दे रहै ॥
सुंदर कहत विसवास, क्यूं न राखै शठ;
बेर बेर समुझाय कह्यो, केती बेर है ॥ ९ ॥
तेरे तौ अधीरज तू, आगिलीहि चिंता करै;
आज तौ भरचो है पेट, काल कैसी होइ है ॥
भूख्योही पुकारे अरु, दिन उठि खातो जाइ;
अतिही अज्ञानी जाकी, मति गई खोइ है ॥
ताकूं नाहिं जानै शठ, जाको नाम विश्वंभरैं;
तहाँ तहाँ प्रगट सबनि, देत सोई है ॥
सुंदर कहत तोहिं, वाको तौ भरोसो नहिं;
एक विसवास विन, याही भाँति रोइ है ॥ १० ॥
देख धौं सकल विश्व, भरत भरनहार;
चूंचके समान चून, सबहीकूं देत है ॥
कीट पशु पक्षी अजगर, मच्छ कच्छ पुनि;
उनके न सौदा कोउ, न तौ कछु खेत है ॥

---

१ बर्तन । २ चारसौ कोश । ३ संसारका भरण पोषण करने वाला परमेश्वर।

पेटहीके काज रात, दिवस भ्रमत शठ,
मैं तो जान्यो नीके करि, तू तौ कोउ प्रेत है ॥
मानुष शरीर पाय, करत है हाय हाय,
सुंदर कहत नर, तेरे शिर रेत है ॥ ११ ॥
तु तो भयो बावरो, उतावरो फिरत अति,
प्रभुको विश्वास गहि, काहे न रहतु है ॥
तेरो जो रिजक है सो, आइ है सहजमाहिं;
यूंही चिंता करि करि, देहकूं दहतु है ॥
जिन यह नख शिख, सजिके सँवारचो तोहिं;
अपने कियेकी वह, लाजकूं वहतु है ॥
काहेकूं अज्ञानी कछु, शोच मनमाहिं करै;
भूख्यो तू कदै न रहै, सुंदर कहतु है ॥ १२ ॥
जगतमें आइके, बिसारयो है जगतपति;
जगत कियो है सोई, जगत भरतु है ॥
तेरे निशि दिन चिंता, औरहि परी है आइ;
उद्यम अनेक भाँति, भाँतिके करतु है ॥
इत उत जायके, कमाई करि लाऊं कछु;
नेकु न अज्ञानीनर; धीरज धरतु है ॥
सुंदर कहत एक, प्रभुके विश्वास बिन;
वादहीकूं वृथा शठ, पचिके मरतु है ॥ १३ ॥

इति विश्वासको अंग संपूर्ण ॥ ७ ॥

अथ देह मलिनके गर्वप्रहारको अंग ८.

मनहर छंद ।

देह तौ मलिन अति, बहुत विकार भरि;
ताहू माहिं जराव्याधि[1], सब दुखराशी है ॥

१ बुढापा रोगसे ग्रसित ।

कबहूँक पेटपीर, कबहूँक शिरवाय,
कबहूँक आँख कान, मुखमें बिथीसी है ॥
औरहू अनेकरोग, नख शिख पूरि रहे,
कबहूँक श्वास चलै, कबहूँक खाँसी है ॥
ऐसो ये शरीर ताहि, अपनोके मानत है,
सुंदर कहत यामें, कौन सुखवासी है ॥ १ ॥
जा शरीरमाहिं तु, अनेक सुख मानि रह्यो,
ताहि तु विचार यामें, कौन बात भली है ॥
मेद मज्जा मांस रग, रगमें रकत भर्यो,
पेटहू पिटारी सीमें, ठौरठौर मली है ॥
हाडनसूं भर्योमुख, हाडनके नैन नाक,
हाथ पाउँ सोऊ सब, हाडनकी नली है ॥
सुंदर कहत याहि, देखि जनि भूलै कोई,
भीतर भँगार भरी, ऊपर तौ कली है ॥ २ ॥

इंदव छन्द ।

हाडको पिंजर चाम मढ्यो सब, माहिं भर्यो मल मूत्र विकारा ॥
थूक रु लार परै मुखते पुनि, व्याधि बहै सब औरहु द्वारा ॥
मांसकि जीभसुँ खाय सबै कछु, ताहिते ताहिको कौन विचारा ॥
ऐसे शरीरमें पैठिके सुंदर, कैस जु कीजिय शौच अचारा ॥ ३ ॥
थूक रु लार भर्यो मुख दीसत, आँखिमें गीडर नाकमें सेढो ॥
औरहु द्वार मलीन रहै अति, हाड रु मांसके भीतर भेढो ॥
ऐसे शरीरमें वास कियो तब, एकसे दीसत ब्राह्मण ढेढो ॥
सुंदर गर्व कहा इतने पर, काहुहेकूँ तू नर चालत टेढो ॥ ४ ॥
जा दिन गर्भसँयोग भयो तब, ता दिन बूंद छिया द्दुति ताहीं ॥
द्वादशमास अधोमुख झूलत, बूडि रह्यो पुनि वा रस माहीं ॥

१ दर्द । २ क्रूर । ३ नीचेको मुख ऊपरको पाँव ।

ता रजवीरजकी यह देह सु, तू अब चालत देखत छाहीं ॥
सुंदर गर्व गुमान कहा शठ, आपनि आदि विचारत नाहीं ॥ ९ ॥

इति देहमलिनके गर्वप्रहारको अंग संपूर्ण ॥ ८ ॥

अथ नारीनिंदाको अंग ९.

मनहर छंद ।

कामिनीको तनु मानु, कहिये सघनवन;
वहाँ कोउ जाय सो तौ, भूलेही परतु है ॥
कुंजर है गति कटि, केहरीको भय जामें;
वेणी कालीनागिनी ऊ, फणिकूं धरतु है ॥
कुच हैं पहार जहाँ, कामचोर बसैं तहाँ;
साधिके कटाक्षबाण, प्राणकूं हरतु है ॥
सुंदर कहत एक, और डर जामें अति;
राक्षसीवदन खाँउ, खाँउही करतु है ॥ १ ॥
विषहीकी भूमिमाहिं, विषके अंकुर भये;
नारी विषबेली बढी, नखशिख देखिये ॥
विषहीके जर मूल, विषहीके डार पात;
विषहीके फूल फल, लागे जु विशेखिये ॥
विषके तंतू पसार, उरझाई आँटी मार;
सब नर वृक्ष पर, लपटेही लेखिये ॥
सुंदर कहत कोऊ, संततरु बचि गये;
तिनके तौ कहूँ लता, लागी नहिं पेखिये ॥ २ ॥
उदरमें नरक, नरक अधद्वारनमें;
कुचनमें नरक नरक, भरी छाती है ॥
कंठमें नरक गाल, चिंबुन नरक किंब;

---

१ अवश्य करके । २ वेलि । ३ स्तन । ४ ठोडी ।

मुखमें नरक जीभ, लालहु चुचातीहै ॥
नाकमें नरक आँख, कानमें नरक वहै;
हाथ पाँउ नख शिख, नरक दिखाती है ॥
सुंदर कहत नारी, नरकको कुंड यह;
नरकमें जाइ परै, सो नरकपाती है ॥ ३ ॥
कामिनीको अंग अति, मलिन महाअशुद्ध;
रोमरोम मलिन, मलिन सब द्वार है ॥
हाड मांस मज्जा मेद, चामसुं लपेटि राखै;
ठौर ठौर रकतके, भरेई भंडार है ॥
मूत्रहू पुरीष आँत, एकमेक मिलि रही;
औरही उदरमाहिं, विविधविकार है ॥
सुंदर कहत नारी, नख शिख निन्द्यरूप;
ताहि जो सराहै सो तौ, बडाई गँवार है ॥ ४ ॥

कुंडलिया छंद ।

रसिकप्रिय रसमंजरी, और शृंगारहि जान ॥
चतुराई करि बहुतविधि, विषय बनाई आन ॥
विषय बनाई आन, लगत विषयिनकूं प्यारी ॥
जागे मदन प्रचंड, सराहै नख शिख नारी ॥
ज्यूं रोगी मिष्टान्न खाइ, रोगहि विस्तारै ॥
सुंदर ये गति होई, जोइरसिकप्रिया धारै ॥ ५ ॥
रसिकप्रियाके सुनतही, उपजै बहुत विकार ॥
जो यामाहीं चित धरै, वहै होत नर ख्वार ॥
वहै होत नर ख्वार, वार तो कबहुं न लागै ॥
सुनत विषयकी बात, लहर विषही की जागै ॥

---

१ खजाना–कोश । २ मल । ३ कामी । ४ कामदेव ।

ज्यूं को ऊँख्यो हुतो, लेइ पुनि सेज बिछाई ॥
सुंदर ऐसीजान, सुनत रसिकप्रियाभाई ॥ ६ ॥

इति नारीनिंदाको अंग संपूर्ण ॥ ९ ॥

अथ दुष्टजनको अंग १०.

मनहर छन्द ।

अपने न दोष देखे, परके औगुण पेखे[1];
दुष्टको स्वभाव उठि, निंदाही करतु है ॥
जैसे कोई महल, सँवारि राख्यो नीकेकरि;
कीरी[2] तहाँ जाय छिद्र, ढूँढत फिरतु है ॥
भोरहीतें साँझ लग, साँझहीते भोर लग;
सुंदर कहत दिन, ऐसेही भरतु है ॥
पावँके तरेकी नहीं, सूझे आग मूरखकूं;
औरकूं कहत तेरे, शिरपै बरतु है ॥ १ ॥

इंदव छंद ।

घात अनेक रहै उर अंतर, दुष्ट कहै मुखसूं अति मीठी ॥
लोटत पोटत व्याघ्र[3]हि ज्यूं नित, ताकत है पुनि ताहिकि पीठी ॥
ऊपरते छिरकै जल आन सु, हेठें[4] लगावत जारि अँगीठी ॥
यामहिं कूर कछू मति जानहु, सुंदर आपुनि आँखिते दीठी ॥२॥
आपनु काज सँवारनके हित, औरकु काज बिगारत जाई ॥
आपनु कारज होउ न होउ, बुरो करि औरकु डारत भाई ॥
आपहु खोवत औरहु खोवत, खोइ दुनों घर देत बहाई ॥
सुंदर देखतही बनिआवत, दुष्ट करै नहिं कौन बुराई ॥ ३ ॥
ज्यूं नर पोषत है निज देहहि, अन्न विनाश करै तिहि बारा ॥
ज्यूं अहि और मनुष्यहि काटत, वाहि कछू नहिं होत अहारा ॥

---

१ देखे । २ चींटी । ३ बाघ । ४ नीचे । ५ टेढा-झूठा ।

ज्यूं पुनि पावक जारि सबै कछु, आपहि नाश भयो निरधारा ॥
त्यूं यह सुंदर दुष्ट स्वभावहु, जानि तजो किन तीन प्रकारा॥४॥
सर्प डसैं सु नहीं कछु तालुक, बीछू लगै सु भलो करि मानौ ॥
सिंहहु खाय तु नाहिं कछू डर, जो गज मारत तौ नहिं हानौ ॥
आगि जरौ जल बूड़ि मरौ गिरि, जाइ गिरौ कछु भै मत आनौ॥
सुंदर और भले सबही यह, दुर्जन-संग भलो जिन जानो ॥५॥

इति दुष्टजनको अंग संपूर्ण ॥ १० ॥

अथ मनको अंग ११.

मनहर छंद ।

हटकि हटकि मन, राखत जु छिन छिन;
सटकि सटकि चहुँ, ओर अब जातु है ॥
लटकि लटकि, ललचाय लोलै बार बार;
गटकि गटकि करि, विष फल खातु है ॥
झटकि झटकि तार, तारत करम हीन;
भटकि भटकि कहूँ, नेक न अघातु है ॥
पटकि पटकि शिर, सुंदर जु मानि हारि;
फिटकि फिटकि जाइ, सूधो कौन बातु है ॥ १ ॥
पलहीमें मरिजाय, पलहीमें जीवतु है;
पलहीमें परहाथ, देखत बिकानो है ॥
पलहीमें फिरै, नवखंडहू ब्रह्मांड सब;
देख्यो अनदेख्यो सो तौ, याते नहिं छानो है ॥
जातो नाहिं जानियत, आवतो न दीसै कछु;
ऐसेसी बलाई अब, तासूं पर्‍यो पानो है ॥
सुंदर कहत याकी, गतिहू न लखि परै;

---

१ चोंच । २ जहाँतक ब्रह्माकी सृष्टिहै ।

मनकी प्रतीत[1] कोउ, करै सो दिवानो[2] है ॥ २ ॥
घेरिये तौ घेरयोहू, न आवत है मेरो पूत;
जोई परबोधिये सो, कान न धरतु है ॥
नीति न अनीति देखै, शुभ न अशुभ पेखै;
पलहीमें होती अनहोती, हू करतु है ॥
गुरुकी न साधुकी न, लोकवेदहूकी शंक;
काहूकी न मानै न तौ, काहुते डरतु है ॥
सुंदर कहत ताहि, धीजियेसु[3] कौन भाँति;
मनको स्वभाव कछु, कह्यो न परतु है ॥ ३ ॥
काम[4] जब जागै तब, गिनत न कोऊ शंक[5];
जानै सब जोई करि, देखत न मा धीं[6] है ॥
क्रोध जब जागै तब, नेकु न सँभारि सकै;
ऐसी विधि मूलकी, अविद्या[7] जिन साधी है ॥
लोभ जब जागै तब, तृपति न क्यूंही होइ;
सुंदर कहत इन, ऐसेहीमें खाधी है ॥
मोह मतवारो निशि, दिनही फिरत रहै;
मनसों न कहूं हम, देख्यो अपराधी है ॥ ४ ॥
देखिबेकूं दौरै तो, अटकि जाइ वाही ओर;
सुनिबेकूं दौरे तौ, रसिक शिरताज है ॥
सूंघिबेकूं दौरे तौ, अघाय न सुगंध करि;
खायिबेकूं दौरे तौ, न धापै महाराज है ॥
भागहीकूं दौरे तौ, तृपत नहीं होइ क्यूहीं;
सुंदर कहत याही, नेकही न लाज है ॥
काहुको न कह्यो करै, आपनोही टेक धरै;
मनसों न कोऊ हम, देख्यो दगावाज है ॥ ५ ॥

---

१ विश्वास । २ पागल । ३ विश्वास करना । ४ मदन । ५ डर ६ लडकी । ७ मुर्खता ।

देखै न कुठोर ठौर, कहत औरकी और;
लीन जाइ होत हाड, मांस औ रकतमें ॥
करत बुराई सर, औसर न जानै कछु;
धक्का आइ देत राम, नामसूं लगतमें ॥
बहायें सुरासुर, बहायें सब भेषीजन;
सुंदर कहत दिन, चालत भगतमें ॥
औरहू अनेक, अंतराईही करत रहैं;
मनसों न कोऊ है, अधम या जगतमें ॥ ६ ॥
जिन ठगे शंकर, विधाता[१] इंद्र देव मुनि;
आपनोहू अधिपति[२], ठग्यो जिन चंद है ॥
और योगी जंगम, संन्यासी शेष कौन गिनै;
सबनिसूँ ठगत, ठगावै न सुछंद[३] है ॥
तापेश्वर ऋषीश्वर, सब पचि[४] पचि गये;
काहूके न आवै हाथ, ऐसो यापै बंद है ॥
सुंदर कहत वश, कौन विधि कीजै ताहि;
मनसों न कोऊ या, जगतमाहिं रंद है ॥ ७ ॥
रंककूं नचावै, अभिलाष धन पायबेकी;
निशिदिन शोच करि, ऐसेही पचत है ॥
राजाही नचावै सब, भूमिहीको राज लेवे;
औरहू नचावै जोई, देहसूं रचत है ॥
देवता असुर सिद्ध, पन्नग[६] सकललोक;
कीट पशु पक्षी कहु, कैसेकै बचत है ॥
सुंदर कहत काहू, संतकी कही न जाय;
मनके नचाए सब; जगत नचत है ॥ ८ ॥

---

१ नीच । २ ब्रह्मा । ३ मालिक । ४ स्वतंत्र । ५ यत्न कर कर हार । ६ नाग

इंदव छंद ।

केतक द्यौस भये समुझावत, नेक न मानत है मन भोंडू ॥
फूलि रह्यो विषयासुखमें कछु, और न जानत है शठ दोंडू ॥
आँखि न कान न नाक बिना शिर, हाथ न पाँव नहीं मुख पोंडू ॥
सुंदर ताहि गहै कहु क्यूँ करि, नीकसि जाइ बडो मन लोंडू ॥९॥
दौरत है दशहू दिशकूं शठ, वायु लग्यो तबते भयो बेंडा ॥
लाज न कान कछू नहिं राखत, शील स्वभावकी फोरत भेंडा ॥
सुंदर सीख कहा कहि दीजिय, भेदत बाण न छेदत गेंडा ॥
लालच लागि रह्यो मन बीखर, बारहवाट आठरहें पेंडा ॥ १०॥
श्वान कहूं कि सियार कहूं कि, बिलाड कहूं मनकी मति तैसी ॥
ढेड कहूं किधौं डूम कहूं किधौं, भांड कहूं किधौं भंडइ जैसी ॥
चोर कहूं बटपार कहूं ठग, जार कहूं उपमा कहूं कैसी ॥
सुंदर और कहा कहिये अब, या मनकी गति दीसत ऐसी ॥११॥
कै बेर तू मन रंक भयो शठ, माँगत भीख दशोदिश डूल्यो ॥
कै बेर तू मन छत्र धरचो शिर, कामिनि संग हिंडोरन झूल्यो ॥
कै बेर तू मन छीन भयो अति, कै बेर तू सुख पायके फूल्यो ॥
सुंदर कै बेर तोहिं कह्यो मन, कौन गली किदि मारग भूल्यो ॥१२॥
इंद्रिनके सुख चाहत है मन, लालच लागि भ्रमै शठ यूंही ॥
देखि मरीचिं भरचो जल पूरण, धावत है मृग मूरख ज्यूंही ॥
प्रेत पिशाच निशाचर डोलत, भूख मरै नहिं धावत क्यूंही ॥
वायु बघूरहि कौन गहै कर, सुंदर दौरत है मन त्यूंही ॥१३॥
है सबको शिरताज ततक्षण, जो अभिअंतर ज्ञान बिचारे ॥
जो कछु और विषै सुख बंछत, तौ यह देह अमोलक हारै ॥
छाँडि कुबुद्धि भजै भगवंतहि, आपु तरै पुनि औरहि तारै ॥
सुंदर तोहि कह्यो कितनी बिर, तू मन क्यूं नहिं आपु सँभारै ॥१४॥

---

१ दिन । २ सूर्य । ३ कुत्ता । ४ औरत । ५ किर्ण ।

कौन स्वभाव पर्यो उठि दौरत, अमृत छाँडि चचोरत हाडे ॥
ज्यूं भ्रमकी हथनी दृग देखत, आतुर होइ परै गज खाडे ॥
वाद वृथा भटकै निशिवासर, एकहु सीख लगी नहिं राँडे ॥
सुंदर तोहि सदा समुझावत, रे मन तू भ्रम वो किन छाँडे ॥ १५॥
जो मन नारिकि और निहारत, तौ मन होतहि ताहि कुरूपा ॥
जो मन काहुसुँ क्रोध करै पुनि, तौ मन है तबही तदरूपा ॥
जो मन मायहि माय रटै नित, तौ मन बूडत मायके कूपा ॥
सुंदर जो मन ब्रह्म विचारत; तौ मन होतहि ब्रह्मस्वरूपा ॥ १६ ॥

मनहर छंद ।

कबहुँक हँसि ऊठे, कबहुँक रोइ देत;
कबहुं बकत कहुँ, अंतहू न लहिये ॥
कबहुँक खाइ औ, अघात नहिं काहूकरि;
कबहुँक कहै मेरे, कछु नाहिं चहिये ॥
कबहुँ आकाश जाइ, कबहुँ पाताल जाइ;
सुंदर कहत ताहि, कैसे करि गहिये ॥
कबहुँक आय लगै, कबहुँक उठि भगै;
भूतकैसे चिह्न करै, ऐसो मन कहिये ॥ १७ ॥
कबहुँ तौ पाँखको, परेवा के दिखावै मन;
कबहुँक धूरके, चावर करि लेत है ॥
कबहुँ तौ गुटिका, उछारत आकाश ओर;
कबहुँ तौ राते[1] पीरे, रंग श्याम श्वेत[2] है ॥
कबहुँ तौ आँबकूं, उगाई करि ठाढो करै;
कबहुँ तो शीशधर, जुदे करि देत है ॥
बाजीगर ख्याल ऐसो, सुंदर कहत मन;
सदाहि भ्रमत रहै, ऐसो कोऊ प्रेत है ॥ १८ ॥

---

१ सदृश । २ सफेद ।

कबहुँक साधु होत, कबहुँक चोर होत;
कबहुँक राजा होत, कबहुँक रंक सो ॥
कबहुँक दीन होत, कबहूँ गुमानी होत;
कबहुँक सूधो होत, कबहुँक बंके सो ॥
कबहुँक कामी होत, कबहुँक यती होत;
कबहुँ निर्मल होत, कबहुँक पंक सों ॥
मनको स्वरूप ऐसो, सुंदर फटिक जैसो;
कबहुँक शूर होत, कबहूँ मयंक सो ॥ १९ ॥
हाथीकोसो कान किधौं, पीपरको पात किधौं;
ध्वजाको उडान कहूं, थिर न रहतु है ॥
पानीकोसो घेर किधौं, पौन उरझेर किधौं;
चक्रको सो फेर कोउ, कैसेके गहतु है ॥
रहटकी माल किधौं, चरखाको ख्याल किधौं;
फेरी खाता बाल कछु, सुधि न लहतु है ॥
धूमके सो धाव ताकूं, राखिबेको चाव ऐसो;
मनको स्वभाव सो तौ, सुंदर कहतु है ॥ २० ॥
सुख मानै दुःख मानै, संपति विपति मानै;
हर्ष मानै शोक मानै, मानै रंक धन है ॥
घटि मानै बढि मानै, शुभहू अशुभ मानै;
लाभ मानै हानि मानै, याहीते कृपण है ॥
पाप मानै पुण्य मानै, उत्तम मध्यम मानै;
नीच मानै ऊंच मानै, मानै मेरो तन है ॥
स्वर्ग मानै नर्क मानै, बंध मानै मोक्ष मानै;
सुंदर सकल मानै, ताते नाम मन है ॥ २१ ॥
जोई जोई देखै कछु, सोई सोई मन आहि;

---

१ टेढा । २ चन्द्रमा । ३ सूम ।

जोई जोई सुनै सोई, मनहीको भर्म है ॥
जोई जोई सूँघै जोई, खावै जो सपर्श होइ;
जोई जोई करै सोई, मनहीको कर्म है ॥
जोई जोई गेहै जोई, त्यागै जोई अनुरांगै;
जहाँ जहाँ जाइ सोई, मनहींको शर्म है ॥
जोई जोई कहै सोई, सकल सुंदर मंन;
जोई जोई कल्पै सोई, मनहींको धर्म है ॥ २२ ॥
एकही विटर्पविश्व, ज्यूंको त्यूंही देखियत;
अतिहि सघन ताके, पत्र फल फूल है ॥
आगले झरत पात, नये नये होत जात;
ऐसे याही तरुको, अनादी काल मूल है ॥
दशचारलोक लौं, पसरि रह्यो जहाँ तहाँ;
अधरु उरध पुनि, सूक्ष्मं रु स्थूलं है ॥
कोऊ तो कहत सत, कोऊ तो कहै असतं;
सुंदर कहत भ्रमहीको, मन भूल है ॥ २३ ॥
तोसौं न कुपूत कोऊ, कितहूँ न देखियत;
तोसों न सुपूत कोऊ, देखियत और है ॥
तूही आप भूलै महा, नीचहूते नीच होई;
तूही आप जानै तौ, सकलशिरमौर है ॥
तूही आप भ्रमै तब; जगत भ्रमत देखै;
तेरे स्थित भये सब, ठौरही को ठौर है ॥
तूही जीवरूप तूही, ब्रह्म है अकाशवत;
सुंदर कहत मन, तेरी सब दौर है ॥ २४ ॥
मनहीते भ्रमते, जगत यह पेखियत;
मनहींको भ्रम गये जगत विलात है ॥

---

१ छूना । २ धारण । ३ प्रेम करना । ४ परिश्रम । ५ कल्पना-फर्ज । ६ वृक्ष । ७ पुरातन । ८ बारीक । ९ मोटा । १० झूँठा ।

मनहींको भ्रम, जेवरीमें उपजत साँप;
मनके विचारे साँप, जेवरी समात है॥
मनहींके भ्रमते, मरीचिकाकूं जल कहै,
मनहींके भ्रम सीपै, रूपोसो दिखात है॥
सुंदर सकल यह, दीसै मनहींको भ्रम;
मनहींको भ्रम गये, ब्रह्म होइ जात है॥ २५॥
मनहीं जगतरूप, होइ करि विस्तरयो,
मनहीं अलखैरूप, जगतसूं न्यारो है॥
मनहीं सकलघट, व्यापक अखंड एक;
मनहीं सकल यह, जगत पियारो है॥
मनहीं आकाशवत, हाथ न परत कछु;
मनके न रूपरेख, वृद्धिहीनवारो है॥
सुंदर कहत परमारथ, विचारे जब;
मन मिटि जाइ एक, ब्रह्म निज सारो है॥ २६॥

इति मनकोअंग संपूर्ण॥ ११॥

अथ चाणकको अंग १२.

मनहर छंद।

जोई जोई छूटिबेको, करत उपाय अज्ञ;
सोई सोई दृढकरि, बंधन परतु है॥
योग यज्ञ जप तप, तीरथव्रतादि और,
जंपापात लेत जाइ, हिमाले गरतु है॥
कानहु फराई पुनि, केशहु लुंचाई अंग;
विभूति लगाई फिर, जटाहु धरतु है॥

१ सूर्य्यरश्मि। २ सितूहा। ३ अदृश्य। ४ अलग। ५ शून्यवत्। ६ घटाना-बढाना। ७ मूर्ख।

बिन ज्ञान पाय नहिं, छूटत हृदयग्रंथी,
सुंदर कहत यूंहि, भ्रमिके मरतु है ॥ १ ॥

सर्व लघु अक्षर।

जप तप करत धरत व्रत जत सत, मन वच क्रम भ्रम कसट सहत तन॥
वलकल वसन[1] अशन[2] फल पत्र जल, कसत रसन[3] रस तजत वसत वन ॥
मरत मरत नर गरत परत सर, कहत लहत हय[4] गज[5] दल[6] बल घन ॥
पचत पचत भव भयन टरत शठ, घट घट प्रगट रहत न लखत जन ॥ २

पूर्ववत्।

योग करै यज्ञ करै, वेद विधि त्याग करै;
जप करै तप करै, यूंहि आयुं[7] खूटि[8] है ॥
यम करै नेम करै, तीरथहु व्रत करै;
पुहुमी[9] अटन[10] करै, वृथा श्वास टूटि है ॥
जीवेको यतन[11] करै, मनमें वासना धरै;
पचि पचि यूंहि मरै, काल शिर खूटि है ॥
औरहू अनेकविधि, कोटिक उपाय करै;
सुंदर कहत बिन, ज्ञान नहीं छूटि है ॥ ३ ॥
बुद्धिकरि हीन नर, रज[12] तम छाय रह्यो;
वन वन फिरत, उदास होइ घरते ॥
कठिन तपस्या धरि, मेघ शीत घाम सहै;
कंद मूल खाइ कोऊ, कामनाके डरते ॥
अतिहि अज्ञान उर, विविध उपाय करै;
निजरूप भूलिके, बँधत जाइ परते ॥
सुंदर कहत आँधी, और कैसें दीखै मुख;

---

१ वस्त्र। २ भोजन। ३ जीभ। ४ घोडा। ५ हाथी। ६ सेना। ७ उमर। ८ खतम होना। ९ पृथ्वी। १० घूमना। ११ उपाय। १२ रजोगुण, तमोगुण।

हाथमाहिं ओरसी न, फेरै मूंढ करते ॥ ४ ॥
मेव सहै शीत सहै, शीशपर घाम सहै;
कठिन तपस्या करि; कंद मूल खात है ॥
योग करै यज्ञ करै, तीरथ रु व्रत करै;
पुण्य नानाविधि करै, मनमें सुहात है ॥
और देवी देवता, उपासना अनेक करै;
आँबनकी हौंस कैसे, आँक डोडे जात है ॥
सुंदर कहत एक, रैविके प्रकाश विनु;
जैंगनोंकी ज्योति, कहा रैजनी विलात है ॥ ५ ॥
कोई फिरै नागे पायँ, गुदरी बनायकरि;
देहकी दशा दिखाइ, आइ लोक घूट्यो है ॥
कोई दूधाहारी होई, कोई फलाहारी होई;
कोई अधोमुख झूल, झुलि धूँम घूट्यो है ॥
कोई नहिं खाए लौणं, कोई मुख गहै मौनं;
सुंदर कहत यूंही, वृथा भूस कूट्यो है ॥
प्रभुसूं तो प्रीति नाहिं, ज्ञानसूं परिचै नाहिं ॥
देखो भाई आँधरेने, ज्यूं बजार लूट्यो है ॥ ६ ॥

इंदव छन्द।

आसन मारि सवाँरि जटा नख, उज्ज्वल अंग विभूति चढ़ाई ॥
या हमकूं कछु देहि दया करि, घेरि रहै बहु लोग लुगाई ॥
कोउक उत्तम भोजन ल्यावत, कोउक ल्यावत पान मिठाई ॥
सुंदर लेकरि जात भयो सब, मूरख लोकनि या विधि पाई॥७॥
ऊरधें पाय अधोमुख ह्वै करि, घूटत धूमहि देह झुलावै ॥
मेघहु शीतहु घाम सहै शिर, तीनहु काल महादुख पावै ॥

१ आईना। २ मूर्ख। ३ कठोर। ४ सूर्य्य। ५ जुगनू। ६ रात। ७ शिर नीचे करना। ८ धूवाँ। ९ नमक। १० मुखसे कछु न बोलना। ११ ऊपर।

हाथ कछू न परै कबहूं कण, मूरख कूकस कूटि उडावै ॥
सुंदर बंछि विषै सुखकूं घर, बूडत है अरु झाँझे ले गावै ॥ ८ ॥
गेहँ तज्यो पुनि नेहँ तज्यो पुनि, खेहँ लगाइ जु देह सँवारी ॥
मेघ सहै शिर शीत सहै तन, धूप सहै जु पँचागिनि बारी ॥
भूख सहै रहि रूख तरै पर, सुंदरदास सहै दुख भारी ॥
डासन छाँडि जु कासन ऊपर, आसन मारि पै आश न मारी॥९॥
जो कोउ कष्ट करै बहु भाँतिनि, जात अज्ञान नहीं मन केरो ॥
ज्यूं तम पूरि रह्यो घर भीतर, कैसहु दूर न होय अँधेरो ॥
लाठिनि मारिय ठेलि निकारिय, और उपाय करे बहुतेरो ॥
सुंदर शूल प्रकाश भयो तव, तौ कितहू नहिं देखिय नेरो ॥ १० ॥
धार वह्यो वड धारि रह्यो जल, धार सह्यो गिरिँ धार गन्यो है॥
भार सँच्यो धन भारतमें कर, भार लह्यो शिर भार पन्यो है ॥
भार तप्यो वहि मार गयो यम, मार दई मन तौ न मन्यो है ॥
सार तज्यो पटसार पन्यो कहि, सुंदर कारज कौन सन्यो है॥ ११ ॥
कोउ भया पय पान करै नित, कोउक खातहि अन्न अलौना ॥
कोउक कष्ट करै निशिवासर, कोउक बैठि जु साधत पौना ॥
कोउक वाद विवाद करै अति, कोउक धारि रहै सुख मौना ॥
सुंदर एक अज्ञान गये विन, सिद्ध भये नहिं दीसत कौना ॥ १२ ॥

सवैया छंद ।

कोउक अंग विभूति लगावत, कोउक होत निराट दिगंवर ॥
कोउक सेन कषायक ओढत, कोउक काथ रँगै बहु अंवर ॥
कोउक वँल्कल शीश जटा नख, कोउक ओढत है जु बघंवर ॥
सुंदर एक अज्ञान गये बिनु, ए सब दीसत आहि अडंबर ॥ १३ ॥

इंदव छंद ।

कोउक जात प्रयाग बनारस, कोउ गया जगनाथहि धावै ॥

१ भूसी । २ एक बाजेका नाम है । ३ घर । ४ स्नेह ।५ भस्म । ६ अंधकार ।
७ पहाड । ८ नग्र । ९ वस्त्र । १० भोजपत्र । ११ पाखंड ।

कोउ मथुरा बद्री हरिद्वार सु, कोउ गँगा कुरुक्षेत्र नहावै ॥
कोउक पुष्कर ह्वै पँचतीरथ, दौरिहि दौरि जु द्वारका आवै ॥
सुंदर वित्त गड्यो घरमाहिं सु, बाहिर ढूँढत क्यूं करि पावै ॥ १४ ॥
आगे कछू नहिं हाथ पऱ्यो पुनि, पीछे बहारि गयो निज भौना ॥
ज्यूं कोइ कामिनि कंतहि मारि, चली सँग औरहि देखि सलोना ॥
सोउ गयो तजिके ततकाल कहै, न बनै जु रही मुख मौना ॥
तैसहि सुंदर ज्ञान विना घरछाँडि, भये नर भाँडके दौना ॥ १५ ॥
ज्यूं कोउ कोश कट्यो नहिं मारग, तौलकले घरमें पशु जोए ॥
ज्यूं बनियाँ गयु बीसके तीसकुँ, बीसहुमें दशहू नहिं होए ॥
ज्यूं कोउ चौबा छबेकूँ चल्यो पुनि, होइ दुबे दुइ गाँठके खोए ॥
तैसही सुंदर और क्रिया सब, राम बिना निहचै नर रोए ॥ १६ ॥
ज्यूं कोउ राम बिना नर मूरख, औरनिके गुण जीभ भनैगी ॥
आन क्रिया गढ़के गढवा पुनि, होतहि बेर कछू न बनैगी ॥
ज्यूं हथ फेरि दिखावत चामर, अंत तु धूरिकि धूरि छिनैगी ॥
सुंदर भूल भई अतिशै करि, सूतेकि भैंस पाँडाहि जनैगी ॥ १७ ॥
होइ उदास विचार विना नर, गेह तज्यो वन जाइ रह्यो है ॥
अंबर छाँडि बबंबर ले करिके, तपको तन कष्ट सह्यो है ॥
आसन मारि सुआसन ह्वै मुख, मौन गही मन तौ न गह्यो है ॥
सुंदर कौन कुबुद्धि लगी कहि, या भवसागर माहिं बह्यो है ॥ १८ ॥
वेष धऱ्यो परि भेद न जानत, भेद लहै बिन खेदहि पै ॥
भूखहि मारत नींद निरावत, अन्न तजै फल पत्र न खैहैं ॥
और उपाय अनेक करै पुनि, ता हित हाथ कछू नाहिं ऐहैं ॥
या नर देह वृथा शठ खोवत, सुंदर राम विना पछतै हैं ॥ १९ ॥
आपन आपन थान मुकाम, सराहनकूं सब भाँति भली है ॥
यज्ञ व्रतादिक तीरथ दान, पुरान कथा जु अनेक चली है ॥

---

१ धन । २ नमर्कान । ३ व्यायगी । ४ क्लेश । ५ पात ।

कोटिक और उपाय जहाँलगि, ते सुनिके नरबुद्धि छली है ॥
सुंदर ज्ञान विना न कहूँ सुख, भूलनकी बहुभाँति गली है॥२०॥
कोउक चाहत पुत्र धनादिक, कोउक चाहत बाँझ जनायो ॥
कोउँके चाहत धातु रसादिक, कोउक चाहत पार दिखायो ॥
कोउक चाहत यंत्रनि मंत्रनि, कोउक चाहत रोग गमायो ॥
सुंदर राम बिना सबही भ्रम, देखहु या जग यूं डहँकायो॥२१॥
काहेक तू नर बेष बनावत, काहेकुं तूं दशहू दिशि डूलै ॥
काहेकुं तूं तनु कष्ट करै अति, काहेकुं तूं सुखते कहि फूलै ॥
काहेकुं और उपाय करै अब, आन क्रिया करके मत भूलै ॥
सुंदर एक भजै भगवंतहि, तौ सुखसागरमें नित झूलै ॥ २२ ॥

इति चाणकको अंग संपूर्ण ॥ १२ ॥

अथ विपरीतज्ञानको अंग १३.

मनहर छन्द ।

एकब्रह्म मुखसूं, बनायकरि कहत है;
अंतः करण तौ, विकारनसूं भरयो है ॥
जैसे ठगँ गोबरको, कूपो भरि राखत है;
सेरपंच घृत लेके, ऊपर ज्यूं करयो है ॥
जस कोई भांडमाहिं, प्याजकूं छिपाय राखै;
चीथरा कपूरको ले, मुख बाँधि धरयो है
सुंदर कहत ऐसे, ज्ञानी हैं जगत माहिं;
तिनकूं तौ देखि करि, मेरो मन डरयो है ॥ १ ॥
देहसूं ममत्व पुनि, गेहसूं ममत्व सुंत;
दारासूं ममत्व मन; मायामें रहतु है ॥

---

१ संदेह । २ कार्य्य । ३ हृदय । ४ धूर्त । ५ घी । ६ ममता ।
७ लडका । ८ स्त्री ।

थिरता न लहै जैसे, कंदुकै चौगानमाहिं;
कर्मनिके वश मारयो, धकाकूं बहुत है ॥
अंतहकरण सदा, जगतसूं राचि रह्यो;
मुखसूं बनाय बात, ब्रह्मकी कहतु है ॥
सुंदर अधिक मोहिं, याहिते अचंभो आहि;
भूमिपर परयो कोउ, चंदकूं गहतु है ॥ २ ॥
मुखसूं कहत ज्ञान, भ्रमै मन इंद्रि प्रान;
मारगके जलमें न, प्रतिबिंबै लहिये ॥
गाँठमें न पैसा कोउ, भयो रहै साहुकार;
बाणिनमें मुहर, रुपैया गिनि लहिये ॥
स्वपनेमें पंचामृत, जीभके तृपत भयो;
जागेते मरत भूख, खायिबेकूं चहिये ॥
सुंदर सुभट जैसे कायर मारत गाल;
राजा भोज सम कहा गुंगूतेली कहिये ॥ ३ ॥
संसारके सुखनिसूं, आसक्त अनेकनिधि;
इंद्रिहु लोलुप मन, कबहुं न गृह्यो है ॥
कहत है ऐसे मैं तौ, एक ब्रह्म जानत हूं;
ताहिते छोडिके शुभ, कर्मनते रह्यो है ॥
ब्रह्मकी न प्राप्ति पुनि, कर्म सब छूटि गये;
दोउनते भ्रष्ट होइ, अर्धबिच बह्यो है ॥
सुंदर कहत ताहि, त्यागिये श्वपच जैसे;
याही भाँति ग्रंथमें, वसिष्ठजीहूँ कह्यो है ॥ ४ ॥
ज्ञानीकीसी बात कहैं, मन तौ मलिनरहै;
वासनाँ अनेक भरि, नेकु न निवारी है ॥

---

१ गेंद। २ मैदान। ३ छाया। ४ बहादुर। ५ कादर। ६ लबार। चुगुल-खोर। ७ नष्ट। ८ नरक लहर। ९ डोम। १० कामना।

जैसें कोउ आभूषणं, अधिक बनाइ राखै,
कलई उपर करि, भीतर भँगारी है ॥
ज्यूंही मन आवै त्यूंही, खेलत निशंक होइ;
ज्ञान सुनि सीखि लियो, ग्रंथ न विचारी है ॥
सुंदर कहत वाके, अटक न कोऊ आहि;
जोई वासूं मिलै जाइ, ताहीकूं बिगारी-है ॥ ५ ॥
हंस श्वेत बकं श्वेत, देखियें समान दोउ;
हंस मोती चुगै बक, मछरीकूं खात है ॥
पिक अरु काक पोऊ, कैसेकरि जाने जाइँ,
पिक अंबडारी कॉक, कैरकहि जात है ॥
सैंधौ अरु फटिकँ, पषाणसम देखियत;
वह तौ कठोर वह, जलमें समात है ॥
सुंदर कहत ज्ञानी, बाहिर भीतर शुद्ध;
ताकी पटंतर औरं, बातनी की बात है ॥ ६ ॥

इति विपरीतज्ञानको अंग संपूर्ण ॥ १३ ॥

अथ वचनविवेकको अंग १४.

मनहर छंद ।

जाके घर ताजी, तुरकिनको तबेली बाँध्यो;
ताके आगे फेरि फेरि, टटुवा दिखाइये ॥
जाके खासा मलमल, साफनेके ढेर परे;
ताके आगे आनि करि, चौसई रखाइये ॥
जाके पंचामृत खात, खात सब दिन बीते;
सुंदर कहत ताहि, राबरी चखाइये ॥

---

१ गहना । २ निडर । ३ बकुला । ४ कोयल । ५ कौवा । ६
७ स्फटिक मणि । ८ उपमा । ९ टसर ।

चतुर प्रवीण आगे, मूरख उच्चार करै;
सूरजके आगे जैसे, जुगुनु लखाइये ॥ १ ॥
एक वाणी रूपवंत, भूषण वसन अग;
अधिक विराजमान, कहियत ऐसी है ॥
एक वाणी फाटे टूटे, अंबर उढाय आनि;
ताहिमाहिं विपरीत, सुनियत जैसी है ॥
एक वाणी मृतकसी, बहुत शृंगार किये;
लोकनिकूं नीकि लगे, संतनकूं भयसी है
सुंदर कहत वाणी, विविध जगतमाहिं;
जानै कोई चतुर, प्रवीण जाकी जैसी है ॥ २ ॥
राजाको कुँवर जो, स्वरूप कै कुरूपहोइ;
ताकूं तौ सलाम करि, गोदें ले खेलाइये ॥
और कोउ रैतको स्वरूप, होइ शोभनीक;
ताहूकूं तौ देखि करि, निकट बुलाइये ॥
काहूको कुरूप कारो, कूबरो ह्व अंगहीन;
वाकी और देखि देखि, माथोही हलाइये ॥
सुंदर कहत वाके, बापहीको प्यारो होई;
यूंहि जानि वाणीको, विवेकं ऐसे पाइये ॥ ३ ॥
बोलिये तौ तब जब, बोलिबेकी शुधि होइ;
न तौ मुख मौन गहि, चुप होइ रहिये ॥
जोरये तौ तब जब, जोरिबेकी जानि परै;
तुक छंद अरथ, अनूप जामें लहिये ॥
गाइये तौ तब जब, गायिबेको कंठ होइ;
श्रवणके सुनतही, मन जाइ गहिये ॥
तुक भंग छंद भंग, अरथ न मिलै कछु;

१ खद्योत । २ उलटा । ३ मुर्दा । ४ डर । ५ लंक । ६ सुहावना । ७ ज्ञान ।

सुंदर कहत ऐसी, बाणी नहीं कहिये ॥ ४ ॥
एकनिके वचन सुनत, अतिसुख होइ;
फूलसे झरत हैं, अधिक मनभावने ॥
एकनिके वचन तौ, अंसि मानौ बरषत;
श्रवणके सुनत, लगत अलखावने ॥
एकनिके वचन, कटुक कहुं विषरूप;
करत मरम छेद, दुःख उपजावने ॥
सुंदर कहत घट, घटमें वचन भेद;
उत्तम मध्यम अरु, अधम सुहावने ॥ ५ ॥

काक अरु रासभं, उलूक जब बोलत हैं;
तिनके तौ वचन, सुहात कहु कौनकूं ॥
कोकिला रु सारी पुनि, सूवा जब बोलत हैं;
सब कोउ कान दे, सुनत रव रौनकूं ॥
ताहिते सुवचन, विवेककरि बोलिये जू;
यूंहि आकबाक बकि, तोरिये न पौनकूं ॥
सुंदर समुझि ऐसे, वचन उचार करौ;
नहिं तौ समुझिकरि, बैठौं गहि मौनकूं ॥ ६ ॥

प्रथम हिये विचार, ढीमसो न दीजे डार;
ताहिते सुवचन, सँभारिकरि बोलिये ॥
जानै न कुहेत हेत, भावै तैसी कही देत;
कहिये सु तब जब, मनमाहिं तौलिये ॥
सबहीकूं लागै दुःख, कोऊ नहिं पावै सुख;
बोलिये वृथाही तातै, छाती नहिं छोलिये ॥
सुंदर समुझिकरि, कहिये सरसं बात;
तबहीं तौ वदन, कपाटंगहि खोलिये ॥ ७ ॥

---

१ तलवार । २ तिक्त । ३ गर्दभ घूघू । ४ रसीली—श्रेष्ठ । ५ किवाँड ।

और तौ वचन ऐसे, बोलत हैं पशु जैसें;
तिनके तौ बोलिबेमें, ढंगहू न एक है ॥
कोऊ रात दिवस, बकतही रहत ऐसे;
जैसी विधि कूपमें, बकत मानो मेक[1] है ॥
विविध प्रकार करि, बोलत जगत सब;
घट घट प्रतिमुख, वचन अनेक है ॥
सुंदर कहत ताते, वचन विचारि लेहु;
वचन तो वहै जामें, पाइये विवेक है ॥ ८ ॥
जैसे हंस नीरकूं[2] तजत है असार[3] जानि;
सार जानि क्षीरेकूं[4], निरालो करि पीजिये ॥
जैसे दधि मथत, मथत काढि लेत घृत;
और रही वही सब, छाँछ छाँडि दीजिये ॥
जैसे मधुमक्षिका, सुवासकूं भ्रमर[5] लेत;
तैसेही विचारकरि, भिन्न भिन्न कीजिये ॥
सुंदर कहत ताते, वचन अनेकभाँति;
वचनमें वचन, विवेक करि लीजिये ॥ ९ ॥
प्रथमही गुरुदेव, मुखते उच्चार करयो;
वेई तौ वचन आय लगे, निज हिये हैं ॥
तिनको विवेक करि, अंतहकरण माहिं;
अतिहि अमोलनग, भिन्न भिन्न किये हैं ॥
आपको दरिद्र गयो, पर उपकार हेत;
नगही निगलिके उगलि, नग लिये हैं ॥
सुंदर कहत यह, वाणी यूं प्रगट भई;
और कोई सुनि करि, रंक जीव जिये हैं ॥ १० ॥
वचनते दूर मिलै, वचन विरोध[6] होइ;

१ मेंढक । २ पानी । ३ निरस । ४ दूध । ५ भँवरा । ६ लडाई ।

वचनते राग बढै, वचनते दोष जू ॥
वचनते ज्वाल[1] उठै, वचन शीतल होइ;
वचनते मुदित[2], वचनहीते रोष जू ॥
वचनते प्यारौ लगै वचनते दूर भगै[3];
वचनते मारिजाय, वचनते पोषं जू ॥
सुंदर कहत यह, वचनको भेद ऐसो;
वचनते बंध होत, वचनते मोक्ष जू ॥ ११ ॥
वचनते गुरु शिष्य, बाप पूत प्यारो होइ;
वचनते बहुविधि, होत उतपातहैं ॥
वचनते नारी अरु, पुरुष सनेही अति;
वचनते दोऊ आप, आपमें रिसात है ॥
वचनते सब आइ, राजाके हुजूर होइँ;
वचनते चाकरहू, छोडिके पलात हैं ॥
सुंदर सुवचन, सुनत अतिसुख होइ;
कुवचन सुनतहि, प्रीति घटि जात है ॥ १२ ॥
एक तौ वचन सुनि, कर्महिमें बहिजाय;
करत बहुताविधि, स्वर्गकी उमेद है ॥
एक है वचन दृढ, ईश्वर उपासनाके[4];
तिनमें तौ सकलही, वासनाको छेद है ॥
एक है वचन तामें, एकही अखंड ब्रह्म;
सुंदर कहत यूं, बतावै अंत वेद है ॥
वचन तौ अनेक, प्रकार सब देखियत;
वचनविवेक किये, वचनमें भेद है ॥ १३ ॥
वचनते योग करै, वचनते यज्ञ करै;
वचनते तप करि, देहकूं दहतु है ॥
वचनते बंधन, करत है अनेक विधि;

---

१ अग्निकी लू। २ प्रसन्न। ३ भागना। ४ भजन–ध्यान।

वचनते त्याग करि, वचन रहतु है ॥
वचनते उरझै रु, सुरझै वचनहूते,
वचनते भाँति भाँति, संकट सहतु है ॥
वचनते जीव भयो, वचनते शिव होइ;
सुंदर वचनभेद, वेद यूं कहतु है ॥ १४ ॥

इति वचनविवेकको अंग संपूर्ण ॥ १४ ॥

अथ निर्गुणउपासनाको अंग १५.

इंदव छंद।

ब्रह्म कुलाल रचै बहु भाजन, कर्मनिके वश मोहिं न भावै ॥
विष्णुहि संकट आय सहै भ्रम, काहुक रक्षक काहु सतावै ॥
शंकर भूतपिशाचनिको पति, पाणिं कपोल लिये बिललावै ॥
या हित सुंदर त्रीगुण त्यागि सु, निर्गुण एक निरंजन ध्यावै॥१॥

सवैया छन्द।

कोटिक बात बनाय कहैं कहा, होत भये सबही मन रंजनं ॥
शास्त्र सुस्मृति रु वेद पुराण, बखानत हैं अति लायके अंजन ॥
पानिमें बूडत पानि गहै कित, पार पहूंचत मति भंजनं ॥
सुंदर तहँलगि अंधकि जेवरि, जौलौं न ध्याइय एक निरंजन ॥ २ ॥

इंदव छन्द।

मंजन सो जु मनो मल भंजन, सज्जन सो जु कहै गति गूझै ॥
गंजन सो जु इंद्री गहि गंजन, रंजन सो जु बुझावे अबूझै ॥
भंजन सो जु भन्यो रसमाहिं, विद्वज्जन सो कितहूं न अरूझै ॥
व्यंजन सो जु बढै रुचि सुंदर, अंजन सो जु निरंजन सूझै॥३॥
जा प्रभुते उतपत्ति भई यह, सो प्रभु हैं डर इष्ट हमारे ॥

---

१ हाथपर कपार रखके। २ रोवे। ३ सतोगुण-रजोगुण-तमोगुण। ४मनको प्रसन्न करनेवाला। ५ धर्मशास्त्र। ६ तोडना। ७ भोजन।

जो प्रभु है सबके शिर ऊपर, ता प्रभुकूं शिरही हम धारे ॥
रूप न रेख अलेख अखंडित, भिन्न रहै सब कारज सारे ॥
नाम निरंजन है तिनको पुनि, सुंदर ता प्रभु की बलिहारे ॥ ४ ॥
जो उपजै विनशै गुण धारत, सो यह जानहु अंजन माया ॥
आव न जाय मरै नहिं जीवत, अच्युत एक निरंजन राया ॥
ज्यूं तरु तत्त्व रहै रस एकहि, आवत जात फिरै यह छाया ॥
सो परब्रह्म सदा शिर ऊपर, सुंदर ता प्रभुसूं मन लाया ॥ ५ ॥
जो उपज्यो कछु आहि जहाँलगि, सो सब नाश निरंतर होई ॥
रूप धरयो सु रहै नहिं निश्चल, तीनहुँ लोक गिनै कहँ कोई ॥
राजस तामस सात्त्विक जे गुण, देखत काल ग्रसै पुनि वोई ॥
आपही एक रहै जु निरंतर, सुंदरके मन मानत सोई ॥ ६ ॥
देवनिके शिर देव विराजित, ईश्वरके शिर ईश्वर कैये ॥
लालनिके शिर लाल निरंतर, खूबनिके शिर खूबहि लैये ॥
पाकनिके शिर पाक शिरोमणि, देखि विचार उहै दृढ गैये ॥
सुंदर एक सदां शिर ऊपर, और कछू हमकूं नहिं चैये ॥ ७ ॥
शेष महेश गणेश जहाँलगि, विष्णु विरिंचिहुके शिर स्वामी ॥
व्यापक ब्रह्म अखंड अनाव्रत, बाहर भीतर अंतरजामी ॥
वोर न छोर अनंत कहै गुण, या हित सुंदर है घन नामी ॥
ऐसो प्रभू जिनके शिर ऊपर, क्यूं वरिहै तिनकूं कहि स्वामी ॥८॥

इति निर्गुणउपासनाको अंग संपूर्ण ॥ १५ ॥

अथ पतिव्रताको अंग १६.

इंदव छंद ।

आनकि ओर निहारतही जस, जात पतिव्रत एक व्रतीको ॥
होत अनादर ऐसिहि भाँति जु, पीछे फिरे नहिं शूर सतीको ॥

---

१ अलग। २ जो अपने नियमोंसे न हटें–परमेश्वर।

नेकहिमें हरवो हुइ जात, खिसै अध बिंदु जु योग यतीको ॥
राम हृदैते गये जन सुंदर, एक रती बिन पावरतीको ॥ १ ॥
जो हरिकूं तजि आन उपासत, सो मतिमंद फजीहत होई ॥
ज्यूं अपने भरतारहि छाँडि, भई व्यभिचारिणिकामिनी कोई॥
सुंदर ताहि न आदर मान, फिरै विमुखी अपनी पतँ खोई ॥
बूडि मरै किन कूप मँझार, कहा जग जीवत है शठ सोई ॥ २ ॥
होइ अनन्य भजै भगवंतहि, और कछू उरमें नहिं राखै ॥
देवि रु देव जहाँलग हैं, डरके तिनसूं कहि दीनं न भाखै ॥
योगहु यज्ञ व्रतादि क्रिया तिनको, तु नहीं स्वपने अभिलाखै ॥
सुंदर अमृतपान कियो, तब तौ कहु कौन हलाहल चाखै ॥ ३ ॥
एक वही सबके उर अंतर, ता प्रभुकूं कहु काहि न गावै ॥
संकटमाहिं सहाय करै पुनि, सो अपनो पति क्यूं बिसरावै ॥
चार पदारथ और जहाँलगि, आठहु सिद्धि नवौ निधि पावै ॥
सुंदर छार परौ तिनके मुख, जो हरिकूं तजि आनकुं ध्यावै ॥ ४ ॥
पूरणकाम सदा सुखधाम, निरंजन राम सिरज्जन हारो ॥
सेवक होइं रह्यो सबको नित, कीटहि कुंजर देत अहारो ॥
भंजनदुःख दरिद्र निवारण, चिंत करै पुनि साँझ सवारो ॥
ऐसे प्रभू तजि आन उपासत, सुंदर है तिनको मुख कारो ॥ ५ ॥

मनहर छंद ।

पतिहीसूं प्रेम होई, पतिहीसूं नेम होई;
पतिहीसूं क्षेम होई, पतिहीसूं रत है ॥
पतिही है यज्ञ योग, पतिही है रसभोग;
पतिहीसूं मिटै सोग, पतिहीको यत है ॥
पतिही है ज्ञान ध्यान, पतिही है पुण्य दान;
पतिही है तीर्थ स्नान, पतिहीको मत है ॥

---

१ पुंश्चली । २ बहिर्मुख । ३ प्रतिष्ठा । ४ एक । ५ दुःखी । ६ विष ।

पति बिनु पति नाहिं, पति बिन गति नाहिं;
सुंदर सकलविधि, एक पतिव्रत है ॥ ६ ॥
जलको सनेही मीन, बिछुरत तजै प्रान;
मणिं बिनु अहि जैसे, जीवत न लहिये ॥
स्वाति बिंदुको सनेह, प्रगट जगतमाहिं;
एक सीप दूसरो सु, चातकहु कहिये ॥
रविको सनेही पुनि, कमल सरोवरमें;
शशिको सनेहीहू, चकोर जैसे रहिये ॥
तैसेही सुंदर एक, प्रभुसूं सनेह जोर;
और कछु देखि काहू, ओर नहिं बहिये ॥ ७ ॥

॥ इति पतिव्रताको अंग संपूर्ण ॥ १६ ॥

अथ विरहउराहनेको अंग १७.

मनहर छंद ।

पीयको अँदेशो भारी, तोसूं कहूं सुन प्यारी;
यारी तोरी गये सो तौ, अजहूँ न आए हैं ॥
मेरे तौ जीवनप्राण, निशि दिन उहै ध्यान;
मुखतूं न कहूं आन, नैन उर लाए हैं ॥
जबते गए बिछोहि, कल न परत मोहिं;
ताते हूँ पूछत तोहि, किन बिरमाएँ है ॥
सुंदर विरहिनीको, शोच सखी बार बार;
हमकूं बिसार अब, कौनके कहाए हैं ॥ १ ॥
हमकूं तौ रैन दिन, शंक मनमाहिं रहै;

---

१ प्रीति । २ अलग-दर्द छोड । ३ ठहराये हैं । ४ वियोगनी नारि-जो पतिके प्रेममें व्याकुल हो ।

उनकी तौ बातनिमें, ढंगहु न पाइये ॥
कबहूं सँदेशा सुनि, अधिक उछाह होइ
कबहुँक रोइ रोइ, आँशुन बहाइये ॥
औरनके रस वश, होइ रहे प्यारेलाल;
आवनकी कहि कहि, हमकूं सुनाइये ॥
सुंदर कहत ताहि, काटिये सु कौन भाँति;
जोइ तरु आपने सु, हाथते लगाइये ॥ २ ॥
मोसूं कहै औरसीही, वासूं कहै औरसीही,
जाकूं कहै ताहीके, प्रतीत कैसे होत है ॥
काहूसूं समास करै, काहूसूं उदास फिरै,
काहूसूं तो रसवश, एकमें क्रपोत है ॥
दगाबाजी दुबधा तो, मनकी न दूर होइ;
काहूके अँधेरी घर, काहूके उद्योत ॥
सुंदर कहत जाके, पीर सो करै पुकार,
जाके दुःख दूर गये, ताको भई बीत है ॥ ३ ॥
हिये और जिये और, लिये और दिये और;
किये और कौनसी, अनुपपाटी पढे हैं ॥
मुख और बैन और, नैन और तन और;
मन और काया सब, यंत्रमाहिं कढे हैं ॥
हाथ और पावँ और, शीशहू श्रवण और;
नख शिख रोम रोम, कलईसूं मढे हैं ॥
ऐसी तौ कठोरता न, सुनी नहिं देखी जग,
सुंदर कहत कोई, वज्रहीके गढे हैं ॥ ४ ॥

इति विरहउराहनेको अंग संपूर्ण ॥ १७ ॥

---

१ प्रसन्नता। २ मिलाप। ३ उजेला-(प्रकाश)।

अथ शब्दसारको अंग १८.

मनहर छंद ।

भूल्यो फिरै भ्रमंते, कहत कछु और और;
करत न ताप दूरि, करत सँतापकूं ॥
दक्ष भयो रहै पुनि, दक्षप्रजापति जैसे;
देत परदीक्षणा न, दीक्षा देत आपकूं ॥
सुंदर कहत ऐसे, जामें न युगति कछु;
आर जापं जपे न, जपत निजजापकूं ॥
बाल भयो ज्वान भयो, वय बीते वृद्ध भयो;
वेपुरूप होइके, बिसारि गयो आपकूं ॥ १ ॥

इंदव छंद ।

पान उहै जु पियूष पिवै नित, दान उहै जु दरिद्रहि मानै ॥
कान उहै सुनिये यश केशव, मान उहै करिये सनमानै ॥
तान उहै सुरतान रिझावत, जान उहै जगदीशहि जानै ॥
बान उहै मन बेधत सुंदर, ज्ञान उहै उपजै न अज्ञानै ॥ २ ॥
शूर उहै मनको वश राखत, कूर उहै मनमाँहिं लजै है ॥
त्याग उहै अनुराग नहीं कहुँ, भाग उहै मनमोह तजै है ॥
तँज्ञ उहै निज तत्त्वहि जानत, यज्ञ उहै जगदीश यजै है ॥
रक्त उहै हरिसूं रति सुंदर, भक्त उहै भगवंत भजै है ॥ ३ ॥
चापं उहै कसिये रिपु ऊपर, दांप उहै दलकारहि मारै ॥
छाप उहै हरि आप दई शिर, थाप उहै थपि और न धारै ॥
जाप उहै जपिये अजपा नित, व्याप उहै निजव्याप विचारै ॥

---

१ पश्चात्ताप-दुःख । २ प्रवीण । ३ पर उपदेश । ४ परमेश्वर-शरीर । ५ सुधा । ६ नाश । ७ बुद्धिमान । ८ प्रेमी । ९ धनुष-शरासन । १० क्रोध घमंड । ११ नित्त जपाजाय ।

बाप उहै सबको प्रभु सुंदर, पाप हरै अरु ताप निवारै॥४॥
भौनँ उहै भय नाहिं न जामहि, गौन उहै फिरि होइ न गौना॥
बौन उहै बमिये विषयारस, रौन उहै प्रभुसूं नहिं रौना॥
मौन उहै जु लिये हरि बोलत, लौन उहै सब औरअलौना॥
सौन उहै गुरु संत मिलै जब, सुंदर शंक रहै नहिं कौना॥५॥
कार उहै अविकार रहै नित, सार उहै जु असारहि नाखै॥
प्रीति उहै जु प्रतीति धरै उर, नीति उहै जु अनीति न भाखै॥
तंत उहै लगि अंत न टूटत, संत उहै अपनो सत राखै॥
नादँ उहै सुनि बाद तजै सब, स्वाद उहै रस सुंदर चाखै॥६॥
श्वास उहै जु उश्वास न छाँडत, नाश उहै फिरि होइ न नाशा॥
पाप उहै सतपास लगै जम-पास, कटै प्रभुके नित पासा॥
वास उहै गृहवास तजै वनवास, सही तिंहि ठोहर वासा॥
दास उहै जु उदास रहै, हरिदास सदा कहि सुंदरदासा॥७॥
श्रोत्र उहै श्रुतिसारँ सुनै अरु, नैन उहै निजरूप निहारै॥
नाक उहै हरि नाकहि राखत, जीभ उहै जगदीश उचारै॥
हाथ उहै करिये हरिको कृत, पाँव उहै प्रभुके पथ धारै॥
शीश उहै करि श्याम समर्पण, सुंदर यूं सब कारज सारै॥८॥
सोवत सोवत सोइ गयो शठ, रोवत रोवत कैवेर रोयो॥
गोवत गोवत गोइ धऱ्यो धन, खोवत खोवत तैं सब खोयो॥
जोवत जोवत बीत गये दिन, बोवत बोवत तैं विष बोयो॥
सुंदर सुंदर राम भज्यो नहिं, ढोवत ढोवत बोझहि ढोयो॥९॥
देखत देखत देखत मारग, बूझत बूझत बूझत आयो॥
सूझत सूझत सूझ परी सब, गावत गावत गोविंद गायो॥
साधत साधत साध भयो पुनि, तावत तावत कंचन तायो॥
जागत जागत जागि पऱ्यो जब, सुंदर सुंदर सुंदर पायो॥१०॥

इति शब्दसारको अंग संपूर्ण॥ १८॥

---

१ गृह–घट। २ निर्दोष। ३ सत्य–प्रण। ४ शब्द। ५ बाजा। ६ कान। ७ वेदका सारांश। ८ सुवर्ण।

अथ भक्तिज्ञानमिश्रितको अंग १९.

इंदव छंद।

बैठत रामहि ऊठत रामहि, बोलत रामहि राम रह्यो है ॥
खावत रामहि पीवत रामहि, धामहिं रामहि राम गह्यो है ॥
जागत रामहि सोवत रामहि, जोवत रामहि राम लह्यो है ॥
देतहु रामहि लेतहु रामहि, सुंदर रामहि राम रह्यो है ॥ १ ॥
श्रोत्रहु रामहि नत्रहु रामहि, वक्त्रहु रामहि रामहि गाजै ॥
शीशहु रामहि हाथहु रामहि, पाँवहु रामहि रामहि छाजै ॥
पेटहु रामहि पीठिहु रामहि, रोमहु रामहि रामहि बाजै ॥
अंतर राम निरंतर रामहि, सुंदर रामहि राम बिराजै ॥ २ ॥
भूमिहु रामहि आपहु रामहि, तेजहु रामहि वायुहि रामे ॥
व्योमहु[1] रामहि चंदहु रामहि, सूरहु[2] रामहिं शीतहि घामे ॥
आदिहु रामहि अंतहु रामहि, मध्यहु रामहि पुर्ष रु वामे ॥
आजहु रामहि कालहु रामहि, सुंदर रामहि रामहि थामें॥ ३॥
देखहु राम अदेखहु रामहि, लेखहु राम अलेखहु रामे ॥
एकहु राम अनेकहु रामहि, शेषहु राम अशेषहु तामे ॥
मौनहु राम अमौनहु रामहि, गौनहु रामहि ठाम कुठामे ॥
बाहिर रामहि भीतर रामहि, सुंदर रामहि है जग जामे॥ ४ ॥
दूरहु राम नजीकहु रामहि, देशहु राम प्रदेशहु रामे ॥
पूरब रामहि पश्चिम रामहि, दक्षिण रामहि उत्तर धामे ॥
आगेहु रामहि पीछेहु रामहि, व्यापक रामहि हैं वन ग्रामे ॥
सुंदर राम दशोदिशि पूरण, स्वर्गहु राम पतालहु तामे ॥ ५ ॥
आपहु राम उपावत रामहि, भंजन राम सँवारन वामे ॥
दृष्टहु राम अदृष्टहु[3] रामहि, इष्टहु राम करै सब कामे ॥

---

१ आकाश-शून्य। २ सूर्य्यनारायण। ३ अदेख।

पूर्णहु राम अपूर्णहु रामहि, रक्त न पीत न श्वेत न श्यामे ॥
शून्यहु राम अशून्यहु रामहि, सुंदर रामहि नाम अनामे ॥६॥
इति भक्तिज्ञानमिश्रितको अंग संपूर्ण ॥ १९ ॥

अथ विपर्ययको अंग २०.

सवैया-(इकतीस मात्रात्मक)

श्रवणहु देखि सुनै पुनि नयनहु, जिह्वा सुनै नाशिकाबोल ॥
गुदा खाय इंद्रिय जल पीवै, बिनही हाथ सुमेरहि तोल ॥
ऊंच पाँव मुंडि नीचेकूं, तीनलोकमें बिचरत डोल ॥
सुंदरदास कहै सुन ज्ञानी, भलीभाँति या अर्थही खोल॥१॥
अंधा तीनलोककूं देखै, बैरा सुनै बहुतविधि नाद ॥
नकटा बास कमलकी लेवै, गूँगा करै बहुत संवाद ॥
ठुंठा पकरि उठावै पर्वत, पंगू करै निरत अह्लादं ॥
जो कोउ याको अर्थ विचारै, सुंदर सोई पावै स्वाद ॥२॥
कुंजरकूं कीरी गिलि बैठी, सिंहहि खाय अघानो स्याल ॥
मछरी अग्निमाँहिं सुख पायो, जलमें बहुत हुती बेहाल ॥
पंगु चढयो पर्वतके ऊपर, मृतकहि देखि डरानो काल ॥
जो को अनुभौवि होय सु जानै,सुंदर ऐसा उलटा ख्याल॥३॥
बूँदहि माहिं समुद्र समानो, राईमाँहिं समानो मेर ॥
पानीमाँहिं तुंबिका डूबी, पाहन तरत न लागी बेर ॥
तीन लोकमें भया तमासा, सूरज कियो सकल अँधेर ॥
मूरख होय सु अर्थहि पावै, सुंदर कहै शब्दमें फेर ॥ ४ ॥
मछरी बगलाकूं गहि खायो, मूषा खायो कारो सँाप ॥
सूवे पकरि बिलारी खाई, ताके मुवे गयो संताप ॥
बेटी अपनी मैया खाई, बेटे अपने खायो बाप ॥

१ लाल । २ नाक । ३ पहाड । ४ प्रसन्नता । ५ ज्ञानी ।

सुंदर कहै सुनौ हो संतो, तिनकूं कोउ न लाग्यो पाप॥५॥
देवमाँहिंते देवल प्रगट्यो, देवलमाँहिं प्रगट्यो देव ॥
शिष्य गुरुहि उपदेश न लाग्यो, राजा करै रंककी सेव ॥
वंध्यापुत्र पंगु इक जायो, ताकूं घर खोवनकी टेव ॥
सुंदर कहत सु पंडित ज्ञाता, जो कोइ याको जानै भेव॥६॥
कमलमाँहिंते पानी उपज्यो, पानीमाँहिते निपज्यो सूर ॥
सूरमाँहिं शीतलता उपजी, शीतलतामें सुख भरपूर ॥
ता सुखको क्षय होय न कबहूँ, सदा एकरस निकट न दूर ॥
सुंदर कहत सत्य यह यूँही, यामें रति न जानहु कूर ॥ ७ ॥
हंस चढ्यो ब्रह्माके ऊपर, गरुड चढ्यो पुनि हरिकी पीठ ॥
बैलं चढ्यो है शिवके ऊपर, सो हम दीठो अपनी दीठ ॥
देव चढ्यो पातीके ऊपर, जर्खे चढ्यो दायनि पर नीठ ॥
सुंदर एक अचंभा हूवा, पानीमाँही जरै अगीठ ॥ ८ ॥
कपरा धोबीकूं गहिं धोवै, माँटी बपुरी घडै कुम्हार ॥
सूइ विचारी दर्जिहि सीवै, सोना तावै पकरि सुनार ॥
लकरी बढ़ईकूं गहि छीले, खाल सु बैठी धमै लुहार ॥
सुंदरदास कहै सो ज्ञानी, जो कोइ याको करै विचार॥९॥
जा घरमाँहिं बहुत सुख पायो, ता घरमाँहिं बसै अब कौन॥
लागी सबै मिठाई खारी, मीठो लग्यो एक वह लौन ॥
पर्वत उडै रूइ थिर बैठी, ऐसो कोइक बाज्यो पौन ॥
सुंदर कहै न मानै कोई, ताते पकरी रहिये मौन ॥ १० ॥
रजनीमाँहिं दिवस हम देख्यो, दिवसमाँहिं देखी हम रात ॥
तेल भरयो संपूरण तामें, दीपक जरै जरै नहिं बातै ॥
पुरुष एक पानीमें प्रगट्यो, ता निगुराकी कैसी जात ॥
सुंदर सोई लहै अर्थकूं, जो नित करै पराई तात ॥ ११ ॥

१ सिखलाना । २ नाश । ३ देखा । ४ रात । ५ बत्ती ।

उनयो मेघ बढयो चहुँ दिशिमें, वर्षन लग्यो अखंडितधार ॥
बूडयो मेरु नदी सब सूखी, उर लाग्यो निशि दिन इक तार॥
काँसा परयो बीजली ऊपर, कीनो सब कुटुंब संहार ॥
सुंदर अर्थ अनूपम याको, पंडित होय सु करै विचार॥ १२॥

वाडीमाँहीं माली निपज्यो, हाली माहीं निपज्यो खेत ॥
हंसहि उलटि श्याम रँग लायो, भ्रमर उलटिकरि हूवो श्वेत॥
शशियर उलटि राहुकूं ग्रास्यो, सूर उलटि करि ग्रास्यो केत॥
सुंदर सुगराकूं तजि भाग्यो, निगुरां सेती बाँध्यो हेत॥ १३॥

अग्नि मथन करि लकरी काढी, सो वह लकरी प्राणअधार॥
पानी मथि करि घीउ निकास्यो, सो घृत खायो बारंबार॥
दूध दहीकी इच्छा भागी, जाकूं मथत सकल संसार ॥
सुंदर अब तौ भये सुखारे, चिंता रही न एक लगार॥ १४॥

पात्रमाँहिं झोली गहि राखै, योगी भिक्षा माँगन जाइ ॥
जागै जगत सोवही गोरख, ऐसा शब्द सुनावै आइ ॥
भिक्षा फिरै बहुत गुरु ताकूं, सो वही भिक्षा चेले खाइ ॥
सुंदर योगी युग युग जीवै, ता अँवधूत कि दूर बलाइ॥ १५॥

परधन हरै करै परनिंदा, परतियकूं राखै घरमाँहिं ॥
मांस खाय मदिरा पुनि पीवै, ताहि मुक्तिको संशय नाहिं॥
अकर्म गहै कर्म सब त्यागै, ताकी संगत पाप नशाहिं ॥
ऐसी करै सुसंत कहावै, सुंदर और उपजि मरि जाहिं॥ १६॥

निर्दय होइ तरै पशु घातिक, दयावंत बूडै भवमाँहिं ॥
लोभी लगै सबनकूं प्यारो, निर्लोभीकूं ठोहर नाहिं ॥
मिथ्यावादी मिलै ब्रह्मकूं, सत्य कहै ते यमपुरि जाहिं ॥
सुंदर धूपमाहिं शीतलता, जरत रहै सो बैठे छाहिं ॥ १७ ॥

---

१ काला भौंरा। २ निगोडा। ३ बर्तन। ४ योगी। ५ शराब। ६ संदेह। ७ कठोर। ८ कसाई। ९ संसार। १० झूँठ बोलनेवाला।

बढई चरखा भला सँवारयो, फिरने लाग्यो नीकी भात ॥
बहु सासूकूं कहि समुझावै, तू मेरे ढिग बैठी कात ॥
ताको तार न टूटै कबहूँ, प्यूनी घटै नहीं दिन रात ॥
सुंदर विधिसूं बनै जुलाहा, खासा निपजै ऊंची जात ॥ १८ ॥
माइ बाप तजि धी उमडानी, हरषत चली खसमके पास ॥
बहू बिचारी बडि बख्तावर, जाके कहे चलति है सास ॥
भाई खरो भलौ हितकारी, सब कुटुंबको कीनो नास ॥
ऐसीविधिँ घर बस्यो हमारो, कहि समुझावें सुंदरदास ॥ १९ ॥
घर घर फिरै कुँवारी कन्या, जने जनेसूं करती संग ॥
वेश्या सो तौ भई पतिव्रता, एक पुरुषके लागी अंग ॥
कलियुगमाँहीं सतयुग थाप्यौ, पापी उदय धर्मको भंग ॥
सुंदर कहत अर्थ सो पावै, जो नीकेकरि भजै अनंग ॥ २० ॥
विप्र रसोई करने लाग्यो, चौका भीतर बैठो आइ ॥
लकरीमाँहीं चूल्हा दीयो, रोटी ऊपर तवा चढाइ ॥
खिचरीमाँहीं हँडिया राँधी, सालन आँक धतूरा खाइ ॥
सुंदर जीमत अतिसुख पायो, अबके भोजन कियो अघाइ ॥२१॥
बैल उलटि नायककूं लाद्यो, वस्तु माँहिं भरि गूण अपार ॥
भलीभाँतिका सौदा कीया, आय दिशांतर या संसार ॥
नायिकिनी पुनि हर्षन लागी, मोहि मिल्यो नीको भरतार ॥
पूँजी जाइ साईंकूं सोंपी, सुंदर शिरते डारयो भार ॥ २२ ॥
बनियाँ एक बनजकूं आयो, परे तावरा भारी भैठ ॥
भली वस्तु कछु लीनी दीनी, खैंचि गठरियाँ बाँधी ऐंठ ॥
सौदा किया चल्यो पुनि घरकूं, लेखा कियो बीरितर बैठ ॥
सुंदर शाह खुशी अति हूवो, बैल गयो पूंजीमें पैठ ॥ २३ ॥

---

१ शौहर । २ खुश किस्मत । ३ तरह । ४ अनब्याही । ५ नाश । ६ द्रव्य । ७ कामदेव । ८ मंदार । ९ बनिजारा । १० शौहर । ११ बोझ । १२ पानी ।

पहराइत घर घुसे शाहके, रक्षा करने लागे चोर ॥
कोटवाल काठकरि बाँध्यो, छूटै नहीं साँझ अरु भोर ॥
राजा ग्राम छोडिके भाग्यो, हूवो सकल जगतमें शोर ॥
परजा सुखी भई नगरीमें, सुंदर कोई जुलम न जोर ॥ २४ ॥

राजा फिरै विपतिको मारयो, घर घर टुकडा माँगै भीख ॥
पाँव पियादो निशि दिन डोलै, घोडा चालि सकै नहिं वीख ॥
आक अरंड कि लकरी चूशै, छाँडे बहुत रस भरे ईख ॥
सुंदर कोउ जगतमें बिरलो, या मूरखकूं लावै सीख ॥ २५ ॥

पानी जरै पुकारै निशि दिन, ताकूं अग्नि बुझावै आइ ॥
मैं शीतल तू तपत भया क्यूं, बारंबार कहै समुझाइ ॥
मेरी झपट तोहिं जो लागै, तौ तू भी शीतल ह्वै जाइ ॥
कबहूं झरनी फेरि न उपजै, सुंदर सुखमें रहै समाइ ॥ २६ ॥

खसम परयो जोरुके पीछे, कह्यो न मानै सुँडीरांड ॥
जित तित फिरै भटकती यूंहीं, तैं तो कियो जगतमें भांड ॥
तौ हू भूख न भागी तेरी , गिल बैठी सारी मांड ॥
सुंदर कहै सीखें सुनि मेरी, अब तू घर घर फिरबो छांड ॥ २७ ॥

पैन्थी माँहिं पंथ चलि आयो, सो वह पंथ लख्यो नहिं जाहि ॥
वाही पंथ चल्यो उठि पंथी, निर्भय देश पहूँच्यो आइ ॥
तहाँ दुकाल परै नहिं कबहूँ, सदा सुभिक्ष रह्यो ठहराइ ॥
सुंदर दुःखि न कोई दीसै, अक्षय सुखमें रहै समाइ ॥ २८ ॥

एक अँहेरी वनमें आयो, खेलन लाग्यो भली शिकार ॥
करमें धनुष कमरमें तरकश, सावँज घेरे बारंबार ॥
मारयो सिंह व्याघ्र पुनि मारयो, मारी बहुत गनकी डार ॥

---

१ अंडी । २ लू । ३ ठण्डा । ४ बदमाश औरत । ५ । शिक्षा । ६ राही । ७ निडर । ८ निर्नाश । ९ शिकारी । १० शिकार ।

ऐसे सकल मारि घर लायो, सुंदर राजहि कियो जुहार ॥२९॥
शुकके वचन अमृतमय ऐसे, कोकिल धारि रहै मनमाहिं ॥
सारो सुनै भागवत कबहूँ, सारस तौ उपजावै नाहिं ॥
हंस चुगै मुक्ताफल अर्थहि, सुंदर मानसरोवर ताहिं ॥
काक कवीश्वर नीके जेते, सो सब दौरि करंकहि जाहिं॥३०॥
नष्ट होय द्विजभ्रष्ट क्रिया करि, कष्ट किये नहिं पावै ठौर ॥
महिमा सकल गई तिनकेरी, रहत पगनतर सब शिरमौर ॥
जित तित फिरै नहीं कछू आदर, तिनकूं कोउ न घालै कौर ॥
सुंदरदास कही समुझावै, ऐसी कोउ करो मति और ॥ ३१ ॥
शास्त्र रु बेद पुराण पढै किन, पुनि व्याकरण पढै जे कोइ ॥
संध्या करै गहै षट्कर्महि, गुण अरु काल विचारै सोइ ॥
सारा काम तबै बनिआवै, मनमें सब तजि राखै दोइ ॥
सुंदरदास कहै सुन पंडित, राम नाम विनु मुक्त न होइ ॥ ३२ ॥

श्लोक ।

श्लोकार्द्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रंथकोटिभिः ॥
ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः ॥ १ ॥

दोहा ।

पीवत रस विपरीत यह, ताहि होत निज ज्ञान ॥
बहुरि जन्म होवै नहीं, रहत सु पूर्ण प्रमान ॥ १ ॥

इति रहस्यार्थदीपिका सहित विपर्ययको अंग संपूर्ण ॥ २० ॥

अथ स्वरूपविस्मरणको अंग २१.

इंदव छन्द ।

जा घटकी उनहार है जैसिहि, ता घट चेतन तैसोहि दीसै ॥

---

१ सलाम–नजर । २ सुग्गा । ३ कोयल । ४ मोतीफल । ५ ब्राह्मण
६ पढाना–पढना–दान–देना–दानलेना–यज्ञ करना यज्ञ कराना ।

हाथिकि देहमें हाथिसों मानत, चींटिकी देहमें चींटि करीसै
सिंहकि देहमें सिंहसों मानत, कीशकि देहमें मानत कीसै ॥
जैसि उपाधिभई जहँ सुंदर, तैसोहि होइ रह्यो नख शीसै॥१॥
जैसेहि पावक काठके योगते, काठसो होइ रह्यो इक ठौरा ॥
दीरघ काठमें दीरघ लागत, चौरस काठमें लागत चौरा ॥
आपनो रूप प्रकाश करै जब, जारि करै तब औरको औरा ॥
तैसेहि सुंदर चेतन आपहि, आपकूँ जानत नाहिन बौरा ॥२॥

मनहर छन्द–प्रश्न।

अजर[१] अमर अविगत[२], अविनाशी अज[३];
कहत सकल जन, श्रुति अवगाहेते ॥
निर्गुण निर्मल अति, शुद्ध निरबंध नित;
ऐसेहि कहत और, ग्रंथनके थाहेते ॥
व्यापक अखंड एक, एक रस परिपूरण हैं;
सुंदर सकल रमि, रह्यो ब्रह्म ताहेते ॥
सहज सदा उदोत, याहीतै अचंभा होत;
आपहीकूं आप भूलि, गयो सो तौ काहेते ॥ ३ ॥

उत्तर।

जैसे मीन मांसकूं, निगलि जात लोभ लगि;
लोहको कंटक नाहिं, जानत उमाहेते ॥
जैसे कपि गागरमें, मूठ बाँधि राखै शठ;
छाँडि नाहिं देत सो तौ, स्वादहीके वाहेते ॥
जैस शुक नारियर, चंचू मारि लटकत;
सुंदर कहत दुःख, देत याहि लाहेते ॥
देहको सँयोग पाइ, इंद्रिनके वश परयो;
आपहीकूं आप, भूलि, गयो सुख चाहेते ॥ ४ ॥

---

१ बडा। २ जिसे बुढापा न हो। ३ व्याप्त। ४ अजन्मा–स्वयं उत्पन्न।

इंदव छन्द ।

ज्यूं कोइ मद्य पिये अति छाकत, नाहिं कछू सुधि है भ्रम ऐसो ॥
ज्यूं कोइ खाइ रहै ठग मूरिहि, जानै नहीं कछु कारण तैसो ॥
ज्यूं कोइ बालक शंकै उपावत, कंपि उठै अरु आनत भैसो ॥
तैसेहि सुंदर आपकूं भूलि सु, देखहु चेतन मानत कैसो ॥ ५ ॥
ज्यूं कोइ कूपमें झाँकि अलापत, ऐसिहि भाँति सु कूप अलापै ॥
ज्यूं जल हालत है लगि पौन, कहै भ्रमते प्रतिबिंबहि कांपै ॥
देहके प्राणके औ मनके कृत, मानत है सब मोहिकूं व्यापै ॥
सुंदर पेच पर्यो अतिशै करि, भूलिगयो भ्रमते ब्रह्म आपै ॥ ६ ॥
ज्यूं द्विज कोउक छाँडि महातम, शूद्र भयो करि आपकूं मान्यो ॥
ज्यूं कोउ भूपति सोवत सेज सु, रंक भयो सुपने महि जान्यो ॥
ज्यूं कोउ रूपकि राशि अत्यंत, कुरूप कहै भ्रम मैचक आन्यौ ॥
तैसेही सुंदर देहसो होयके, या ब्रह्म आपहि आप भुलान्यो ॥ ७॥
एकहि व्यापक वस्तु निरंतर, विश्व नहीं यह ब्रह्म विलासै ॥
ज्यूं नट मंत्रनसूं दृग बाँधत, है कछु औरहि औरहि भासै ॥
ज्यूं रजनीमहँ बूझ परै नहिं, ज्यों लगि सूरज नाहिं प्रकासै ॥
त्यूं यह आपहि आप न जानत, सुंदर है रह्यो सुंदरदासै ॥ ८ ॥

मनहर छन्द ।

इंद्रिनकूं प्रेरी पुनि, इंद्रिनके पीछे पर्यो;
आपनी अविद्या करि, आप तनु गह्यो है ॥
जोइ जोइ देहकूं, संकट आइ परै कछु;
सोइ सोइ मानै आप, याते दुःख सह्यो है ॥
भ्रमत भ्रमत कहुँ, भ्रमको न आवै अंत;
चिरंकाल बीत्यो पै, स्वरूपकूं न लह्यो है ॥

---

१ डर पैदा करना । २ डर । ३ चैतन्य । ४ शब्द करना । ५ राजा
६ शय्या । ७ हकबकाना । ८ सर्वदा । ९ बाजीगर । १० बहुत दिन ।

सुंदर कहत देखौ, भ्रमकी प्रबलताई;
भूतनमें भूत मिलि, भूत होइ रह्यो है ॥ ९ ॥
जैसे शुक नलिंका न, छाँडि देत पगनते;
जानै काहू और मोहिं, बाँधि लटकायो है ॥
जैसे कपि गुंजनंको, ढेर करि मानैं आग;
आगे धरि तपै कछु, शीत नं गमायो है ॥
जैसे कोऊ कारजकं, जात हुतो पूरबकूं;
भ्रमते उलटि फिरि, पश्चिमकूं आयो है ॥
तैसेहि सुंदर सब, आपहीकूं भ्रम भयो;
आपहीकूं भूलिकरि, आपही बँधायो है ॥ १० ॥
जैसे कोऊ कामिनीके, हिये पर चूसे बालैं;
सुपनेमें कहै मेरो, पुत्र कहूं गयो है ॥
जैसे काहू पुरुषके, कंठ हुती मणि सोही;
ढूँढत फिरत कछु, ऐसो भ्रम भयो है ॥
जैसे कोऊ वायु करि, बावरो बकत डोलैं;
औरहीकी और कहै, सुधि भूलि गयो है ॥
तैसेहि सुंदर निज, रूपकूं बिसारि देत;
ऐसो भ्रम आपहीकूं, आप करि लयो है ॥ ११ ॥
दिन दिन छिन छिन, होइ जात भिन्नं भिन्न;
देहके सँयोग पराधीन, सो रहतु है ॥
शीत लगै घाम लगै, भूख लगै प्यास लगै;
शोक मोह मति अति, खेदकूं लहतु है ॥
अंध भयो पंगु भयो, मूकहूँ बधिर भयो;
ऐसे मानि मांनि भ्रम, नदीमें बहतु है ॥

१ तत्त्व । २ कम्पा । ३ लाल करजनी । ४ लडका । ५ जुदाजुदा । ६ परवश । गूंगा । ८ बहरा ।

सुंदर अधिक मोहिं, याहिते अचंभा आहि,
भूलिकै स्वरूपकूं, अनाथ सो कहतु है ॥ १२ ॥
जैसे कोइ कहै मैं तौ, स्वपनेमें ऊंट भयो,
जागि करि देखै वही, मानुष स्वरूप है ॥
जैसे कोई राजा पुनि, सोवत भिखारी होइ;
आँख उघरै तौ महा, भूपनको भूप है ॥
जैसे कोउ भ्रमहूते कहै, मेरो शिर कहां;
भ्रमके गयेते जानै, शिर तद्रूपें है ॥
तैसेही सुंदर यह, भ्रम करिभूल्यो आप;
भ्रमके गयेते यह, आतमा अनूप है ॥ १३ ॥
जैसे काहु पोसंतीकी, पाग परी भूमि पर;
हाथ लैके कहै एक, पाग मै तौ पाई है ॥
जैसे शेखसली, मनोरथनको कियो घर;
कहै मेरो घर गयो, गागरि गिराई है ॥
जैसे काहू भूत लग्यो, बकत है आक बाक;
शुद्धि सब दूर भई, औरे मति आई है ॥
तैसे सुंदर यह, भ्रमकरि भूलो आप;
भ्रमके गयेते एक, आतमा सदाई है ॥ १४ ॥
आपही चेतन यह, इंद्रिन चेतनकरि;
आपही मगन होइ, आनँद बढायो है ॥
जैसे नर शीतकाल, सोवत निहाली वोढ;
आपही तपत होइ, आप सुख पायो है ॥
जैसे बाल लकरीकूं, घोडा करि डाक चढै;
आप असवार होइ, आपही कुदायो है ॥
तैसेही सुंदर यह, जडको सँयोग पाय;

---

१ वतीम । २ रंक-दरिद्री । ३ महाराज । ४ सदृश । ५ रजाई ।

आप सुखमानि मानि, आपही भुलायो है ॥ १५ ॥

कहूं भूल्यो कामरत, कहूं भूल्यो साधी जत;
कहूं भूल्यो गृहमध्य, कहूं वनवासी है ॥
कहूं भूल्यो नीचमानि, कहूं भूल्यो ऊंच मानि;
कहूं भूल्यो मोह बाँधि, कहूं तौ उदासी है ॥
कहूं भूल्यो मौन धारि, कहूं बकवाद करि;
कहूं भूल्यो मक्के जाइ, कहूं भूल्यो काशी है ॥
सुंदर कहत अहंकारहूते भूल्यो आप;
एक आवै रोन अरु, दूजे आवै हाँसी है ॥ १६ ॥

मैं बहुत दुःख पायो, मैं बहुत सुख पायो;
मैं अनंत पुण्य किये, मेरे अति पाप ॥
मैं कुलीन विद्यावंत, पंडित प्रवीन महा;
मैं तौ मूढ अकुलीन, मेरो नीच बाप है ॥
मैं हूं राजा मेरी आन, फिरै चहूं चक्रमाँहिं;
मैं सो रंक द्रव्यहीन, मोहिं तौ संताप है ॥
सुंदर कहत अहंकारहीते जीव भयो;
अहंकार गये यह, एक ब्रह्म आप है ॥ १७ ॥

देहही सु पुष्ट लगै, देहही दूबरी लगै;
देहहीकूं शीत लगै, देहहीकूं तावरो ॥
देहहीकूं तीर लगै, देहहीकूं तोप लगै;
देहकूं कृपाण लगै, देहहीकूं घावरो ॥
देहही स्वरूप लगै, देहही कुरूप लगै;
देहही यौवन लगै, देह वृद्ध दावरो ॥
देहहीकूं बाँधि हेत, आपविषे मानि लेत;
सुंदर कहत ऐसो, बुद्धिहीन बावरो ॥ १८ ॥

---

१ संन्यासी। २ अनगनित। ३ कुलहीन—नीचकुल। ४ तलवार।

इंदव छंद।

आपहि चेतन-ब्रह्म-अखंडित, सो भ्रमते कछु अन्य परेखै ॥
ढूँढत ताहि फिरै जितही तित, साधन योग बनावत भेखै ॥
औरहु कष्ट करै अतिशय करि, प्रत्यक-आतमतत्त्व न पेखै ॥
सुंदर भूलिगयो निजरूपहि, है कर कंकण दर्पण देखै ॥ १९ ॥
सूत गलेमहिं मेलि भयो द्विज, ब्राह्मण होइके ब्रह्म न जान्यौ ॥
क्षत्रिय होइके छत्र धरयो शिर, हय गज पैदलसूं मन मान्यो ॥
वैश्य भयो वपुंकी वर्य देखत, झूंठ प्रपंच बनीजहि ठान्यो ॥
शूद्र भयोमिलि शूद्र-शरीरहि, सुंदर आप नहीं पहिचान्यो ॥ २० ॥
ज्यूं रविकूं रवि ढूँढत है कहुँ, तप्त मिले तन शीत गमाऊं ॥
ज्यूं शशिकूं शशि चाहतहै पुनि, शीतल ह्वै करि तप्त बुझाऊं ॥
ज्यूं सनिपात भये नर टेरत, है घरमें अपने घर जाऊं ॥
त्यूं यह सुंदर भूलि स्वरूपहि, ब्रह्म कहै कब ब्रह्महि पाऊं ॥२१॥
आप न देखत है अपनो मुख, दर्पण काट लग्यो अतिथूला ॥
ज्यूं दृग देखतते रहि जात, भयो जबहीं पुतरी परिफूला ॥
छाय अज्ञान रह्यो अभि अंतर, जानि सकै नहिं आतम मूला ॥
सुंदर यूं उपज्यो मनके मल, ज्ञान विना निजरूपहि भूला ॥२२॥
दीन हुवो विललात फिरै नित, इद्रिनके वश छिलक छोलै ॥
सिंह नहीं अपनो बल जानत, जंबुक ज्यूं जितही तित डोलै ॥
चेतनता बिसराइ निरंतर, लै जडता भ्रम गाँठ न खोलै ॥
सुंदर भूलि गयो निज रूपहि, देह-स्वरूप भयो मुख बोलै ॥२३॥
मैं सुखिया सुखसेज सुखासन, हय जग भूमि महारजधानी ॥
हूं दुखिया दिन रैन मरूं दुख, मोहि विपत्ति परी नहिं छानी ॥
हूं अति उत्तम जाति बडो कुल, हूं अति नीच क्रिया कुलहानी ॥
सुंदर चेतनता न सँभारत, देहस्वरूप भयो अभिमानी ॥ २४ ॥

---

१ अत्यंत करके। २ डाल। ३ शरीर। ४ अवस्था। ५ सियार।

गर्भ विषे उतपत्ति भई जब, जन्म लियो शिशु शुद्धि न जानी ॥
वाल कुमार किशोर युवादिक, वृद्ध भयो अति बुद्धि नशानी ॥
जैसिहि भाँति भई वपुकी गति, तैसोहि होइ रह्यो यह पानी ॥
सुंदर चेतनता न सँभारत, देह स्वरूप भयो अभिमानी ॥ २५ ॥
ज्यूं कोई त्याग करे अपनो घर, बाहिर जाइके वेष बनावै ॥
मूँड मुँडाइ रु कान फराइ, बिभूति लगाइ जटाहु बढावै ॥
जैसोहि स्वांग करै वपुंको पुनि, तैसोहि मानत त्यूं हुइ जावै ॥
त्यूं यह सुंदर आप न जानत, भूलि स्वरूपहि और कहावै ॥ २६ ॥

इति स्वरूपविस्मरणको अंग संपूर्ण ॥ २१ ॥

अथ विचारको अंग २२.

मनहर छंद।

प्रथम श्रवण करि, चित्तहि एकाग्र धरि;
गुरु संत आगम कहै, सु उर धारिये ॥
दुतिय मनन वार, वाराहि विचारि देखै;
जोइ कछु सुनै ताहि, फिरके सँभारिये ॥
तृतियप्रकार निदिध्यासही जु नीके करि;
निस्संग विचारते, अपनपो सु टारिये ॥
तैसेही साक्षात याही, साधन करत होइ;
सुंदर कहत द्वैत-बुद्धिकूं निवारिये ॥ १ ॥
देखै तौ विचार करि, सुनै तौ विचार करि;
बोलै तौ विचार करि, करै तौ विचार है ॥
खाय तौ विचार करि, पीवै तौ विचार करि;
सोवै तौ विचार करि, जागै ऊ न टार; है;
बैठे तो विचार करि, उठै तौ विचार करि;

१ भस्म। २ शरीर। ३सावधान। ४चिन्तवन। ५ ध्यानावस्था। ६ क्लिविशा।

चलै तौ विचार करि, सोई मतसार है ॥
देइ तौ विचार करि, लेइ तौ विचार करि;
सुंदर विचार कर, याही निरधार है ॥ २ ॥
एकही विचार करि, सुख दुःख समं जाने;
एकही विचार करि, मलं सब धोई है ॥
एकही विचार करि, संसार-समुद्र तरै;
एकही विचार करि, पारंगत होई है ॥
एकही विचार करि, बुद्धि नानाभाव तजै;
एकही विचार करि, दूसरो न कोई है ॥
एकही विचार करि, सुंदर संदेह मिटै;
एकही विचार करि, एक ब्रह्म जोई है ॥ ३ ॥

इंदव छंद ।

रूपको नाश भयो कछु देखिय, रूप अरूपहि माहिं समावै ॥
रूपके मध्य अरूप अखंडितं, सो तौ कहूँ कछु जाय न आवै ॥
बीच अज्ञान भयो नवतत्त्वको, वेद पुराण सबै कोउ गावै ॥
सोइ विचार करै जब सुंदर, शोधतं ताहि कहूं नहिं पावै ॥ ४ ॥
भूमि सु तौ नहिं गंधकुं छाडत, नीर सु तौ रसते नहिं न्यारो ॥
तेज सु तौ मिलि रूप रह्यो पुनि, वायु सपर्स सदा सु पियारो ॥
व्योमे रु शब्द जुदे नहिं होवत, ऐसेहि अंतःकरण विचारो ॥
ए नवतत्त्व मिले इन तत्त्वनि, सुंदर भिन्न स्वरूप हमारो ॥ ५ ॥
क्षीण रु पुष्ट शरीरको धर्म जु, शीतहु उष्णं जरांमृत ठानै ॥
भूख-तृषा गुण प्राणकुं व्यापत, शोक रु होत उभै मन आनै ॥
बुद्धि विचार करै निशि-वासर, चित्त चितं सु अहं अभिमानै ॥
सर्वको प्रेरक सर्वको साक्षि जु, सुंदर आपकुँ न्यारोहि जानै ॥ ६ ॥

१ बराबर । २ पाप । ३ निराकार । ४ ढूँढना । ५ लगना । ६ आकाश । ७ गरम । ८ बुढापा । ९ मैं । १० साखी ।

एकहि कूपते नीरहि सिंचत, ईख अफीमहि अंब अनारा ॥
होत उहै जल स्वाद अनेकनि, मिष्ट कटूक खटा अरु खारा ॥
त्यूंही उपाधि सँयोगते आतम,दीसत आहि मिल्यो सविकारा ॥
काढि लिये सु विवेक विचारसुं, सुंदर शुद्धस्वरूपहि न्यारा ॥ ७ ॥
रूप पराको न जानि परै कछु, ऊठत है जिहि मूलते छानी ॥
नाभिविषे मिलि सप्त किये स्वर, पुर्ष सँयोग पंश्यति बखानी॥
नाद सँयोग हृदय पुनि कंठ जु, मध्यम याहि विचारते जानी॥
अक्षर भेद मिलै सुखद्वार सु, बोलत सुंदर वैखरिवानी ॥ ८ ॥
ज्यूं कोइ रोग भयो नरके घट, वैद्य कहै यह वायु विकारा ॥
कोउ कहै ग्रह आइ लगे ताते, पुण्य किये कछु होइ उबारा ॥
कोई कहै यह चूक परी कछु, देवनि दोष दियो निरधारा ॥
तैसेहि सुंदर तंत्रनिके मत, भिन्नहि भिन्न कहै जु विचारा ॥९॥
जे विषयातम पूरि रहै तिनकूं, रजनी महँ बादर छायो ॥
कोउ मुमुक्षु किये गुरुदेव तु, निर्भययुक्त जु शब्द सुनायो ॥
बादर दूर भये उनके पुनि, तारनसूं रजु सर्प दिखायो ॥
सुंदर शूर प्रकाशतहीं भ्रम, दूर भयो रजुको रजु पायो ॥ १० ॥
कर्म शुभाशुभकी रजनी पुनि, अर्ध तमोमय अर्ध उजारी ॥
भक्ति सु तो यह है अरुणोदय, अंत निशा दिन संधि विचारी॥
ज्ञान सु भानु उदै निशि वासर, वेद पुराण कहै जु पुकारी ॥
सुंदर तीनप्रभाव बखानत, यूं निहचै समुझै विधि सारी ॥ ११ ॥

मनहर छंद।

देहहीसो आप मानि, देहहीसो होइ रह्यो;
जड़ता अज्ञान तम, शूद्र सोइ जानिये ॥
इंद्रिनके व्यापारनि, अत्यन्त निपुण बुद्धि;

---

१ कडुवा। २ देखना। ३ जेवरी। ४ जेवरी। ५ रात्रि-निशा-यामिनी। ६ अंधकारमा। ७ सूर्योदय। ८ सूर्य्य। ९ प्रताप।

तम रज दुहूँ करि, वैश्यहु प्रमानिये ॥
अंतहकरणमाँहिं, अहंकार बुद्धि जाके;
रजगुण वर्धमान, क्षत्री पहिंचानिये ॥
सत्वगुण बुद्धि एक, आतमविचार जाके;
सुंदर कहत वही, ब्राह्मण बखानिये ॥ १२ ॥
आतमाके विषे देह, आइकर नाश होइ;
आतम अखंड सदा, एकही रहतु है ॥
जैसे साँप कंचुकीकुं, लिये रहै कोड दिन;
जीरन उतारि करि, नूतन गहतु है ॥
जैसे द्रुमके पत्र, फूल फल आइ होत;
तिनके गयेते द्रुम, औरहु लहतु है ॥
जैसे व्योममाँहि अभ्र, होइके बिलाइ जात,
ऐसोहि विचार करि, सुंदर कहतु है ॥ १३ ॥
खरीकी डलीसूं अंक, लिखत विचारियत;
लिखत लिखत वही, डली घिसि जातु है॥
लेखो समुझ्यो है जब, समुझ परी है तब;
जोइ कछु सही भयो, सोई ठहरातु है ॥
दारुहींसूं दारु मथि, प्रगट पावक भयो;
वहै दारु जारी पुनि, पावक समातु है ॥
तैसेही सुंदर बुद्धि, ब्रह्मको विचार करि;
करत करत वह, बुद्धिहू बिलात है ॥ १४ ॥
आपकूं समुझि देखौ, आपही सकल माहिं;
आपहीमें सकल, जगत देखियतु है ॥
जैसे व्योम व्यापक, अखंड परिपूरण है;
वादल अनेक नाना, रूप लेखियतु है ॥

---

१ कैंचालि । २ पुराना । ३ बादल । ४ लकडी ।

जैसे भूमि घट जल, तरंग पावक दीप;
वायुमें बबूरा सोई, विश्व पेखियतु है ॥
ऐसेंही विचारत, विचारहू विलीन होइ;
सुंदरही सुंदर, रहत पेखियतु है ॥ १५ ॥
देहको सँयोग पाइ, जीव ऐसो नाम भयो;
घटके सँयोग मठाकाशही, कहायो है ॥
ईश्वर सकल, बिराट्में विराजमान;
मठके सँयोग मठाकाश, नाम पायो है ॥
महाकाशमाँहिं सब, घट मठ देखियत;
बाहिर भितर एक, गगँन समायो है ॥
तैसेही सुंदर ब्रह्म, ईश्वर अनेकजीव;
द्विविध उपाधि भेद, ग्रंथनमें गायो है ॥ १६ ॥

प्रश्न ।

देह दुख पावै किधौं? इंद्रिय दुख पावै किधौं?
प्राण दुःख पावैं किधौं? लहै न अहारकूं?
मन दुःख पावै किधौं? बुद्धि दुःख पावै किधौं?
चित्त दुःख पावै किधौं? दुःख अहंकारकूं?
गुण दुःख पावै किधौं? श्रोत्र दुःख पावै किधौं?
प्रकृति दुःख पावै किधौं? पुरुष आधारकूं?
सुंदर पूछत कछु, जानि न परत तातें।
कौन दुःख पावै गुरु, कहो या विचारिकूं ॥ १७ ॥

उत्तर ।

देहकूं तौ दुःख नाहिं, देह पंचभूतनको;
इंद्रिनकूं दुःख नाहिं, दुःख नाहिं प्राणकूं ॥

---

१ बवडर । २ भारी–ब्रह्माण्ड–परमेश्वरका रूप । ३ आकाश ।

मनहूंकूं दुःख नाहिं, बुद्धिहूकूं दुःख नाहिं;
चित्तहूकूं दुःख नाहिं, नाहिं अभिमानकूं ॥
गुणनकूं दुःख नाहिं, श्रोत्रहूकूं दुःख नाहिं;
प्रकृतिकूं दुःख नाहिं, दुःख न पुमानकूं ॥
सुंदर विचारि ऐसे, शिष्यसुं कहत गुरु;
दुःख एक देखियत, बीचके अज्ञानकूं ॥ १८ ॥
पृथिवि भाजन अंग, कनक कुंडल पुनि;
जलहि तरंग दोऊ, देखि करि मानिये ॥
कारण कारज एतो, प्रगटही स्थूलरूप;
ताहीते नजरमाँहिं, देखि करि आनिये ॥
पावक पवन व्योम, एतो, नहिं देखियत;
दीपक बघूरा अभ्र, प्रत्यक्ष बखानिये ॥
आतमा अरूप अति, सूक्ष्मते सूक्ष्म है;
सुंदर कारण ताते, देहमें न जानिये ॥ १९ ॥
जैन मत उहै जिन, राजकूं न भूलि जाय;
दान तप शील सत्य, भावनाते तरिये ॥
मन वच काय शुद्ध, सबसूं दयालु रहै;
दोषबुद्धि दूरि करि, दया उर धरिये ॥
बौध नाम तब जब, मनको निरोध होइ;
बोधके विचार शोध, आतमाको करिये ॥
सुंदर कहत ऐसे, जीवतही मुक्ति होइ;
मुएते मुकति कहै, ताकूं परिहरिये ॥ २० ॥
देह वोर देखिये तौ, देह पंचभूतनको;
ब्रह्मा अरु कीट लग, देहही प्रधान है ॥
प्राण वोर देखिये तौ प्राण सबहीके एक;

---

१ शरीर-पुरुष । २ इच्छा विचार । ३ रोकना । ४ मुख्य ।

क्षुधा पुनि तृषा दोऊ, व्यापत समान है ॥
मन वोर देखिये तौ, मनको स्वभाव एक;
संकल्प विकल्प करै, सदाही अज्ञान है ॥
आतमविचार किये, आतमाही दीसै एक ॥
सुंदर कहत कोऊ, देखिये न आन है ॥ ३१ ॥

इति विचारको अंग संपूर्ण ॥ २२ ॥

अथ सांख्यज्ञानको अंग २३.

मनहर छंद।

क्षिति[2] जल पावक, पवन नभ[3] मिलि करि,
शब्द अरु सपरस, रूप रस गंध जू ॥
श्रोत्र त्वक[4] चक्षु[5] घ्राण[6], रसना[7] रसको ज्ञान;
वाक[8] पाणि[9] पाद पायु[10] उपस्थहि[11] बंध जू ॥
मन बुद्धि चित्त अहंकार, ये चौवीश तत्त्व;
पंचविंश जीवतत्त्व, करत है द्वंद्व जू ॥
षटविंश जानु ब्रह्म, सुंदर सु निहकर्म;
व्यापक अखंड एक, रस निरसंध जू ॥ १ ॥
श्रोत्र दिग त्वक वायु, लोचन प्रकाश रवि;
नासिका अश्विनि जिह्वा, वरुण वखानिये ॥
वाक अग्नि हस्त इंद्र, चरण उपेंद्र बल;
मेढ प्रजापति गुदा, मृत्युहूकूं ठानिये ॥
मन चंद्र बुद्धि विधि, चित्त वासुदेव आहि;
अहंकार रुद्रको, प्रभाव करि मानिये ॥
जाकी सत्ता पाइ सव, देवता प्रकाशत हैं,
सुंदर सो आतमाहिं, न्यारो करि जानिये ॥ २ ॥

---

१ प्रवृत्ति-निवृत्ति। २ पृथ्वी। ३ आकाश। ४ त्वचा। ५ नेत्र
६ नासिका। ७ जिह्वा। ८ वाणी। ९ हाथ। १० गुदा। ११ गुप्तेन्द्रिय।

इंदव छंद ।

श्रोत्र सुनैं दृग देखत हैं रसना, रस घ्राण सुगंध पियारो ॥
कोमलता त्वक जानत है पुनि, बोलत है मुख शब्द उचारो ॥
पाणिग्रहै पद गौन करै मल, मूत्र तजै उभैयो अध-द्वारो ॥
जासु प्रकाश प्रकाशत हैं सब, सुंदर सोइ रहै घट न्यारो ॥३॥
बुद्धि भ्रमै मन चित्त भ्रमै, अहंकार भ्रमै कछु जानत नाहीं ॥
श्रोत्र भ्रमै त्वक घ्राण भ्रमै, रसना दृग देखि दशोंदिशि जाहीं ॥
वाक भ्रमै कर पाद भ्रमै, गुदद्वार उपस्थ भ्रमै कहु काहीं ॥
तेरे भ्रमाये भ्रमै सबही पुनि, सुंदर क्यूं तु भ्रमै उनमाँहीं ॥४॥
बुद्धिको बुद्धि रु चित्तको चित्त, अहंको अहं मनको मन वोई ॥
नैनको नैनहि बैनको बैनहि, कानको कान त्वचा त्वक होई ॥
घ्राणको घ्राणहि जीभको जीभहि, हाथको हाथ पगौ पग दोई ॥
शीशका शीशहि प्राणको प्राणहि, जीवको जीवहि सुंदर सोई ॥५॥

मनहर छंद ।

प्रश्न ।

कैसेके जगत यह, रच्यो है जगतगुरु;
मोसुं कहौ प्रथमहि, कौन तत्त्व कीनो है ?
पुरुष कि प्रकृति कि, महत्तत्त्व अहंकार;
किधौं उपजाय तम, रज-सत्त्व तीनों है ?
किधौं व्योम वायु तेज, आप कै अवनि कीन्ह;
किधौं पंचविषय पसार, करि लीनो है ?
किधौं दशइंद्री किधौं, अंतहकरण कीन्ह;
सुंदर कहत किधौं, सकल विहीनो है ॥ ६ ॥

उत्तर ।

ब्रह्मते पुरुष अरु, प्रकृति प्रगट भई,

---

१ हाथ । २ दोनों । ३ बिना-रहित ।

प्रकृतिते महत्तत्त्व, पुनि अहंकार है ॥
अहंकारहूते तीन-गुण सत्त्व रज तम;
तमहूते महाभूत, विषय पसार है ॥
रजहूते इंद्री दश, पृथक पृथक भई;
सत्त्वहूते मन आदि, देवता विचार है ॥
ऐसे अनुक्रम करि, शिष्यहूं कहत गुरु;
सुंदर सकल यह मिथ्या भ्रम-जार है ॥ ७ ॥

प्रश्न ।

मेरो रूप भूमि है कि ? मेरो रूप अप है कि ?
मेरो रूप तज है कि ? मेरो रूप पौन है ?
मेरो रूप व्योम है कि ? मेरो रूप इंद्री दश ?
अंतःकरण है कि ? बैठो है गौन है ?
मेरो रूप त्रिगुण कि ? अहंकार महत्तत्त्व ?
प्रकृतिपुरुष किधौं ? बोलै है कि मौन है ?
मेरो रूप स्थूल है कि ? सूक्षम है मेरो रूप ?
सुंदर पूछत गुरु ? मेरो रूप कौन है ॥ ८ ॥

उत्तर ।

तू तौ कछु भूमि नाहिं, अप तेज वायु नाहिं;
व्योम पंच विष नाहिं, सो तौ भ्रमकूप है ॥
तू तौ कछु इंद्रिय रु, अंतःकरण नाहिं;
तीनगुण तू तौ नाहिं, न तौ छांहिं धूप है ॥
तू तौ अहंकार नाहिं, पुनि महत्तत्त्व नाहिं;
प्रकृतिपुरुष नाहिं, तू तौ स्वअनूप है ॥
सुंदर विचार ऐसें, शिष्यसूं कहत गुरु;
नाहिं नाहिं कहत रहैं, सोई तेरो रूप है ॥९॥

---

१ क्रमक्रमसे-रीतिवार । २ चलता ।

तेरो तौ स्वरूप है, अनूप चिदानंद घन;
देह तौ मलीन जड, याविवेक कीजिये ॥
तू तौ निहसंग निराकार, अविनाशी अज;
देह तौ विनाशवंत, ताहि नहिं धीजिये ॥
तू तौ पट उरमी रहित, सदा एक रस;
देहकी विकार सब, देह शिर दीजिये ॥
सुंदर कहत यूं विचारि, आपु भिन्न जानि;
परकी उपाधि कहा, आप खैंच लीजिये ॥ १० ॥

देहही नरकरूप, दुःखको न वारापार;
देहही है स्वर्गरूप, झूंठो सुख मान्यो है ॥
देहहीकूं बंध-मोक्ष, देह अपरोक्ष प्रोक्ष;
देहहीके क्रिया कर्म, शुभाशुभ ठान्यो है ॥
देहहीमें और देह, सुखी है विलास करै;
ताहीकूं समझे बिना, आतमा बखान्यो है ॥
दोउ देहते अलिप्त, दोउको प्रकाशक है;
सुंदर चैतन्य रूप, न्यारो करि जान्यो है ॥ ११ ॥

देह हलै देह चलै, देहहीसूं देह मिलै;
देह खाई देह पीवै, देहही भरत है ॥
देहही हिमालय गलै, देहही पावक जलै;
देह रणमाहिं जूझै, देहही परत है ॥
देहही अनेक कर्म, करत विविधभांति;
चमककी सत्ता पाइ, लोह ज्यूं फिरत है ॥
आतमा चैतन्यरूप, व्यापक साक्षी अनूप;
सुंदर कहत सो तौ, जन्मै न मरत है ॥ १२ ॥

---

१ प्रत्यक्ष-सामने। २ गुप्त-अप्रत्यक्ष। ३ अलग। ४ साखी।

प्रश्नोत्तर।

देह यह किनको है ? देह पंचभूतनको;
पंचभूत कौनतें हैं ? तामस हंकारतें ॥
अहंकार कौनतें है ? जाणूँ महत्तत्व कहैं;
महत्तत्त्व कौनतें है ? प्रकृति मँझारतें ॥
प्रकृति सो कौनतें ? पुरुष है जाको नाम;
पुरुष सो कौनतें है ? ब्रह्म निराधारतें ॥
ब्रह्म अब जान्यो हम? जान्यो है तौ निश्चै कर,
निश्चै हम कियो है तौ ? चुप मुखद्वारतें ॥ १३ ॥

पूर्ववत्।

एक घट माँहिं तौ सुगंध, जल भरि राख्यो;
एक घटमाँहिं तौ दुर्गंध, जल भर्यो है ॥
एक घटमाँहिं पुनि, गंगोदक[2] राख्यो आनि
एक घटमाँहिं आनि, मदिराहू कर्यो है ॥
एक घृत एक तेल, एकमाँहिं नवनीत;
सबहीमें सविताको[3], प्रतिबिंब पर्यो है ॥
तैसेही सुंदर ऊंच-नीच-मध्य एक ब्रह्म;
देह भेद देखि भिन्न, भिन्न नाम धर्यो है ॥ १४ ॥

भूमिपर अप[4] अपहूके, परे पावक है;
पावकके परे पुनि, वायुहू बहत है ॥
वायू परे व्योम व्योमहूके, परे इंद्री दश,
इंद्रिनके परे, अंतःकरण रहत है ॥
अंतहकरण पर, तीनोंगुण अहंकार;
अहंकार पर, महत्तत्वकूं लहत है ॥

१ विश्वास। २ गंगाजीका जल। ३ सूर्य। ४ पानी।

महत्तत्त्व पर मूलमाया-माया परब्रह्म;
ताहिते परातपर, सुंदर कहत है ॥ १५ ॥
भूमि तौ विलीन[1] गंध, गंध तो विलीन अप;
अपहू विलीन रस, रस तेज खात है ॥
तेज रूप वायु, वायुही सुपर्स लीन;
सो परस व्योम शब्द, तमही बिलात है ॥
इंद्री दश रज मन, देवता विलीन सत्त्व;
तीनगुण अहं महत्तत्त्व, गलि जात है ॥
महत्तत्त्व प्रकृति रु, प्रकृति पुरुष लीन;
सुंदर पुरुष जाइ, ब्रह्ममें समात है ॥ १६ ॥
आतमा अचल शुद्ध, एकरस रहै सदा;
देह व्यवहारनमें, देहहीसों जानिये ॥
जैसे शशिमंडल[3] अभंग[4], नहिं भंग होइ;
कला आवै जाइ घट, बढ सो बखानिये ॥
जैसे द्रुम स्थिर नदीहके, तट देखियत;
नदीके प्रवाह[5]माँहिं, चलत सो मानिये ॥
तैसे आतमा अनंत, देहसों प्रकाश करै;
सुंदर कहत यूं, विचारि भ्रम भानिये ॥ १७ ॥
आतमा शरीर दोऊ, एकमेक देखियत;
जबलगि अंतहकरणमें, अज्ञान ॥
जैसे अँधियारी रैन, घरमें अँधेरो होय;
आँखिनको तेज ज्यूंको, त्यूंही विद्यमान[6] है ॥
यद्यपि अँधेरेमाँहि, नैनसूं न सूझे कछु;
तदपि अँधेरे सूं अलेप[7], सो बखान है ॥
सुंदर कहत तौलौं. एकमेक जानियत;

१ मिलाहुआ । २ माया । ३ चन्द्रमण्डल । ४ अटूट । ५ धारा । ६ मौजूद ।
जिसे तीनों गुण न व्यापैं ।

जौलौं नहिं प्रगट, प्रकाश ज्ञानभान है ॥ १८ ॥
देहजड देवलमें आतम चेतनदेव;
याहीकूं समुझि करि, यासूं मन लाइये ॥
देवलकूं विनशतें, बेर नहिं लागै कछु;
देव अभंग सदा, देवलमें पाइये ॥
देवकी शकति करि, देवलकी पूजा होत;
भोजन विविधभाँति, भोगहू लगाइये ॥
देवलते न्यारो देव, देवलमें देखियत;
सुंदर विराजमान, और कहाँ जाइये ॥ १९ ॥
प्रीतिसी न पाती कोऊ प्रेमसे न फूल और;
चित्तसो न चंदन, सनेह सो न सेहरा ॥
हृदय सो न आसन, सहजसो न सिंहासन;
भावसी न सेज और, शून्य सो न गेहरा ॥
शीलसो न स्नान अरु, ध्यानसो न धूप और;
ज्ञानसो न दीपक, अज्ञान तम केहरा ॥
मनसी न माला कोऊ, सोहं सो न जाप और;
आतमासो देव नाहिं, देहसो न देहरा ॥ २० ॥
श्वासोश्वास रातिदिन, सोहं सोहं होय जाय;
याही माला वारंवार, दृढके धरतु है ॥
देह परे इंद्री परे, अंतहकरण परे;
एकही अखंड जाप, तापकूँ हरतु है ॥
काष्ठकी रुद्राक्षकी रु, सूतहूकी माला और;
इनके फिराये कछु, कारज सरतु है ॥
सुंदर कहत ताते, आतमा चैतन्यरूप;
आपको भजन सो तो, आपही करत है ॥ २१ ॥

---

१ नाश। २ शक्ति। ३ आकाश। आत्मज्ञान। ५ पीडा।

क्षीर नीर मिले दोऊ, एकठेही होइ रहै;
नीर जैसे छाडि हंस, क्षीरकूं गहतु है ॥
कंचनमें और धातु, मिलि करि बनि परयो;
शुद्ध करि कंचन, सुनार ज्यूं लहतु है ॥
पावकहूं दारु मध्य, दारुहूसो होइ रह्यो;
मथि करि काढै वह, दारुकूं दहतु है ॥
तैसेहि सुंदर मिल्यो, आतमा अनातमा जू,
भिन्न भिन्न करै सो तौ, सांख्यही कहतु है ॥ २२ ॥

अन्नमयकोश सो तौ, पिंड है प्रगट यह;
प्राणमयकोश पंच, वायू ही बखानिये ॥
मनोमयकोश पंच, कर्मइंद्रि है प्रसिद्ध;
पंचज्ञान इंद्रिय, विज्ञानमय जानिये ॥
जाग्रतें स्वपन विषे, कहिये चत्वार कोश;
सुषुपतिमाँहिं कोश, आनँदमें मानिये ॥
पंचकोश आतमाको, जीव नाम कहियत;
सुंदर शंकर-भाष्य, सांख्य ये बखानिये ॥ २३ ॥

जाग्रत-अवस्था जैसे, सदनमें बैठियत;
तहाँ कछु होइ-ताहि, भलीभाँति देखिये ॥
स्वपन-अवस्था जैसे, देहरीमें बैठे जाइ;
रहे जोई वहाँ ताकी; वस्तु सब लेखिये ॥
सुषुपति भोंहेरेमें, बैठते न सूझ परै;
वहाँ अंधघोर तहाँ, कछुही न पेखिये ॥
व्योम अनुस्यूत घर, देहरे भोंहरे माँहिं;
सुंदर साक्षीस्वरूप, तुरिया विशेषिये ॥ २४ ॥

---

१ काष्ठ। २ अलग अलग। ३ पेट। ४ प्राण-पान-समान-उदान-व्यान। जागना। ६ किञ्चित् निद्रा। ७ भुइँधरा। ८ चतुर्थ अवस्था।

जाग्रतके विषे जीव, नैननमें देखियत;
विविधव्योहार सब, इंद्रिनि गहतु है ॥
स्वपनेहु माँहिं पुनि, वैसेही व्योहार होत;
नैननते आइ करि, कंठमें रहतु है ॥
सुषुपति हृदयमें, विलीन होइ जात सब;
जाग्रत सुपनकी तौ, सुधि न लहतु है ॥
तीनहू अवस्थाकूंहीं, साक्षी जब जानै आप;
तुरिया स्वरूप यह, सुंदर कहतु है ॥ २५ ॥

इंदव छन्द ।

भूमिते सूक्षम आपकुँ जानहु, आपते सुक्षम तेजको अंगा ॥
तेजसे सूक्षम वायु बहे नित, वायुते सूक्षम व्योम उतंगा ॥
व्योमते सूक्षम है गुण तीन, तिहूँते अहं महत्तत्त्व प्रसंगा ॥
ताहिते सूक्षम मूलप्रकृत्ति जु, मूलते सुंदर ब्रह्म अभंगा ॥ २६ ॥
ब्रह्म निरंतर व्यापक अग्नि, अरूप अखंडित है सबमाहीं ॥
ईश्वर पावक राशि प्रचंड जु, संग उपाधि लिये बरताही ॥
जीव अनंत मशाल चिराग सु, दीप पतंग अनेक दिखाहीं ॥
सुंदर द्वैत उपाधि मिटै जब, ईश्वर जीव जुदे कछु नाहीं ॥ २७ ॥
ज्यूं नर पावक लोह तपावत, पावक लोह मिले सु दिखाहीं ॥
चोट अनेक परै घनकी शिर, लोह बधै कछु पावक नाहीं ॥
पावक लीन भयो अपने घर, शीतल लोह भयो तब ताहीं ॥
त्यू यह आतम देह निरंतर, सुंदर भिन्न रहै मिलि माहीं ॥ २८ ॥
आतम चेतन शुद्ध निरंतर, भिन्न रहै कहुं लिप्त न होई ॥
है जड चेतन अंतहकर्ण जु, शुद्ध अशुद्ध लिये गुण दोई ॥
देह अशुद्ध मलीन महाजड, हालि न चालि सकै पुनि होई ॥
सुंदर तीन विभाग किये बिन, भूलि परै भ्रमते सब कोई ॥ २९

१ महीन। २ पाखी। ३ लीन।

सवैया-(इकतीसमात्रिक) ।

ब्रह्म अरूप अरूपी पावक, व्यापक युगल न दसित रंग ॥
देह दारुते प्रगट देखियत, अंतःकरण अग्नि द्वय अंग ॥
तेज प्रकाश कल्पना तौलगि, जौलगि रहै उपाधि प्रसंग ॥
जहँके तहाँ लीन पुनि होई, सुंदर दोई सदा अभंग ॥ ३० ॥
देह शरीव तेल पुनि मारुत, बाती अंतःकरण विचार ॥
प्रगट ज्योति यह चेतन दीसै, जाते भयो सकल उजियार ॥
व्यापक अग्नि मथन करि जोए, दीपक बहुतभाँति विस्तार ॥
सुंदर अद्भुत रचना तेरी, तूही एक अनेक प्रकार ॥ ३१ ॥
तिलमें तेल दूधमें घृत है, दारुमाँहिं पावक पहिचान ॥
पुहपमाँहिं ज्यूं प्रगट बासना, ईखमाँहिं रस कहत बखान ॥
पोसतिमाँहिं अफीम निरंतर, वनस्पतीमें शहद प्रमान ॥
सुंदर भिन्न मिल्यो पुनि दसित, देहमाँहिं यूं आतम जान ॥ ३२॥

सवैया-(बत्तीसमात्रिक) ।

जाग्रत स्वप्न सुषुपति तीनूं, अंतः करण अवस्था पावै ॥
प्राण चलै जाग्रत अरु स्वप्न, सुषुपतिमें कछु वे न रहावै ॥
प्राण गयेतें रहै न कोऊ, सकल देसतें ठाढ विलावै ॥
सुंदर आतमतत्त्व निरंतर, सो तौ कितहूँ जाय न आवै॥ ३३॥

सवैया-(एकतीसमात्रिक)

पंद्रहतत्त्व स्थूल कुंभमें, सूक्ष्म लिंग भरचो ज्यूं तोयं ॥
इहाँ जीव आभास जानु उत, ब्रह्म इंद्र प्रतिबिंब जु दोय ॥
घट फूटे जल गयो विलय है, अंतःकरण कहै नहीं कोय ॥
तब प्रतिबिंब मिलै शशिही महि, सुंदर जीव ब्रह्ममय होय॥ ३४॥

---

१ दीया । २ पवन । ३ घी । ४ पुष्प । ५ शेलखा । ६ भारी घडा । ७ जल ।
८ परछाई ।

मनहर छन्द ।

जैसे व्योम कुंभके, बाहिर रु भीतर है;
कोऊ नर कुंभकूं, हजारकोश ले गयो ॥
ज्यूंही व्योम इहाँ त्यूंही, उहाँ पुनि है अखंड;
इहाँ न बिछोह न, उहाँ मिलापके भयो ॥
कुंभ तौ नयौ पुरानौ, होइके विनशि जाइ;
व्योम तौ न है पुरानौ, न तौ कछु है नयो ॥
तैसेही सुंदर देह, आवै रहै नाश होइ;
आतमा अचल, अविनाशी है अनामियो[1] ॥ ३ ॥
देहके सँयोगहीते, शीत लगै घाम लगै;
देहके सँयोगहीते, क्षुधा तृषा पौनकूं ॥
देहके संयोगहीते, कटुक[2] मधुर स्वाद;
देहके सँयोगकहै, खाटो खारो लौनकूं ॥
देहके सँयोग कहै, मुखते अनेक बात;
देहके सँयोगही, पकारि रहै मौनकूं ॥
सुंदर देहके योग, दुःख मानै सुख मानै,
देहको सँयोग गये, दुःख सुख कौनकूं ॥ ३६ ॥
आपकी प्रशंसा सुनि, आपही खुशाल होइ;
आपहीकी निंदा सुनि, आप मुरझाई है ॥
आपहीकूं सुख मानि, आप सुख पावत है;
आपहीकूं दुःख मानि, आप दुःख पाई है ॥
आपहीकी रक्षा करै, आपहीकी घात करै;
आपही हत्यारो होइ, गंगा जाइ न्हाई है ॥
सुंदर कहत ऐसे, देहहीकूं आप मानि;
निजरूप भूलिके, करत हाइ हाइ है ॥ ३७ ॥

॥ इति सांख्यज्ञानको अंग संपूर्ण ॥ २३ ॥

१ रोगरहित । २ कडुवा ।

अथ अपने भावको अंग २४.

इंदव छंद।

एकहि आपनु भाव जहाँ तहँ, बुद्धिके योगते विभ्रम भासै ॥
जो यह क्रूर तु क्रूर वही, पुनि याके खसेते वहाँ पुनि खासै ॥
जो यह साधु तु साधु वहै,पुनि याके हँसेते उहां पुनि हाँसै॥
जैसहि आप करै मुख सुंदर, तैसहि दर्पण माँहिं प्रकाशै॥ १॥

मनहर छंद।

जैसे श्वान काचके, सदेन[1] मध्य देखि और;
भूँकि भूँकि मरत करत, अभिमान[2] जू ॥
जैसे गज फटिक, शिलातुं लरि तोरै दंत;
जैसे सिंह कूपमाहिं, उझक भुलान जू ॥
जैसे कोउ फेरि खात, फिरत सु देखै जग;
तैसेही सुंदर सब, तेरोही अज्ञान जू ॥
अपनोही भ्रम सो तौ, दूसरो दिखाई देत;
आपकूं विचारे कोऊ, देखिये न आन जू ॥ २ ॥
नीच ऊंच भलो बुरो, सज्जन दुर्जन पुनि;
पंडित मूरख शत्रु, मित्र रंकराव है ॥
मान-अपमान पुण्य, पाप सुख-दुःख सोऊ;
स्वरग-नरक बंध, मोक्षहूको चाव है ॥
देवता-असुर भूत, प्रेत कीट[3]-कुंजरहूँ[4];
पशु अरु पक्षी श्वानँ[5]; शूकर विलाव है ॥
सुंदर कहत यह, एकही अनेक रूप;
जोइ कछु देखिये सो, अपनोहि भाव है ॥ ३ ॥

---

१ घरके भीतर। २ अहंकार। ३ कीडा। ४ नाग–हाथी–वारण। ५ कुत्ता.

याहीके जागत काम, याहीके जागत क्रोध;
याहीके जागत लोभ, येही मोह माता है ॥
याहीको तौ याही वैरी, याहीको तौ याही मित्र;
याकूं याही सुख देत; याही दुःखदाता है ॥
याही ब्रह्मा याही रुद्र, याही विष्णु देखियत;
याही देव दैत्य यक्ष, सकल संघाता है ॥
याहीको प्रभावसो तौ, याहीकूं दिखाइ देत;
सुंदर कहत येही, आतमा विख्यातो है ॥ ४ ॥
याहीको तौ भाव याकूं, शंक उपजावत है;
याहीको तौ भाव याही, निःशंक करतु है ॥
याहीको तौ भाव याकूं, भूत प्रेत होइ लगै;
याहीको तौ भाव याकी, कुमति हरतु है ॥
याहीको तौ भाव याही, वायुको बधूरा करै;
याहीको तौ भाव याही, थिरके धरतु है ॥
याहीको तौ भाव याकूं, धारमें बहाइ देत;
सुंदर याहीको भाव, याहिले तरतु है ॥ ५ ॥
आपहीको भाव सो तौ, आपकूं प्रगट होत;
आपही आरोप करि, आप मन लायो है ॥
देवी अन्य देव कोऊ, भावकूं उपासै ताही;
कहै मैं तौ पुत्र धन, इनहीते पायो है ॥
जैसे श्वान हाडकूं, चचोरि करि मानै मोद;
आपहीको मुख फोरि, लोहू चाटि खायो है ॥
तैसेही सुंदर यह, आपुही चेतन आहि,
अपनें अज्ञान करि, औरसूं बँधायो है ॥ ६ ॥

---

१ फल। २ प्रकट। ३ मनकी भावना-कामना। ४ दुष्टबुद्धि। ५ पवन-हवा-समोर। ६ प्रसन्नता।

इंदव छंद ।

नीचेते नीचे रु ऊँचेते ऊपर, आगेते आगे रु पीछेते पीछो ॥
दूरते दूर नजीकते नेरेहु, आडेते आड़ोहि तीछेते तीछो ॥
बाहिर भीतर भीतर बाहिर, ज्यूं कोउ जानत त्यूं कर ईछो ॥
जैसोहि आपनो भावहै सुंदर, तैसोहि है दृग खोलिके पीछो ॥७॥
आपने भावते सूरसो दीसत, आपने भावते चंद्रसों भासे ॥
आपने भावते तारे अनंत जु, आपने भावते बीज चकासे ॥
आपने भावते नूर है तेज है, आपने भावते ज्योति प्रकासे ॥
तैसोहि ताहिं दिखावत सुंदर, जैसोहि होत है जाहिको आसे ॥८॥
आपने भावते सेवक साहिब, आपने भाव सबै कोउ ध्यावे ॥
आपने भावते अन्यं उपासत, आपने भावते भक्तहु गावै ॥
आपने भावते दुष्ट संहारन, आपने भावते बाहिर आवै ॥
जैसोहि आपनो भाव है सुंदर, ताहिकुं तैसोहि होइ दिखावै ॥९॥
आपने भावते दूर बतावत, आपने भाव नजीक बखान्यो ॥
आपने भावते दूध पियावत, आपने भावते बीठल जान्यो ॥
आपने भावते चारिभुजा पुनि, आपने भावते सिंहसो मान्यो ॥
सुंदर आपने भावको कारण, आपहि पूरणब्रह्म पिछान्यो ॥ १० ॥
आपने भावते होइ उदास जु, आपने भावते प्रेमसूं रोवै ॥
आपने भाव मिल्यो पुनि जानत, आपने भावते अंतरै जोवे ॥
आपने भाव रहै नित जाग्रत, आपने भाव समाधिमें सोवै ॥
सुंदर जैसोहि भाव है आपनो, तैसोहि आप तहाँ तहाँ होवै ॥११॥
आपने भावते भूलि परयो भ्रम, देहस्वरूप भयो अभिमानी ॥
आपने भावते चंचलता अति, आपने भावते बुद्धि थिरानी ॥
आपने भावते आप बिसारत, आपने भावते आतमज्ञानी ॥
सुंदर जैसोहि भाव है आपनो, तैसोहि होइ गयो यह प्रानी ॥१२॥

इति अपनेभावकोअंग संपूर्ण ॥ २४ ॥

---

१ दूसरा--आन । २ गुप्त । ३ देखना ।

अथ जगन्मिथ्याको अंग २५.

मनहर छंद ।

कियो न विचार कछु, भनक परी है कान;
धारि आई सुनि करि, डरि विष खायो है ॥
जैसे कोई अनछतो, ऐसेही बुलाइयत;
वार वीत गई पर, कोऊ नहीं आयो है ॥
वेदहु वरणिके, जगत-तरु ठाढो कियो;
अंत पुनि वेद जर, मूलते उठायो है ॥
तैसेही सुंदर याको, कोई एक पावै भेद;
जगतको नाम सुनि, जगत भुलायो है ॥ १ ॥
ऐसोहि अज्ञान कोई, आयके प्रगट भयो;
दिव्य-दृष्टि दूर गई, देखै चाम-दृष्टिकूं ॥
जैसे एक आरसी, सदाही हाथमाहिं रहै;
सुमुख न देखै फेर, फेर देखै पृष्टिकूं ॥
जैसे एक व्योम पुनि, बादरसूं छाइ रह्यो;
व्योम नहिं देखत, देखत बहु वृष्टिकूं ॥
तैसे एक ब्रह्मही, विराजमान सुंदर है;
ब्रह्मकूं न देखै कोऊ, देखै सब सृष्टिकूं ॥ २ ॥
अनछतो जगत, अज्ञानते प्रगट भयो;
जैसे कोई बालक, वैताल देखि डरयो है ॥
जैसे कोई स्वपनेमें, दाब्यौ है ओथारे आइ;
मुखते न आवै बोल, ऐसो दुःख परयो है ॥
जैसे अँधियारी रैन, जेवरी न जानै ताहि;
आपहिते साँप मानि, भय अति करयो है ॥

१ संसाररूपीवृक्ष । २ चमरदृष्टि । ३ पीठ । ४ वर्षा । ५ रचना ।

तैसेही सुंदर एक, ज्ञानके प्रकाश बिनु;
आप दुःख पाय आय, आप पचि मन्यो है ॥ ३ ॥
मृत्तिका समाइरही, भाजनके रूपमाहिं;
मृत्तिकाको नाम मिट्टि, भाजनहि गह्यो है ॥
कनक समाइ ज्यूंही, होई रह्यो आभूषण;
कनक कहै न कोई, आभूषण कह्योहै ॥
बीजहू समाइ करि, वृक्ष होइ रह्यो पुनि;
वृक्षहीकूं देखियत, बीज नहिं लह्यो है ॥
सुंदर कहत यह, यूंहि करि जान्यो सब;
ब्रह्मही जगत होइ, ब्रह्म दूरि रह्यो है ॥ ४ ॥
कहत है देहमाहिं, जीव आइ मिलि रह्यो;
कहाँ देहं कहाँ जीव, वृथा चूक पर्यो है ॥
बूडिवेके डरते, तरनको उपाव करै;
ऐसे नहिं जानै यह, मृगजल भर्यो है ॥
जेवरीको साँप मानि, सीपविषे रूपो जानि;
औरको औरहि देखि, यूंहि भ्रम कर्यो है ॥
सुंदर कहत यह, एकही अखंडब्रह्म;
ताहिकूं पलटिके, जगत नाम धर्यो है ॥ ५ ॥

इति जगन्मिथ्याको अंग संपूर्ण ॥ २५ ॥

अथ अद्वैतज्ञानको अंग २६.

इंदव छन्द–(प्रश्नोत्तर.)

हौ तुम कौन ? हुँ ब्रह्म अखंडित, देहमें क्यूं नहिं ? देहके नेरे ॥
बोलत कैसे ? कहूं नहिं ? बोलत, जानिये कैसे ? अज्ञान है तेरे ॥

---

१ मृगजल वह है जब कि, जेठ वैशाखके दिनोंमें दुपहरकेसमय सूर्य्यकी चण्ड किरणें किसी अपारदर्शक वस्तुपर पडकर नाचने लगती हैं और जलकी भ्रांति प्रकट करती हैं।

दूर करो भ्रम निश्चय धारि, कही गुरुदेव कहूं नितटेरे ॥
हौ तुम ऐसे तुहूं पुनि ऐसेहि, दोइ नहीं नहिं द्वैतहि मेरे॥१॥

बोधोक्ति।

हूं कछु और कि तू कछु और, कि ये कछु और कि सो कछु औरे ॥
हूं अरु तू यह है कछु सो नहिं, पुनि बुद्धिविलास भयो झकझोरे ॥
हूं नहिं तू नहिं है कछु सो नहिं, बूझ विना जितही तित दौरे ॥
हूं पुनि तूं पुनि है कछु सो पुनि, सुंदर व्यापि रह्यो सब ठौरे ॥ २ ॥
उत्तम मध्यम और शुभाशुभ, भेद अभेद जहाँ लग जो है ।
दीसत भिन्न तवो अरु दर्पण, वस्तु विचारत एकहि लो है ।
जो सुनिये अरु दृष्टि परै कछु, वा विन और कहूं अब को है ।
सुंदर सुंदर व्यापि रह्यो सब, सुंदरमें पुनि सुंदर सो है ॥ ३ ॥
ज्यूं व्रन एक अनेक भये द्रुम, नाम अनंतनि जातिहु न्यारी ॥
वापि तडाग रु कूप नदी सब, है जल एक सु देखु निहारी ॥
पावक एक प्रकाश बहुविधि, दीप चिराग मसालहु बारी ॥
सुंदर ब्रह्म विलास अखंडित, भेद अभेद कि बुद्धि सुटारी ॥ ४ ॥
एक शरीरमें अंग भये बहु, एक धरापर धाम अनेका ॥
एक शिलामहैं कोर किये सब, चित्र बनाइ धरे इकठेका ॥
एक समुद्र तरंग अनेकहु, कैसे जु कीजिय भिन्न विवेका ॥
द्वैत कछू नहिं देखिय सुंदर, ब्रह्म अखंडित एकको एका ॥ ५ ॥
ज्यूं मृत्तिका वट नीर तरंगहि, तेज मसाल किये जु बहूता ।
वाय बघूरनि गाँठें परी बहु, बादल व्योमसु व्योम जु भूता ।
वृक्ष सु बीजही बीज सु वृक्षहि, पूत सु बापहि बाप सु पूता ।
वस्तु विचारत एकहि सुंदर, तान रु बान जु देखिय सूता ॥ ६ ।
भूमिहु चेतन आपहु चेतन, तेजहु चेतन है जु प्रचंडा ।

---

१ मंगलामंगल । २ आरसी । ३ पृथ्वी । ४ घर । ५ पत्थर
६ ताना-भरनी । ७ सूत ।

वायुहिं चेतन व्योमहु चेतन, शब्दहु चेतन पिंड ब्रह्मंडा ॥
है मन चेतन बुद्धिहु चेतन, चित्तहु चेतन आहि उदंडा[१] ॥
जो कछु नाम धरै सुहि चेतन, चेतन सुंदर ब्रह्म अखंडा ॥ ७ ॥
एक अखंडित ब्रह्म विराजत, नाम जुदो करि विश्व कहावै ॥
एकहि ग्रंथ पुराण बखानत, एकहि दत्त वसिष्ठ सुनावै ॥
एकहि अर्जुन उद्धवसुं कहि, कृष्ण कृपा करिके समुझावै ॥
सुंदर द्वैत[२] कछू मति जानहु, एकहि व्यापक वेद बतावै ॥ ८ ॥

मनहर छंद–(प्रश्नोत्तर)

शिष्य पूछैं गुरुदेव, गुरु कहै पूछै शिष्य;
मेरे एक संशय है, क्यूं न पूछै अबही ॥
तुम कहो एक ब्रह्म, अजहूं मैं कहूं एक;
एकता अनेकताको, यह भ्रम सबही ॥
भ्रम यह कौनकूंहै, भ्रमहिकूं भ्रम भयो;
भ्रमहिकूं भ्रम कैसे, तू न जानै कबही ॥
कैसे करि जानूं प्रभु, गुरु कहै निश्चै धरि;
निश्चै ऐसे जान्यो अब, एक ब्रह्म तबही ॥ ९ ॥

बोधोक्ति ।

ब्रह्म है ठौरको ठौर, दूसरो न कोउ और;
वस्तुको विचार किये, वस्तु पहिचानिये ॥
पंचतत्त्व[३] तीनगुण, विस्तरे विविध[४] भाँति;
नाम रूप जहाँ लगि, मिथ्या माया मानिये ॥
शेषनाग आदि देके, वैकुंठ गोलोक पुनि;
वचन विलास[५] सब, भेद भ्रम मानिये ॥
नतो कछु उरझ्यो[६], न सुरझ्यो कहूं सो कौन;

---

१ प्रबल । २ द्विविधो । ३ आग, पानी, वायु, आकाश, पृथ्वी ये पंचतत्त्व हैं । ४ अनेक । ५ केलि विनोद । ६ लिपटन ।

सुंदर सकल यह, उहावाही जानिये ॥ १० ॥
प्रथमहि देहमेंते, बाहिरकूं चूंकि परयो;
इंद्रिय व्यापारे सुख, सत्य करि जान्यो है ॥
कोउक संयोग पाइ सद्गुरुसूं भेंट भई;
उन उपदेश देके, भीतरकूं आन्यो है ॥
भीतरके आवतहि, बुद्धिको प्रकाश भयो;
कौन देह कौन मैं, जगत किन मान्यो है ॥
सुंदर विचारत यूं, उपजै अद्वैत ज्ञान;
आपकूं अखंड ब्रह्म, एक पहिचान्यो है ॥ ११ ॥

हंसाल–छन्द ।

सकल संसार विस्तार करि वरणियो, स्वर्ग पाताल मृर्त ब्रह्मही है ॥
एकते गिनतही गिनीय जो सौ लगे, फेरि करि एकको एकही है ॥
ये नहीं ये नहीं रहे अवशेष सो, अंतही वेदने यूं कही है ॥
कहत सुंदर सही अपनपो जातु जब, आपनै आपमें आपही है ॥१२॥
एक तू दोय तू तीन तू चार तू, पाँच तू तत्वते जगत कीयो ॥
नाम अरु रूप है बहुतविधि विस्तरयो, तुम बिना औरको नाहिं बीयो ॥
राव रंक तू दीन तू दानि तू, दोइ करि मेलते लीय दीयो ॥
सकलही एह तुवमाहिं उपजै खपै, कहत सुंदर बडो विपुल हीयो १३॥

मनहर छन्द ।

तोहिमें जगत यह, तूहि है जगतमाहिं;
तोमें अरु जगतमें, भिन्नता कहां रही ॥
भूमिहीते भाजन अनेक, विधि नाम रूप;
भाजनें विचारि देखे, उहै एकही मेंही ॥

---

१ भूल। २ कार्य्य। ३ सब्बागुरु। ४ एकता। ५ फैलाव। ६ मृत्वलोक। ७ बाकी। ८ दाता। ९ पचना, नष्ट होना। १० अधिक। ११ बर्तन–पात्र। १२ पृथ्वी धरती–सुवर्ण।

जलते तरंग फेन, बुद्बुदा अनेक भाँति;
सोउ तौ विचारे एक, वहै जल है सही ॥
जेते महापुरुष हैं, सबको सिद्धांत एक;
सुंदर अखिल ब्रह्म, अंत वेद ये कही ॥ १४ ॥
जैसे ईख रसकी मिठाई, भाँति भाँति भई;
फेरि करि गारे, इक्षु रसही लहतु है ॥
जैसे घृत थीजके, डरासो बांधि जात पुनि;
फेर पिघलेते वह, घृतही रहतु है ॥
जैसे पानी जमीके, पषाण हू सो देखियत;
सो पषाण फेरि पानी, होयके बहत है ॥
तैसेही सुंदर यह, जगत है ब्रह्ममय;
ब्रह्म सो जगतमय, वेद सु कहतु है ॥ १५ ॥
जैसे काठ कोरी तामें, पूतरी बनाय राखी;
सो विचारी देखिये तौ, उहै एक दार है ॥
जैसे माला सूतहूकी, मणिकाहू सूतहिकें;
भीतरहू पोयो पुनि, सूतहीको तारा है ॥
जैसे एक समुद्रके, जलहीको लौण भयो;
सोउ तौ विचारे पुनि, उहै जल खार है ॥
तैसेही सुंदर यह, जगत सो ब्रह्ममय;
ब्रह्म सो जगतमय, याही निरधार है ॥ १६ ॥
जैसे एक लोहके, हथ्यार नाना विध किये;
आदि-मध्य-अंत एक, लोहही प्रमानिये ॥
जैसे एक कंचनमें, भूषण अनेक भये;
आदि-मध्य-अंत एक, कंचनही जानिये ॥
जैसे एक मैनके, सँवारे नर हाथी यह;

---

१ लहर। २ सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड। ३ सुवर्ण।

आदि-अंत-मध्य एक, मेनही बखानिये ॥
तैसेही सुंदर यह, जगत सो ब्रह्ममय;
ब्रह्म सो जगतमय, निश्चैकरि मानिये ॥ १७ ॥
ब्रह्ममें जगत यह, ऐसी विधि देखियत;
जैसी विधि देखियत, फूलरी महीरमें ॥
जैसी विधि गिलिम, दुलीचेमें अनेक भाँति;
जैसी विधि देखियत, चूनरीहु चीरमें ॥
जैसी विधि कांगुरेहु, कोट पर देखियत;
जैसी विधि देखियत, बुदबुदा नीरमें ॥
सुंदर कहत लीक, हाथ परी देखियत;
जैसी विधि देखियत, शीतला शरीरमें ॥ १८ ॥
ब्रह्म अरु माया जैसे, शिव अरु शक्ति पुनि;
पुरुष प्रकृति दोउ, कहिके सुनाये हैं ॥
पति अरु पतनी, ईश्वर अरु ईश्वरीहु;
नारायण लक्ष्मी द्वै, वचन कहाये हैं ॥
जैसे कोई अर्धनारी, नटेश्वर रूप धरै;
एक बीजहूते दोऊ, दाली नाम पाये हैं ॥
तैसेही सुंदर वस्तु, ज्यूं है त्यूंही एकरस;
उभय प्रकार होई, आपही दिखाये हैं ॥ १९ ॥

इंदव छन्द ।

ब्रह्म निरीहँ निरामैय निर्गुण, नित्य निरंजन और न भासै ॥
ब्रह्म अखंडित है अध ऊरध, बाहिर भीतर ब्रह्म प्रकासै ॥
ब्रह्महि सूक्षम स्थूल जहाँ लगि, ब्रह्महि साहिब ब्रह्महि दासै ॥
सुंदर और कछू मत जानहु, ब्रह्महि देखत ब्रह्म तमासै ॥२०॥
ब्रह्महि माहिं विराजत ब्रह्महि, ब्रह्मबिना जनि औरही मानौ ॥

१ स्त्री । २ लक्ष्मी । ३ चेष्टारहित । ४ रोग रहित ।

ब्रह्महि कुंजर¹ कीटहु ब्रह्महि, ब्रह्महि रंक रु ब्रह्महि रानौ ॥
कालहि ब्रह्म स्वभावहु ब्रह्महि, कर्महु जीवहु ब्रह्म बखानौ ॥
सुंदर ब्रह्म बिना कछु नाहिंन, ब्रह्महि जानि सबै भ्रम भानौ ॥२१॥
आदि हुतो सुँहि अंतहि है पुनि, मध्य कहा कछु और कहावै ॥
कारण कारज नाम-धरै पुनि, कारज कारणमाहिं समावै ॥
कारज देखि भयो बिच विभ्रम, कारण देखि विभर्म² बिलावै ॥
सुंदर निश्चय ये अभिअंतर, द्वैत गये फिरि द्वैत न आवै ॥ २२ ॥

मनहर छंद ।

द्वैत करि देखै जब, द्वैतही दिखाई देत;
एक करि देखै तब, उहै एक अंगहै ॥
सूरजकूँ देखै जब, सूरज प्रकाशि रह्यो;
किरणकूं देखै तौ, किरण नाना रंग है ॥
भ्रम जब भयो तब, मांया ऐसी नाम धर्यो;
भ्रमके गयेते, एक ब्रह्म सरवंग है ॥
सुंदर कहत याकी, दृष्टिहूको फेर भयो;
ब्रह्म अरु मायाके तौ, माथे नहिं शृंगहै ॥ २३ ॥
श्रोत्र कछु और नाहिं, नेत्र कछु और नाहिं;
नासा कछु और नाहिं, रसना न और है ॥
त्वक³ कछु और नाहिं, वाक⁴ कछु और नाहिं;
हाथ कछु और नाहिं, पाँवनकी ठौर है ॥
मन कछु और नाहिं, बुद्धि कछु और नाहिं;
चित्त कछु और नाहिं, अहंकार तौर है ॥
सुंदर कहत एक, ब्रह्मविना और नाहिं;
आपहिमें आप व्यापि, रह्यो सब ठौर हैं ॥ २४ ॥

इति अद्वैतज्ञानको अंग संपूर्ण ॥ २६ ॥

---

१ हाथी । २ सन्देह । ३ खाल । ४ वाणी ।

अथ ब्रह्म निष्कलंकको अंग ॥ २७ ॥

मनहर छंद ।[1]

एक कोउ दाता गउ, ब्राह्मणकूँ देत दान;
एक कोउ दयाहीन, मारत निशंक है ॥
एक कोउ तपस्वी, तपस्यामाहिं सावधान,
एक कोउ काम क्रीडा, कामिनीको अंक है ॥
एक कोउ रूपवंत, अधिक विराजमान;
एक कोउ कोढि कोढ, चुवत करंके है ॥
आरसीमें प्रतिबिंब, सबहीको देखियत;
सुंदर कहत ऐसे, ब्रह्म निष्कलंक है ॥ १ ॥
रविके प्रकाशते, प्रकाश होत नेत्रनको;
सब कोउ शुभाशुभ, कर्मकूं करतु है ॥
कोउ यज्ञ दान तप, जप नेम व्रत कोउ;
इंद्रि वश करि कोउ, ध्यानकूं धरतु है ॥
कोउ परदारा, परधनकूं तकत जाइ;
कोउ हिंसा करि करि, उदर भरतु है ॥
सुंदर कहत ब्रह्म, साक्षीरूप एकरस;
याहीमें उपजि करि, याहीमें मरतु है ॥ २ ॥
जैसे जलजंतु जलहीमें उतपन्न होय;
जलहीमें विचरत, जलके आधार है ॥
जलहीमें क्रीडा करि, विविध व्योहार होत;
कामक्रोध लोभ मोह, जलमें संहार है ॥
जलकूं न लागै कछु, जीवनके राग द्वेष;
उनहीके क्रिया कर्म, उनहीके लार है ॥
तैसेही सुंदर यह, ब्रह्ममें जगत सब;

---

१ मज्जा—पीव ।

ब्रह्माकूं न लागे कछु, जगत विकार है ॥ ३ ॥
स्वेदज[1] जरायुज[2] अंडज[3], उदभिज्ज[4] पुनि;
चार खानि तिनके, चौरासीलक्ष जंतु हैं ॥
जलचर थलचर, व्योमचर भिन्न भिन्न;
देह पंच भूतनकी, उपजि खपंत हैं ॥
शीत घाम पवन, गगनमें चलत आइ;
गगन अलिप्त जामें मेघहू अनंत हैं ॥
तैसेही सुंदर यह, सृष्टि सब ब्रह्ममाहिं;
ब्रह्म निष्कलंक सदा, जानत महंत हैं ॥ ४॥

इति ब्रह्मनिष्कलंकको अंग संपूर्ण ॥ २७ ॥

अथ शूरातनको अंग २८.

मनहर छंद ।

सुनत नगारे चोट, विकसै[5] कमल मुख;
अधिक उछाह[6] फूल्यो, माथहू न तनमें ॥
फेरै जब सांग[7] तब, कोई नहिं धीर धरै;
कांयर[8] कंपायमान, होत देखि मनमें ॥
कूदके पतंग[10] जैसे, परत पावकमाहिं[11];
ऐसे टूटि परै बहु, सांवतके घनमें ॥
मारि घमसोने[12] करि, सुंदर जुहारै[13] श्याम;
सोई शूरवीर रोपि, रहै जाइ रनमें[14] ॥ १ ॥
हाथमें गहे खडग[15], मारवेकूं एक पग;

---

१ पसीनेसे पैदाहुये जीव । २ पिंडजपशु मनुष्यादि । ३ अंडोंस पैदा हुये जीव चिडियाँ इत्यादि । ४ स्थावर-वृक्षादि । ५ फूलकी कलियोंकी फूलना । ६आनंद । ७ नहीं समाताहै शरीरमें । ८ अस्त्रका नामहै ।९ डरपोक ।१० पाँखी कीडे । ११ अग्निमें । १२ धूमधाम । १३ बंदगी करना । १४ संग्राम । १५ तलवार ।

तन मन अपनो, समरपण कीनो है ॥
आगे करि मीचंकूं जु, पर्यो डाकि रण बीच;
टूक टूक होइके, भगाइ दल दीनो है ॥
खाइ लौन श्यामको, हरामखोर कैसे होइ;
नामयाद जगतमें, जीत्यो पन तीनों है ॥
सुंदर कहत ऐसो, कोउ एक शूरवीर;
शीशकूं उतारिके, सुयश जाइ लीनो है ॥ २ ॥
पाँव रोपि रहै, रणमाहिं रजपूत कोउ;
हय गज गाजत, जुरत जहाँ दल है ॥
बाजत जुझाऊ सहनाई, सिंधु राग पुनि;
सुनतहि कायरकि, छूटि जात कल है ॥
झलकत बरछी, तिरछी तरवार बहै;
मार मार करत, परत खल भल है ॥
ऐसे युद्धमें अडिग्गै, सुंदर सुभट सोई;
घरमाहिं शूरमा, कहावत सकल है ॥ ३ ॥
अशन वसन बहु, भूषण सकल अंग;
संपत्ति विविध भाँति, भर्यो सब घर है ॥
श्रवण नगारो सुनि, छिनकमें छाडि जात;
ऐसे नहिं जानै कछु, मेरो वहाँ मर है ॥
मनमें उछाह रणमाहिं, टूक टूक होई;
निर्भय निःशंक वाके, रंचहू न डर है ॥
सुंदर कहत कोउ, देहको ममत्व नाहिं;
शूरमाको देखियत, शीश बिनु धर है ॥ ४ ॥
जूझिबेको चाव जाके, ताकि ताकि करै घाव;

---

१ मृत्युमें । २ ठाकुर-क्षत्रिय । ३ मनमें कायरता न हो-पैर पीछे न पडै । ४ भोजन । ५ वस्त्र ।

आगे धरि पाँव फिर, पीछे न सँभारिं है ॥
हाथ लिये हथियार, तीछन लगावे धार;
बाँरें नहिं लागै सब, पिसुन प्रहारि है ॥
वोट नहिं राखै कछु, लोटपोट होइ जाइ;
चोट नहिं चूकै शीश, रिपुको उतारि है ॥
सुंदर कहत ताहि, नेकहू न शोच पोच;
सोई शूरवीर धीर, मरजाइ मारि है ॥ ५ ॥
अधिक आजानबाहु, मनमें उछाह किये;
दीये गज ढाहि मुख, वरषत नूर है ॥
कीढै जब तरवार, बाल सब ठाढें होइ;
अति विकराल पुनिं, देखत करूर है ॥
नेक न उसाँस लेत, फौजकूं फिटाइ देत;
खेतैं नहिं छाँडै मारि, करै चकचूर है ॥
सुंदर कहत ताकी, कीरति प्रसिद्ध होइ;
सोइ शूर बीर धीर, श्यामके हजूर है ॥ ६ ॥
ज्ञानको कवँच अंग, काहूकूं नँ होइ भंग;
टोप शीश झलकंत, परम विवेक है ॥
तन ताँजी असवार, लीये समशेर सार;
आगेहीकूं पाँव धरै, भोगनेकी टेक है ॥
छूटत बंदूक बान, मचे जहाँ घमसान;
देखिके पिसुन दल, मारत अनेक है ॥
सुंदर सकल लोकमाहिं, ताको जैजैकार;
ऐसो शूरवीर कोऊ, कोटिनमें एक है ॥ ७ ॥
शूरवीर रिपुं सनमुख, दखि चोट करै;

---

१ भयानक । २ हटादेना । ३ मैदान । ४ बख्तर । ५ बदन-शरीर-देह ६ प्रकाशित-शोभित । ७ घोडा । ८ तलवार । ९ प्रण । १० शत्रु ।

मारै तब ताकि ताकि, तरवार तीरसूं ॥
साधु आठों याम बैठो, मनहीसूं युद्ध करै;
जाके मुहँ माथो नहिं, देखिये शरीरसूं ॥
शूरवीर भूमि पर, दूरहीते दौरि लगै;
साधुसों न कोप करै, राखै धरिं धीरकूं ॥
सुंदर कहत तहाँ, काहुको न पाँव टिकै;
साधुको संग्राम है, अधिक शूर वीरसूं ॥ ८ ॥
खैंचि करडी कमान, ज्ञानको लगायो वान;
मारचो महाबल मन, जग जिन रान्यो है ॥
ताके अगवानी पंच, योधाहु कतल किये;
और रह्यो परचो सब, अरिं दल भान्यो है ॥
ऐसो कोउ सुभर्ट, जगतमें न देखियत;
जाके आगे कालहूसों, कंपिके परान्यो है ॥
सुंदर कहत ताकी, शोभा तिहूँलोकमाहिं;
साधुसों न शूरवीर, कोई हम जान्यो है ॥ ९ ॥
कामसों प्रबल महा, जीते जिन तीन लोक;
सो तौ एक साधुके, विचार आगे हारचो है ॥
क्रोधसों कराल जाके, देखत न धीर धरै;
सोउ साधु क्षमाके, हथ्यारसूं विदारचो है ॥
लोभ सों सुभट साधु, तोपसूं गिराय दियो;
मोहसों नृपति साधु, ज्ञानसूं प्रहारचो है ॥
सुंदर कहत ऐसो, साधु कोउ शूरवीर;
ताकि ताकि सबही, पिसुनँ दल मारचो है ॥ १० ॥
मारे काम क्रोध सब, लोभ मोह पीसि डारे;

---

१ मारडाला। २ शत्रुकी सैन्य। ३ नाश किया। ४ योद्धा। ५ भागना। ६ फारना। ७ चुगुलखोर।

इंद्रिहु कतल करि, किथो रजपूतो है ॥
मारयो महामत्त मन, मारे अहंकार मीन;
मारे मद मत्सर , ऐसो रण रूतो है ॥
मारी आशा तृष्णा पुनिं, पापिनी साँपिनी दोउ;
सबको प्रहार करि, निज पद पहूतो है ॥
सुंदर कहत ऐसो, साधु कोई शूर वीर;
वैरी सब मारिके, निचिन्त होइ सूतो है ॥ ११ ॥
कियो जिन मन हाथ, इंद्रिनको सब साथ;
घेरि घेरि आपनेही, नाथसूं लगाये हैं ॥
औरहू अनेक वैरी, मारे सब युद्ध कार;
काम-क्रोध लोभ-मोह, खोदके बहाये हैं ॥
कियो है संग्राम जिन, दियो है भगाइ दल;
ऐसे महा सुभट सु, ग्रंथनमें गाये हैं ॥
सुंदर कहत और, शूर यूंहि खपि गये;
साधु शूरवीर वेई, जगतमें आये हैं ॥ १२ ॥
महामत्त हाथी मन, राख्यो है पकरि जिन;
अतिहि प्रचंड जामें, बहुत गुमान है ॥
काम क्रोध लोभ मोह, बाँधे चारा पाँव पुनि;
छूटने न पावैं नेक, प्राण पीलवानं है ॥
कबहूँ जो करै जोर, सावधान साँझ भोर;
सदा एक हाथमें, अंकुश गुरु ज्ञान है ॥
सुंदर कहत और, काहुके न वश होइ;
ऐसो कौन शूर वीर, साधुके समान है ॥ १३॥

इति शूरातनको अंग संपूर्ण ॥ २८ ॥

---

१ लडाई । २ बिलायगये । ३ तेज । ४ हाथीवान ।

अथ साधुको अंग २९.

इंदव छंद।

प्रीति प्रचंड लगै परब्रह्महि, और सबै कछु लागत फीको॥
शुद्ध हृदै मन होइ सु निर्मल, द्वैत प्रभाव मिटै सब जीको॥
गोष्ठि रु ज्ञान अनंत चलै जहँ, सुंदर जैसु प्रवाह नदीको॥
ताहिते जानि करौ निशिवासर, साधुको संग सदा अतिनीको॥१॥
जो कोइ जाइ मिलै उनसूं नर, होत पवित्र लगै हरि रंगा॥
दोष कलंक सबै मिटि जाइ सु, नीचहु जाइ जु होत उतंगा॥
ज्यूं जल और मलीन महाअति, गंग मिल्यो हुइ जातहि गंगा॥
सुंदर शुद्ध करै ततकाल जु है जगमांहिं बडो सतसंगा॥२॥
ज्यूं लट भृंग करै अपने सम, तासु जु भिन्न कहै नहिं कोई॥
ज्यूं द्रुमै और अनेकन भाँतिन, चंदनके ढिग चंदन होई॥
ज्यूं जल क्षुद्रै मिलै जब गंगहि, होइ पवित्र उहै जल सोई॥
सुंदर जाति स्वभाव मिटै सब साधुकि संगति साधुहि होई॥३॥
जो कोउ आवत है उनके ढिग, ताहि सुनावत शब्द सँदेसो॥
ताहिकूं तैसिहि औषधि ल्यावत, जाहिकुँ रोगहि जानत जैसो॥
कर्म कलंकहि काटत हैं सब, शुद्ध करै पुनि कंचन तैसो॥
सुंदर वस्तु विचारत है नित, संतनको जु प्रभावहि ऐसो॥४॥
जो परब्रह्म मिल्यो कोउ चाहत, तौ नित संत समागमैं कीजै॥
अंतर मेटि निरंतर है करि, ले उनकूं अपनो मन दीजै॥
वे मुखद्वार उचार करैं कछु, सो अनयास सुधारस पीजै॥
सुंदर शूर प्रकाश भयो जब, और अज्ञान सबै तम छीजै॥५॥
जा दिनते सतसंग मिल्यो तब, ता दिनते भ्रम भाजि गयो है॥
और उपाय थके सबही तब, संतनि अद्वय ज्ञान दयो है॥

---

१ ऊंचा। २ वृक्ष–विटप। ३ अपवित्र। ४ मिलाप।

पीत प्रवालहि क्यूं करि छूवत, एक अमूलक लाल लयो है ॥
कौन प्रकार रहै रजनी-तम, सुंदर शूर प्रकाश भयो है ॥ ६ ॥
संत सदा सबको हित वंछत, जानत है नर बूडत काढै ॥
दे उपदेश मिटाइ सबै भ्रम, ले करि ज्ञान जहाजहि चाढै ॥
जे विषयासुख नाहिन छाँडत, ज्यूं कपि मूठ गहै शठ गाँढै ॥
सुंदर वे दुखकूं सुख मानत, हाटहि हाट बिकावत आढै ॥ ७ ॥
सो अनयास तरै भव-सागर, जो सतसंगतमें चलि आवै ॥
ज्यूं कनिंहार न भेद करै कछु, आई चढै :तिहि: नाव चढावै ॥
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य रु शूद्र, मलेच्छ चँडालहि पार लगावै ॥
सुंदर बेर नहीं कछु लागत, या नरदेह अभैपद पावै ॥ ८ ॥
ज्यूं हम खाइ पिवैं अरु ओढहिं, तैसेहि ये सब लोक बखानै ॥
ज्यूं जलमें शँशिके प्रतिबिंबहि, आप सभा जलजंतु प्रमानै ॥
ज्यूं खग छाँह धरापर दीसत, सुंदर पंछि उडै असमानै ॥
त्यूं शठ देहनके कृत देखत, संतनकी गति क्यूँ कोउ जानै ॥९॥
जो खपरा कर ले घर डोलत, माँगत भीखहि तौ नहिं लाजै ॥
जो सुखसेज पटंबर भूषण, लावत चंदन तौ नहिं राजै ॥
जो कोउ आय कहै मुखते कछु, जानत ताहि बयारहि बाजै ॥
सुंदर संशय दूर भयो सब, जो कछु साधु करै सोइ छाजै ॥१०॥
कोउक निंदत कोउक वंदत, कोउक देतहि आइ जु भक्षण ॥
कोउक आय लगावत चंदन, कोउक डारत धूरि ततक्षण ॥
कोउ कहै यह मूरख दीसत, कोउ कहै यह आहि विचक्षण ॥
सुंदर काहुसुँ राग न द्वेष न, ए सब जानहु साधुके लक्षण ॥ ११ ॥
तात मिलै पुनि मात मिलै, सुत भ्रात मिलै युवती सुखदाई ॥
राज मिलै गज बाजि मिलै सब, साज मिलै मन वांछित पाई ॥

---

१ बंदर । २ दृढ-मजबूत । ३ बाजार । ४ बेप्रयत्न । ५ दुःखरूपी समुद्र सम दुनियाँसे । ६ मल्लाह । ७ चन्द्रमा । ८ छाँही । ९ पक्षी ।

लोक मिलै सुरलोक मिलै, विधि लोक मिलै बैकुंठहु जाई ॥
सुंदर और मिलै सबही सुख, संत समागम दुर्लभ भाई ॥ १२ ॥

मनहर छंद ।

देवहू भयेते कहा, इंद्रहू भयेते कहा;
विधिहूके लोकते, बहुरि आइयतु है ॥
मानुष भयेते कहा, भूपति भयेते कहा;
द्विजहू भयेते कहा, पार जाइयतु है ॥
पशुहू भयेते कहा, पंछिहू भयेते कहा;
पन्नग भयेते कहा, क्यूं अघाइयतु है ॥
छूटिबेको सुंदर उपाय, एक साधुसंग;
जिनकी कृपाते अति, सुख पाइयतु है ॥ १३ ॥
इंद्राणी शृंगार धरि, चंदन लगायो अंग;
वाहि देखि इंद्र अति, कामवश भयो है ॥
शूकरिहू कैरदम, बीचमाहिं लोटि कारि,
आगे जाइ शूकरको, मन हरि लयो है ॥
जैसो सुख शूकरो, तैसो सुख मघवाको;
तैसो सुख नर पशु, पक्षिनकूं दयो है ॥
सुंदर कहत जाके, भयो ब्रह्मानंद सुख;
सोइ साधु जगतमें, जीतिकारि गयो है ॥ १४ ॥
धूलि जैसो धन जाके, शूलि सो संसार सुख;
भूलि जैसो भाग देखै, अंतकसी यारी है ॥
पाप जैसी प्रभुताई, शाप जैसो सनमान;
बडाई बिच्छुन जैसी, नागनीसी नारी है ॥
अग्नि जैसो इंद्र-लोक, विघ्न जैसो विधि-लोक;

---

१ ब्रह्मा-विधाता । २ राजा । ३ ब्राह्मण । ४ साँप । ५ कूडा-कीच-घूर-नरक । ६ इन्द्र ।

कीरति कलंक जैसी, सिद्धिसी ठगारी है ॥
वासनां न कोई बाकी, ऐसी मति सदा जाकी;
सुंदर कहत ताहि, वंदना हमारी है ॥ १५ ॥
कामही न क्रोध जाके, लोभही न मोह ताके;
मदही न मत्सर न, कोउ न विकारो है ॥
दुःखही न सुख मानै, पापही न पुण्य जानै;
हरष न शोक आनै, देहहीते न्यारो है ॥
निंदा न प्रशंसा करै, रागही न द्वेष धरै;
लेनाहि न देन जाके, कछु न पसारो है ॥
सुंदर कहत ताकी, अगम अगाध गति;
ऐसो कोउ साधु सो तौ, रामजीकूं प्यारो है ॥ १६ ॥
आठौ यामें यम नेम, आठौ याम रहै प्रेम;
आठौ याम योग यज्ञ, कियो बहु दान जू ॥
आठौ याम जप तप, आठौ याम लीयो व्रत;
आठौ याम तीरथमें, करत है स्नान जू ॥
आठौ याम पूजाविधि, आठौ याम आरतिहु;
आठौ याम दंडवत, सुमिरण ध्यान जू ॥
सुंदर कहत जिन, कियो सब आठौ याम;
सोई साधु जाके उर, एक भगवान जू ॥ १७ ॥
जैसे आरसीको मैल, काटत शिकलिगर;
मुखमें न फेर कोऊ, वहै वाको पोत है ॥
जैसे वैद्य नैनमें, शलाकों मेलि शुद्ध करै;
पटल गयेते तहाँ, ज्यूंकी त्यूंही जोत है ॥
जैसे वायु बादल, बिखेरके उडाइ देत;

---

१ चाह-इच्छा । २ बुद्धि । ३ नमस्कार । ४ पहर । ५ सेराई ।

रैवि तौ आकाशमाहि, सदाही उदोत है ॥
सुंदर कहत भ्रम, क्षणमें बिलाय जात;
साधुहीके संगते, स्वरूपज्ञान होत है ॥ १८ ॥
मृतक दादुर जीव, सकल जिवाये जिन;
वरषत वाणी मुख, मेघकीसी धारकूं ॥
देत उपदेश कोउं, स्वारथ न लवलेश;
निशिदिन करत है, ब्रह्मके विचारकूं ॥
औरहू संदेह सब, मेटत निमिषमाँहिं;
सूरज मिटाइ देत, जैसे अंधकारकूं ॥
सुंदर कहत हंस, वासी सुखसागरके;
संत जन आए हैं सो, पर उपकारकूं ॥ १९ ॥
हीराही न लालही न, पारस न चिंतामणिं;
औरहु अनेक नग, कहौ कहा कीजिये ॥
कामधेनु सुरतरु, चंदन नदी समुद्र;
नौकाहू जहाज बैठ, कबहूँक छीजिये ॥
पृथ्वी अप तेज वायु, व्योम लौं सकल जड;
चंद्र सूर शीतल, तपत गुण लीजिये ॥
सुंदर विचारि हम, शोधि सब देखे लोक;
संतनके सम कहौ, और कहा दीजिये ॥ २० ॥
जिन तन मन प्राण, दीने सब मेरे हेत;
औरहू ममत्त्व बुद्धि, आपनी उठाई है ॥
जागत हू सोवत हू, गावत है मेरे गुण;
करत भजन ध्यान, दूसरी न काई है ॥
तिनके मैं पीछे लग्यो, फिरतहूं निशिदिन;

---

१ श्रीसूर्यनारायण। २ उदय होतेहैं। ३ मुर्दा। ४ मेढक। ५ पलमात्र
६ गौ जो सदा दूध देतीहै।

सुंदर कहत भेरी, उनते बडाई है ॥
वहै मेरे प्रीयं मैं हूं, उनके आधीन सदा;
संतनकी महिमा तौ, श्रीमुख सुनाई है ॥ २१ ॥
जगत व्योहार सब, देखत है ऊपरको;
अंतहकरणकूं तौ, नेक न पिछान है ॥
छाजनकि भोजनाकि, हलन चलन कछु;
और कोऊ क्रियाकी तौ, मध्यही बखान है ॥
आपनेही अवगुण, आरोपै अज्ञानी जीव;
सुंदर कहत ताते, निंदाहीकूं ठान है ॥
भावमें तौ अंतर है, राति अरु दिनकेसो;
साधुकी परीक्षा कोउ, कैसे करि जान है ॥ २२ ॥
वही दगाबाज वही, कुंष्ठी जु कलंक भऱ्यो;
वही महापापी वाके, नख शिख कीच है ॥
वही गुरुद्रोहि गऊ, ब्राह्मण हननहार;
वही आतमाकोघाती, ऐसी वाके बीच ॥
वही अघंको समुद्र, वंही अवको पहाड;
सुंदर कहत वाकी, बुरी भाँति मीचं है ॥
वही है मलेच्छ वही, चांडाल बुरेते बुरो;
संतनकी निंदा करै, सो तौ महानीच है ॥ २३ ॥
परि है विजूरी ताके, ऊपरसूं अचानक;
धूरि उडि जाय कहूं, ठौर नहिं पाइ है ॥
पीछे केउ युग महा, नरकमें परे जाइ;
ऊपरते यमहूकी, मार बहु खाई ॥
ताके पीछे भूत प्रेत, स्थावर जंगम योनि;

---

१ प्यारा । २ प्रताप । ३ तनक । ४ मतलब । ५ फर्क । ६ इम्तिहान । ७ कोढी । ८ गुरुक शत्रु । ९ पाप । १० मौत । ११ श्वपच–डोम ।

सहैगो संकट तब, पीछे पछताइ है ॥
सुंदर कहत और, भुगतै अनंत दुःख[1];
संतनकूं निंदै[2] ताको, सत्यानाश जाइ है ॥ २४ ॥
कूपमेंको मेंडुक सो, कूपकूं सराहत है;
राजहंससूं कहत, केतो तेरा सर है ॥
मसका कहत मेरी, सरभर कौन उडै;
मेरे आग गरुडकी, केती एक जर[3] ॥
गूबरीलां गोलीकूं लडाई, मानै मोद;
मधुपकूं निंदत, सुगंधि जाको घर है ॥
अपनी न जानै गति, संतनको नाम धरै;
सुंदर कहत देखौ, ऐसो मूढ नर है ॥ २५ ॥
कोउ साधु भजनीक, हुतो लयलीत अति;
कबहूँ प्रारब्ध कर्म, धका आइ दया है ॥
जैसे कोउ मारगमें, चलत आखरी परै;
फेरि करि उठै तब, वहै पंथ लयो है ॥
जैसे चंद्रमाकी सुनि, कला क्षीण होइ गई;
सुंदर सकल लोक, द्वितीयाका नया[4] ॥
देवहुकी देवतन, गयो तामें कहा भयो,
पीतरको मोल सो तौ, नाहिं कछु गयो है ॥ २६ ॥
ताहिके भगति भाव, उपजत अनायास;
जाकी मति संतनसूं, सदा अनुरागी है ॥
अति सुख पावै ताके, दुःख सब दूर होइ;
औरही काहूकी जिन, निंदा सब त्यागी है ॥
संसारकि पाँश काटी, पाइ है परमपद[5];
सतसंगहीते जाकी, ऐसी मति जागी है ॥

---

१ अथाह । २ अपवाद । ३ बराबरी । ४ प्रेम । ५ मोक्ष ।

सुंदर कहत ताको, तुरत कल्याणं होइ;
संतनको गुण गहै, सोई वडभागी है ॥ २७ ॥
योग यज्ञ जपं तप, तीरथ व्रतादि दान;
साधन सकल नहिं, याकी सरभर है ॥
और देवी देवता, उपासना अनेक भाँति;
शंक सब दूर करि, तिनते न डर है ॥
सबहीके शीश पर, पाँव दे मुकति होइ;
सुंदर कहत सो तौ, जनमै न मरै ॥
मन वच काय करि, अंतर न राखै कछु;
संतनकी सेवा करै, सोई निसंतर है ॥ २८ ॥
प्रथम सुयश लेत, शीलहु संतोष लेत;
क्षमा दया धर्म लेत, पापते डरतु है ॥
इंद्रिनकूं घेरि लेव, मनहीकूं फेरि लेत;
योगकी युगति लेत, ध्यानही धरतु है ॥
गुरुको वचन लेत, हरिजीको नाम लेत;
आतमाकूं सोधि लेत, भाजल तरतु है ॥
सुंदर कहत जग, संत कछु देत नाहिं;
संतजन निशि-दिन, लेवोहि करतु है ॥ २९ ॥
साँचो उपदेश देत, भली भली सीख देत;
समता सुबुद्धि देत, कुमति हरतु हैं ॥
मारग दिखाइ देत, भावहु भगति देत;
प्रेमकी प्रतीति देत, अभरा भरतु हैं ॥
ज्ञान देत ध्यान देत, आतमविचार देत;
ब्रह्मकूं बताइ देत, ब्रह्ममें चतुर

---

१ भला । २ पूजा-ध्यान । ३ पार उतर जाना । ४ शिक्षा ।
५ बराबरी । ६ मुहब्बत ।

सुंदर कहत जग, संत कछु लेत नाहीं;
संत जन निशिदिन, देवोही करतु हैं ॥ ३० ॥

इति साधुको अंग संपूर्ण ॥ २९ ॥

अथ ज्ञानीको अंग ३०.

इंदव छन्द ।

जाहि हृदै महँ ज्ञान प्रकाश, तासु सुभाव रहै नहिं छानौ ॥
नैनहिं बैनहिं सैनहिं जानिय, ऊठत बैठतही अलसानौ ॥
ज्यूं कछु भक्ष किये उदगारंत, कैसहि राखि सकै न अघानौ ॥
सुंदरदास प्रसिद्ध दिखावत, धान्यको खेत परारतें जानौ ॥१॥
ज्ञान प्रकाश भयो जिनके उर, वे घट क्यूंहि छिपे न रहैंगे ॥
भोडलमाहिं जुरै नहिं दीपक, यद्यपि वे मुख मौन गहैंगे ॥
ज्यूं घनसारहि गोप्यँ छिपावत, तौहुँ सुगंध सु तज्ञ लहैंगे ॥
सुंदर और कहा कोउ जानत, बूठेंकि बात बटाउ कहैंगे ॥ २ ॥
बोलत चालत बैठत ऊठत, पीवत खातहुँ सूँघत श्वासै ॥
ऊपर तौ व्यवहार करै सब, भीतर स्वप्न समान जु भासै ॥
लेकरि तीर पतालहि साधत, मारत है पुनि फेर अकाशै ॥
सुंदर देह क्रिया सब देखत, कोउक पावक ज्ञानिको आशै॥३॥
बैठे तौ बैठे चलै तु चलै पुनि, पीछे तु पीछे रु आगे तु आगे ॥
बोले तु बोले न बोले तु मौनहि, सोवे तु सोवे रु जागे तु जागे ॥
खाइ तु खाइ नहीं तु नहीं, जु गहै तु गहै पुनि त्यागै तु त्यागै॥
सुंदर ज्ञानिकि ऐसी दशा यह, जांनै नहीं कछु राग विरागै ॥४॥
देखत है पै कछू नहिं देखत, बोलत है नहिं बोल बखानै ॥
सूंघत है नहिं सूंघत घ्राण, सुनै सब न सुनै यह कानै ॥
भक्ष करै अरु नाहिं भखै कछु, भेटत है नहिं भेटत प्रानै ॥

१ प्रकृति। २ इशारा। ३ खाद्य। ४ डकार। ५ मशहूर। ६ कर्पूर। ७ गुप्त। ८ पंडित। ९ पथिक। १० अवस्था। ११ खाय।

लेतहि देतहि लेत न देतहिं, सुंदर ज्ञानिकि ज्ञानिहि जानै ॥५॥
काज अकाज भलो न बुरो कछु, उत्तम मध्यम दृष्टि न आवै ॥
कायिक[1] वाचिक मानस कर्म सु, आप विषे न तिहूं ठहरावै ॥
हूं करिहूं न कियो न करूं अब, यूं मन इंद्रिनकूं वरतावै ॥
दीसत है व्यवहारविषे नित, सुंदर ज्ञानिकि कोउक पावै ॥ ६ ॥
देखत ब्रह्म सुनै पुनि ब्रह्म हि, बोलत है वहि ब्रह्महि वानी ॥
भूमिहु नीरहु तेजहु वायुहु, व्योमहु ब्रह्म जहाँलग प्रानी ॥
आदिहु अंतहु मध्यहु ब्रह्महि, है सब ब्रह्म यहै मति ठानी ॥
सुंदर ज्ञेय[2] रु ज्ञानहु ब्रह्महि, आपहु ब्रह्महि जानत ज्ञानी ॥७॥
बैठत केवल ऊठत केवल, बोलत केवल[3] वात कही है ॥
जागत केवल सोवत केवल, जोवत केवल दृष्टि लही है ॥
भूतहु केवल भव्यहु[4] केवल, वर्त्तत केवल ब्रह्म सही है ॥
है सबही अध ऊर्ध्व सु केवल, सुंदर केवल ज्ञान वही है ॥ ८ ॥
केवल ज्ञान भयो जिनके उर, ते अध उर्ध्व सु लोक न जाहीं ॥
व्यापक ब्रह्म अखंड निरंतर, वा विन और कहूँ कछु नाहीं ॥
ज्यूं घट नाश भयो घट व्योम सु, लनि[5] भयो पुनि है नभमाहीं ॥
त्यूं पुनि मुक्ति जहाँ वपु छाँडत, सुंदर मोक्ष शिला कहु काहीं॥९॥
आदि हुतो नहिं अंत रहै नहिं, मध्य शरीर भयो भ्रमकूपा ॥
भासत है कछु औरकुं औरहि, ज्यूं रजुमें अहि सीपिमें रूपा ॥
देखि मरीचि उठचो विच विभ्रम, जानत नाहिं वहै रवि धूपा ॥
सुंदर ज्ञान प्रकाश भयो जब, एक अखंडित ब्रह्म अनूपा ॥ १० ॥

मनहर छंद ।

जाहिके विवेक ज्ञान, ताहिके कुशल[6] भयो;
जाहि ओर जाहि वाकूं, ताहि ओर सुख है ॥

---

१ शारीरिक । २ जानने योग्य । ३ सिर्फ । ४ भविष्यति । ५ लिप्त होना ।
६ मंगल शम ।

जैसे कोई पावनिं, पैंजारकूं चढाइ लेत,
ताकूंतौ न कोउ कांटे, खोभरेको दुःख है ॥
भावै कोउ निंदा करै, भावै तौ प्रशंसा करै;
वे तौ देखे आरसीमें, आपनोहिं मुख है ॥
देहको व्योहार सब, मिथ्या करि जानत है;
सुंदर कहत एक, आतमाही रुख है ॥ ११ ॥
अंतहकरण जाके, तमगुण छाइ रह्यो;
जडतां अज्ञानवाके, आलस भैं त्रास है ॥
रजोगुणका प्रभाव, अंतहकरण जाके;
त्रिविध करम वाके, कामनांको वास है ॥
सत्त्वगुण अंतहकरण; जाके देखियंत;
क्रिया करि शुद्ध वाके, भक्तिको निवास है ॥
त्रिगुण अतीत साक्षी, तुरिया स्वरूप जान;
सुंदर कहत वाके, ज्ञानको प्रकाश है ॥ १२ ॥
तमोगुण बुद्धि सो तौ, तवांके समान जैसे;
ताके मध्य सरजकी, रंचहूं न जोत है ॥
रजोगुण बुद्धि जैसे, आरसीकी आंधी और;
ताके मध्य सूरजकी, कछुक उदोत है ॥
सत्त्वगुण बुद्धि जैसे; आरसी सूधी ओर;
ताके मध्य प्रतिबिंब; सूरजको पोत है ॥
त्रिगुण अतीत जैसे, प्रतिबिंब मिटि जात;
सुंदर कहत एक, सूरजही होत है ॥ १३ ॥
सबसूं उदास होइ, काढि मन भिन्न करै;
ताको नाम कहियत, परम वैराग है ॥

---

१ जूता। २ मुख्य। ३ मूर्खता। ४ डर। ५ प्रताप। ६ ख्वाहिश, इच्छा। ७ विरक्त। ८ लेशमात्र। ९ प्रकाश उदय होना।

अंतःकरणहूकी, वासनां निवृत्तं होई;
ताकूं मुनि कहत हैं, वहै बडो त्याग है ॥
चित्त एक ईश्वरसूं, नेकहू न न्यारो होइ;
वहै भक्ति कहियत, वहै प्रेम भाग है ॥
आप ब्रह्म जगतकूं, एक करि जानै सब;
सुंदर कहत वह, ज्ञान भ्रम भाग है ॥ १४ ॥
कोउ नृप फूलनकी, सेजपर सूतो आइ;
जब लग जाग्यो तौलों, अति सुख मान्योहै ॥
नींद जब आई तब, वाहीकूं स्वपन भयो;
जब पर्‍यो नरकके, कुंडमें यं जान्यो है ॥
अतिदुःख पावै परि, निकस्यो न क्यूंही जाहि;
जागि जब पर्‍या तब, स्वपन बखान्यो है ॥
यह झूंठ वह झूंठ, जाग्रत स्वपन दोऊ;
सुंदर कहत ज्ञानी, सब भ्रम भान्यो है ॥ १५ ॥
स्वपनमें राजा होइ, स्वपनेमें रंक होइ;
स्वपनेमें सुख दुःख, सत्यकरि जानै है ॥
स्वपनेमें बुद्धिहीन, मूढ न समुझ कछु;
स्वपनमें पंडित बहु, ग्रंथनि बखानै है
स्वपनेमें कामी होइ, इंद्रिनके वश पर्‍यो;
स्वपनेमें यती होइ, अहंकार आनै है ॥
स्वपनेते जाग्यो जब, समुझ परी है तब;
सुंदर कहत सब, मिथ्या करि मानै है ॥ १६ ॥
विधि न निषेध कछु, भेद न अभेद पुनि;
क्रिया सो करत दीसै, यूंही नितप्रति है ॥

---

१ शान्त । २ छोड । ३ दरिद्री । ४ निर्बुद्ध । ५ मूर्ख । ६ संन्यासी ।

काहूकूं निकट राखै, काहूकूं तौ दूर भाषै;
काहूसूं नेरे न दूर, ऐसी जाकी मति है ॥
रागहू न द्वेष कोउ, शोक न उछाह दोउ;
ऐसी विधि रहै कहूँ, रति न विरति है ॥
बाहिर व्योहार ठानै, मनमें स्वपन जानै;
सुंदर ज्ञानीकी कछु, अदभुत गति है ॥ १७ ॥
कामी है न यति है न, सूम है न सती है न;
राजा है न रंक है न, तन है न मन है ॥
सोवै है न जागै है न, पीछे है न आगे है न;
गहै न त्यागै है न, घर है न वन है ॥
थिर है न डोलै है न, मौन है न बोलै है न;
बंध है न मोक्ष है न, स्वामी है न जन है ॥
वैसो कोउ होवै जब, वाकी गति जानै तब;
सुंदर कहत ज्ञानी, ज्ञान शुद्धघन है ॥ १८ ॥
श्रवण सुनत मुख, बोलत वचन घ्राण;
सूँघत फूलन रूप, देखत दृगेन[2] है ॥
त्वक सपरत रस, रसना ग्रसत कर;
गहत अशन मुख, चलत पगन है ॥
करत गमन सुनि, बैठत भवन[3] सेज;
सोवत रवन पुनि, वोढत नगन है ॥
जा जो कछु व्यवहार, जानत सकल भ्रम;
सुंदर कहत ज्ञानी, ज्ञानमें मगन है ॥ १९ ॥
कर्म न विकर्म करै, भाव न अभाव धरै;
शुभ न अशुभ परै, याते निधरक है ॥
वसता न शून्य जाके, पापहू न पुण्य ताके;

१ चाल। २ नेत्र। ३ घर।

अधिक न न्यून वाके, स्वर्ग न नरक है ॥
सुखदुःख सम दोउ, नीचहू न ऊंच कोऊ;
ऐसी विधि रहै सोऊ, मिल्यो न फरक है ॥
एकही म दोय जानै, बंध मोक्ष भ्रम मानै;
सुंदर कहत ज्ञानी, ज्ञानमें गरक है ॥ २० ॥
अज्ञानीकूं दुःखंको, समूह जग जानियत;
ज्ञानीकूं जगत सब, आनँद स्वरूप है ॥
नैनहीनकूं तौ घर, बाहिर न सूझै कछुं;
जहाँ जहाँ जाय तहाँ, तहाँ अंधकूप है ॥
जाके चक्षु है प्रकाश, अधकार भयो नाश;
वाके जहाँ रहै तहाँ, सूरजकी धूप है ॥
सुंदर अज्ञानी ज्ञानी, अंतर बहुत आहिं;
वाके सदा राति वाके, दिवस अनूप है ॥ २१ ॥
ज्ञानी अरु अज्ञानीकी, क्रिया सब एकसीही;
अज्ञ आशवान ज्ञानी, आश न निराश है ॥
अज्ञ जोई जोई करै, अहंकार बुद्धि धरै;
ज्ञानी अहंकार बिनु, करत उदास है ॥
अज्ञ सुख-दुःख दोऊ, आपविषे मानि लेत;
ज्ञानी सुख दुःखकू न, जानै मेरे पास है ॥
अज्ञकूं जगत यह, सकल संतोष करै;
ज्ञानीकूं सुंदर सब, ब्रह्मको विलास है ॥ २२ ॥
ज्ञानी लोक-संग्रहकूं, करत व्योहार विधि;
अंतहकरणमें तौ, स्वप्नकीसी दौर है ॥
देत उपदेश नाना-भाँतिके वचन कहिं;
सब कोऊ जानत, सकल शिरमौर है ॥

---

१ बीच २ दिन । ३ जिसकी उपमा न हो । ४ अज्ञानी मूर्ख । ५ दुःख ।

हलन चलन पुनि, देहको करत नित;
ज्ञानमें गरक¹ गति, लिये निज ठौर है ॥
सुंदर कहत जैसे, दंत गजराज मुख;
खाइबेके और रु, दिखाइबेके और है ॥ २३ ॥
इंद्रिनको ज्ञान जाके, सो हो है पशु समान;
देह अभिमान, खान--पानहीसूं लीन है ॥
अंतहकरण ज्ञान, कछुक विचार जाके;
मनुष्य व्योहार, शुभ--कर्मके आधीन है ॥
आतमविचार ज्ञान, जाके निशि--वासर है;
सोही साधु सकलही, बातमें प्रवीण² है ॥
एक परमातमाको, ज्ञान अनुभव जाके;
सुंदर कहत वह, ज्ञानी भ्रम छीन है ॥ २४ ॥
जाहि ठौर रविको, प्रकाश भयो ताहि ठौर;
अंधकार भागि गयो; गृह वनवासते ॥
न तौ कछु वनते, उलटि आवै घरमाहिं;
न तौ वन चलि जाइ, कनक³ आवासते ॥
जैसे पक्षी पक्ष टूटि, जाहि ठौर पर्यो आइ;
ताहि ठौर गिरि रह्यो, उडिबेकी आशते ॥
सुंदर कहत मिटि, जाइ सब दौड दुःख;
धोखो न रहत कोऊ, ज्ञानके प्रकाशते ॥ २५ ॥
जैसे कोऊ देश जाइ, भाषा कहै औरसीही;
समुझै न कोऊ वासूं, कहै क्या कहतु है ॥
कोउ दिन रहि करि, बोली सीखै उनहींकी;
फेरि समुझावै तब, सब को लहतु है ॥
तैसे ज्ञान कहेत, सुनत विपरीतै⁴ लागै;

१ डूबा। २ चतुर। ३ सोनेका गृह। ४ उलटा।

आप आपनोही मत, सबको गहतु है ॥
उनहींकें मत करि, सुंदर कहत ज्ञान;
तबहीते ज्ञान, ठहराइके रहतु है ॥ २६ ॥
एक ज्ञानी कर्मनमें, ततपर देखियत;
भक्तिको प्रभाव नाहिं, ज्ञानमें गरक है ॥
एक ज्ञानी भगतिको, अत्यंत प्रभाव लिये;
ज्ञानमांहिं निश्चै करि, कर्मसूं तरक है ॥
एक ज्ञानी ज्ञानहीमें, ज्ञानको उचार करे;
भक्ति अरु कर्म इन, दुहूंते फरक है ॥
कर्म भक्ति ज्ञानी तीनूं, वेदमें बखानि कहै;
सुंदर बतायो गुरु, ताहीमें लरक है ॥ २७ ॥
जैसे पक्षी पगनसूं, चलत अवेनि आइ;
तैसे ज्ञानी देह करि, करम करतु है ॥
जैसे पक्षी चंचू करि, चुगत आहार पुनि;
तैसे ज्ञानी उरमें, उपासना धरतु है ॥
जैसे पक्षी पक्षनसूं, उडत गगनमांहिं;
तैसे ज्ञानी ज्ञान करि, ब्रह्ममें चरतु है ॥
सुंदर कहत ज्ञानी, तीनूं भाँति देखियत;
ऐसी विधि जानै सब, संशय हरतु है ॥ २८ ॥

इंदव छंद ।

एक क्रिया करि किर्षि निपावत, आदि रु अंत ममत्व बँध्यो है ॥
एक क्रिया करि पाकें करे जब, भोजनकूं कछु अन्न रँध्यो है ॥
एक क्रिया मल त्यागत है लघु, नीत करें कहुँ नाहिं फँध्यो है ॥
त्यूं यह कर्म उपासन ज्ञानहि, सुंदर तीनप्रकार सँध्यो है ॥ २९ ॥

---

१ आरूढ । २ पृथ्वी-धरा । ३ आकाश । ४ खेती । ५ रसोई । ६ छोटा ।

दोउ जने मिलि चौपर खेलत, सारि मरे पुनि ढारत पासा ॥
जीतत है सु खुशी मनमें अति, हारत है सु मरैहि उसाँसा ॥
एक जनो दोउ औरहि खेलत, हार न जीत करै जु तमासा ॥
त्यूंहि अज्ञानिकूं द्वैत भयो भ्रम, सुंदर ज्ञानिकूं एक प्रकासा ॥३०॥

सवैया-(इकतीसमात्रिक)।

जीव नरेश अविद्या निंद्रा, सुख शय्याँ सोयो करि हेत ॥
कर्म खवारा पुट भरि लाई, ताते बहुविधि भयो अचेत ॥
भक्ति प्रधान जगायो कर गहि, आलस भरी जँभाई लेत ॥
सुंदर अब निद्रा वश नाहीं, ज्ञान जागरण सदा सुचेत ॥३१॥

सवैया-(बत्तीसमात्रिक)।

ज्ञानी कर्म करै नाना विधि, अहंकार या तनको खोवै ॥
कर्मनको फल कछू न जोवै, अंतःकरण वासना धोवै ॥
ज्यूं कोऊ खेतीकूं जोतत, लेकरि बीज भूनिके बोवै ॥
सुंदर कहै सुनो दृष्टांतहि, नाँग नहाई कहा निचोवै॥३२॥

इति ज्ञानीको अंग संपूर्ण ॥ ३० ॥

अथ निःसंशय ज्ञानीको अंग ३१.

मनहर छंद।

भावै देह छूटि जाहु, काशीमांहि गंगातट;
भावै देह छूटि जाहु, क्षेत्र मगहरमें ॥
भावै देह छूटि जाहु, विप्रके सदन मध्य
भावै देह छूटि जाहु, श्वपचके घरमें ॥
भावै देह छूटे देश, आरय अनारयमें;
भावै देह छूटि जाहु, बनमें नगरमें ॥

---

१ राजा। २ मूर्खता। ३ नींद-शयन। ४ सेज। ५ घर। ६ चांडाल।

सुंदर ज्ञानीके कछु, संशय रहत नाहिं;
स्वरग नरक सब, भागि गयो भरमें ॥ १ ॥
भावै देह छूटि जाहु, आजही पलकमाहिं;
भावै देह रहु चिरकाल, युग अंत जू ॥
भावै देह छूटि जाहु, ग्रीषम पावॅस ऋतु;
शरद शिशिर शीत, छूटत वसंत जू ॥
भावै दक्षिणायनहु, भावै उत्तरायणहु;
भावै देह सर्प सिंह, बीजली हनत जू ॥
सुंदर कहत एक, आतमा अखंड जानि;
यांही भाँति निरसंशै, भये सब संत जू ॥ २ ॥

इंदव छंद ।

कै यह देह गिरो वन पर्वत, कै यह देह नदीहि बहो जू ॥
कै यह देह धरो धरतीमहि, कै यह देह कृशानु दहो जू ॥
कै यह देह निरादर निंदहु, कै यह देह सराह कहो जू ॥
सुंदर संशय दूर भयो सब, कै यह देह चलो कि रहो जू ॥३॥
कै यह देह सदा सुख संपति, कै यह देह विपॅत्ति परो जू ॥
कै यह देह निरोग रहो नित, कै यह देहहि रोग चरो जू ॥
कै यह देह हुताशन पैठहु, कै यह देह हिमार गरो जू ॥
सुंदर संशय दूर भयो सब, कै यह देह जिवो कि मरो जू ॥ ४ ॥

इति निःसंशय ज्ञानीको अंग संपूर्ण ॥ ३१ ॥.

अथ प्रेमज्ञानीको अंग ३२.

इंदव छंद ।

प्रीतिकि रीति कछू नहिं राखत, जाति न पाँति नहीं कुल गारो ॥
प्रेमकु नेम कहूं नहिं दीसत, लाज न कान लग्यो सब खारो ॥

---

१ बहुत कालतक । २ वर्षा । ३ अग्नि । ४ दुःख ।

लीनै भयो हरिसूं अभिअंतर, आठहु यांमें रहै मतवारो ॥
सुंदर कोउक जानिसकै यह, गोकुलगाँवको पैंडोहि न्यारो ॥ १ ॥
ज्ञान दियो गुरु देव कृपाकरि, दूरि कियो भ्रम खोरि किवाँरो ॥
और क्रिया कहि कौन करै अब, चित्त लग्यो परब्रह्म पियारो ॥
पाँव विना चलबो किहि ठौरहु, पंगुँ भयो मन मित्त हमारो ॥
सुंदर कोउक जानिसकै यह, गोकुल गाँवको पैंडोहि न्यारो ॥ २ ॥
एक अखंडित ज्यूं नभव्यापक, बाहिर भीतर है इक सारो ॥
दृष्टि न मुष्टि न रूप न रेख न, श्वेत न पीत न रक्त न कारो ॥
चकित होइ रहै अनुभौ बिनु, जौंलगि नाहिं न ज्ञान उजारो ॥
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँवको पैंडोहि न्यारो ॥३॥
द्वंद्व बिना विचरै वसुधापर, जा घट आतमज्ञान अपारो ॥
काम न क्रोध न लोभ न मोह न, राग न द्वेष न मारु न थारो ॥
योग न भोग न त्याग न संग्रह, देह दशा न ढँक्यो न उघारो ॥
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँवको पैंडोहि न्यारो ॥४॥
लक्ष अलक्ष अदक्ष न दक्ष न, पक्ष अपक्ष न तूल न भारो ॥
झूँठ न साँच अवाच न वाच न, कंचन काँच न दीन उदारो ॥
जान अजान न मान अमान न, सान गुमान न जीत न हारो ॥
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँवको पैंडोहि न्यारो ॥ ५ ॥

इति प्रेमज्ञानीको अंग संपूर्ण ॥ ३२ ॥

अथ आत्मअनुभवको अंग ३३.

इंदव छंद ।

है दिलमें दिलदार सही अखियाँ, उलटी करि ताहि चितैये ॥
आवमें खाकमें बादमें आतश, जानमें सुंदर जानि जनैये ॥
नूरमें नूर है तेजमें तेजहि, ज्योतिमें ज्योति मिले मिलि जैये ॥

---

१ लिप्त । २ अंतःकरण । ३ प्रहर । ४ राह । ५ लँगडा । ६ पानी । ७ मिट्टी । ८ हवा । ९ अग्नि । १० रोशनी ।

क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहतेहि लजैये ॥१॥
जो कहूँ है सबमें यह एक तु, सो कहैं केसु हैं आँखि दिखैये ॥
जो कहूँ रूप न रेख दिसै कछु, तौ सब झूँठकि मानिंहि कैये ॥
जो कहूँ सुंदर नैननि माँझ तु, नैन रु बैन गये पुनि हैये ॥
क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहतेहि लजैये ॥२॥
होत विनोद जितो अभिअंतर, सो सुख आपमें आपहि पैये ॥
बाहिरकूं उमँग्यो पुनि आवत, कंठते सुंदर फेर पठैये ॥
स्वाद निवेर निवेरचो न जात सु, मानहुँ गूड गुँगे नित खैये ॥
क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहतेहि लजैये ॥३॥
व्योमको व्योम[1] अनंत अखंडित, आदि न अंत सु मध्य कहाँ है॥
को परमान करै परिपूरण, द्वैत अद्वैत कछू न जहाँ है ॥
कारण कारज भेद नहीं कछु, आपमें आपहि आप तहाँ है ॥
सुंदर दीसत सुंदरमांहिं सु, सुंदरता कहि कौन उहाँ है ॥ ४ ॥

प्रश्नोत्तर

एक कि दोइ ? न एक न दोइ,
उही कि इही ? न उही न इही है ॥
शून्य कि स्थूल ? न शून्य न स्थूल,
जिही कि तिही ? न जिही न तिही है ॥
मूल कि डाल ? न मूल न डाल,
वही कि मही ? न वही न मही है ॥
जीव कि ब्रह्म ? न जीव न ब्रह्म,
तु है कि नहीं ? कछु है न नहीं है ॥ ५ ॥

पूर्ववत् ।

एक कहूं तु अनेकसु दीसत, एक अनेक नहीं कछु ऐसो ॥
आदि कहूं तहाँ अंतहु आवत, आदि न अंत न मध्य सु कैसो ॥

---

१ आकाश ।

गोप्य¹ कहूं तु अगोप्य² कहाँ यह, गोप्य अगोप्य नऊभो न वैसो॥
जोइ कहूं सोइ है नहिं सुंदर, है तु सही परि जैसेको तैसो॥६॥

मनहर छंद।

एकको कहै जु कहूं, एकही प्रकाशत है;
दोऊही कहै जु कोऊ, दूसरोहू देखिये ॥
अनेक कहै जु कोऊ, अनेक आभासै ताहिं;
जाके जैसो भाव तैसो, ताकूंही विशेखिये ॥
वचन बिलास कोऊ, कैसेही बखानि कहै;
व्योममाहिं चित्र कहौ, कैसे करि लेखिये ॥
अनुभव किये एक, दोई न अनेक कछु;
सुंदर कहत ज्यूं है, त्यूंही ताहि पेखिये ॥ ७ ॥
वचनहिं वेद विधि, वचनहिं शास्त्र पुनि;
वचन समृति अरु, वचन पुराण जू ॥
वचनही और ग्रंथ, वचनही व्याकरण;
वचनही काव्य छंद, नाटक बखान जू ॥
वचनही संसकृत, वचनही पराकृत;
वचनही भाषा सब, जगतमें जान जू ॥
वचनके परे है सो, वचनमें आवै नहीं;
सुंदर कहत वही, अनुभौ प्रमान जू ॥ ८ ॥
इंद्रि नहिं जानि सकै, अल्प ज्ञान इंद्रिनको;
प्राणहु न जानि सकै, श्वास आवै जाइ है ॥
मनहुँ न जानि सकै, संकल्प विकल्प करै;
बुद्धिहु न जानि सकै; सुन्यो सब ताइ है ॥
चित्त अहंकार पुनि, एकहु न जानि सकै;
शब्दहु न जानि सकै, अनुमान पाइ है ॥

---

१ गुप्त–छिपा। २ प्रकट। ३ वैंठां। ४ मनकी भावना करना और लीन होन।

सुंदर कहत ताहि, कोऊ नहिं जानि सकै;
दीषा करि देखिये सो, ऐसा नहिं लाइ है ॥ ९ ॥

इंदव छंद ।

श्रोत्र¹ न जानत चक्षु² न जानत, जानत नाहिं जु सूंघत घ्रानै ॥
जानि सपर्स त्वचा न सकै पुनि, जानत नाहिं जु जीभ बखानै ॥
मंन न जानत बुद्धि न जानत, चित्त अहंकार क्यूं पहिचानै ॥
सुंदर शब्दहु जानि सकै नहिं, आतम आपकूं आपहि जानै ॥ १० ॥
सूरके तेजते सूरज दीसत, चंद्रके तेजते चंद्र उजासै ॥
तारेके तेजते तारेहु दीसत, बीजुल तेजते बीजु चकासै ॥
दीपके तेजते दीपक दीसत, हीरेके तेजते हीरोहि भासै ॥
तैसेहि सुंदर आतम जानहु, आपके ज्ञानते आप प्रकासै ॥ ११ ॥
कोउ कहै यह सृष्टि स्वभावते, कोउ कहै यह कर्मते सृष्टी ॥
कोउ कहै यह काल उपावत, कोउ कहै यह ईश्वर तिष्टी ॥
कोउ कहै यह ऐसेहि होवत, क्यूं करि मानिय बात अनिष्टी ॥
सुंदर एक किये अनुभौ बिनु, जानि सकै नहिं बाझहि द्दष्टी ॥ १२ ॥
कोउ तौ मोक्ष अकाश बतावत, कोउ तौ मोक्ष पतालके माहीं ॥
कोउ तौ मोक्ष कहै पृथिवीपर, कोउ कहै कहुँ और कहाहीं ॥
कोउ बतावत मोक्ष शिलापर, कोउक मोक्ष मिटै परछाहीं ॥
सुंदर आतमके अनुभौ बिनु, और कहूं कोइ मोक्षहिनाहीं ॥ १३ ॥
मूएते मोक्ष कहैं सब पंडित, मूएते मोक्ष कहैं पुनि जैना ॥
मूएते मोक्ष कहै ऋषि तापस, मूएते मोक्ष कहैं शिव सैना ॥
मूएते मोक्ष मलेच्छ कहैं पुनि, धोखेहि धोखे बखानत वैना ॥
सुंदर आतमको अनुभौ सोइ, जीवत मोक्ष सदा सुखचैना ॥ १४ ॥

मनहर छंद ।

कोऊ तौ कहत ब्रह्म, नाँभिके कमल मध्य;

---

१ कान । २ आंखें । ३ निश्चय । ४ ज्ञान । ५ तोंदी ।

कोऊ तौ कहत ब्रह्म, हृदयमें प्रकाश है ॥
कोऊ तौ कहत कंठ, नासिकाके अग्रभाग;
कोऊ तौ कहत ब्रह्म, भृकुटीमें वास है ॥
कोऊ तौ कहत ब्रह्म, दशमें दुवार बीच;
कोऊ तौ कहै भ्रमर,-गुफामें निवास है ॥
पिंडमें ब्रह्मांडमें, निरंतर विराजै ब्रह्म;
सुंदर अखंड जैसे, व्यापक आकाश है ॥ १५ ॥
पाँव जिन गह्यो सो तौ, कहत हैं ऊखर सौं;
पुच्छ जिन गह्यो तिन, लावसो सुनायो है ॥
सूंड़ जिन गही तिन, डगलेकी बांह कही;
दंत जिन गही तिन, मूसर दिखायो है ॥
कान जिन गह्यो तिन, सूपसो बनाय कह्यो;
पीठ जिन गही तिन, बिटोरा बतायो है ॥
जैसो है तैसेही ताहि, सुंदर सुअक्षी जानै;
आँधरेने हाथी देखि, झगरो मचायो है ॥ १६ ॥
न्यायशास्त्र कहत है, प्रगट ईश्वरवाद;
मीमांसाहि शास्त्रमाहिं, कर्मवाद कह्यो है ॥
वैशेषिक शास्त्र पुनि, कालवादी है प्रसिद्ध;
पातंजलि शास्त्रमाहिं, योगवाद लह्यो है ॥
सांख्य शास्त्रमाहिं पुनि, प्रकृति-पुरुष-वाद;
वेदांत जु शास्त्र तिन, ब्रह्मवाद गह्योहै ॥
सुंदर कहत षट्शास्त्रमाहिं भयो वाद;
जाके अनुभव ज्ञान, वादमें न वह्यो है ॥ १७ ॥
'प्रज्ञानंमानंदं ब्रह्म, ऐसे ऋगवेद कहै;
'अहं ब्रह्म अस्मि, इति यजुर्वेद यूं कहै ॥

---

१ भौंहें। २ अनुमान। ३ जो ज्ञानमें आनंदित रहे अर्थात् निर्गुण ब्रह्म। ४ मैं। ५ हूँ।

तत्त्वमसि इति, सामवेद यूं वखानतहै;
अयं आत्मा ब्रह्म, कहि अथर्वण यूं लहै ॥
एक एक वचनमें, तीन पद हैं प्रसिद्ध;
तिनको विचार करि, अर्थ तत्त्वकूं गहै ॥
चारिवेद भिन्न भिन्न, सबको सिद्धांत एक;
सुंदर समुझि करि, चुप चाप है रहै ॥ १८ ॥
इंद्रिनके भोग जब, चाहै तब आय रहै;
नाशवंत ताते, तुच्छानंद यूं सुनायो है ॥
देवलोक इंद्रलोक, ब्रह्मलोक शिवलोक;
वैकुंठके सुखलौं, गणितानंद गायो है ॥
अक्षयं अखंड एक, रस परिपूरण है;
ताहिते पूरणानंद, अनुभौते पायो है ॥
याहिके अंतरभूत, आनँद जहाँलौं और;
सुंदर समुद्रमांहि, सर्व जल आयो है ॥ १९ ॥
एक तौ माया–विलास, जगत प्रपंच यह;
चारि खानि भेद पाय, द्वैत भासि रह्यो है ॥
दूसरो विषै–विलास, इंद्रिनके विषे पंच;
शब्द सपरस रूप, रस गंध रह्यो है ॥
तीसरो वाक्य–विलास, सो तौ सब वेदमांहि;
वरणिके जहाँ लगि, वचनते कह्यो है ॥
चौथो ब्रह्मको विलास, तिहूंको अभाव जहाँ;
सुंदर कहत वह, अनुभौते लह्यो है ॥ २० ॥
जीवतही देवलोक, जीवतही इंद्रलोक;
जीवतही जन तप, सत्य लोक आयो है ॥

---

१ तुमहो । २ आशय, विचार, मत । ३ अमर । ४ बखेडा, पाखंड, सृष्टि । न मिलना ।

जीवतही विधिलोक, जीवतही शिवलोक,
जीवत वैकुंठ लोक, जो अकुंठ गायो है ॥
जीवतही मोक्षशिला, जीवतही व्हेस्त माहिं;
जीवतही निकट, परमपद पायो है ॥
आतमाको अनुभव, जिनकूं जीवत भयो;
सुंदर कहत तिन, संशय मिटायो है ॥ २१ ॥
क्षिति भ्रम जल भ्रम, पावक पवन भ्रम;
व्योम भ्रम तिनको, शरीर भ्रम मानिये ॥
इंद्रिय दशहु भ्रम, अंतहकरण भ्रम;
तिनहींके देवता सो, भ्रमते बखानिये ॥
सत्त्व रज तम भ्रम, पुनि अहंकार भ्रम;
महत्तत्त्व प्रकृति पुरुष, भ्रम मानिये ॥
जोई कछु कहिये सो, सुंदर सकल भ्रम;
अनुभव किये एक, आतमाहीं जानिये ॥ २२ ॥
भूमिहु विलीन होइ, आपहु विलीन होइ;
तेजहु विलीन होइ, वायु जो बहतु है ॥
व्योमहु विलीन होइ, त्रिगुण विलीन होइ;
शब्दहु विलीन होइ, अहं जो कहतु है ॥
महत्तत्त्व लीन होइ, प्रकृति विलीन होइ;
पुरुष विलीन होइ, देह जो गहतु है ॥
सुंदर सकल लोक, कहिये सो लीन होइ;
आतमाकें अनुभव, आतमा रहतु है ॥ २३ ॥
मायाकी अपेक्षा ब्रह्म, रात्रिकी अपेक्षा दिन;
जडकी अपेक्षा करि, चेतन बखानिये ॥
अज्ञान अपेक्षा ज्ञान, बंधकी अपेक्षा मोक्ष ॥

---

१ खुला हुआ। २ संदेह। ३ नष्ट होना।

द्वैतकी अपेक्षा सो तौ, अद्वैत प्रमानियें ॥
दुःखकी अपेक्षा सुख, पापकी अपेक्षा पुण्य;
झूंठकी अपेक्षा ताहि, सत्य करि मानिये ॥
सुंदर सकल यह, वचन-विलास भ्रम;
वचन रहित अवचन, सोंइ जानिये ॥ २४ ॥
आतमा कहत गुरु, शुद्ध निरबंध नित;
सत्य करि मानै सो तौ, शब्दहू प्रमान है ॥
जैसे व्योम व्यापक, अखंड परिपूरण है;
व्योम उपमाते, उपमान सो प्रमान है ॥
जाकी सत्ता पाइ सब, इंद्रिय चेतन होइ;
याही अनुमान, अनुमानहू प्रमान है ॥
अनुभव जाने तब, सकल सँदेह मिटै;
सुंदर कहत यह, प्रत्यक्ष प्रमाण है ॥ २५ ॥
एक घर दोय घर, तीन घर चार घर;
पंच घर तजै तब, छठो घर पाइये ॥
एक एक घरके, आधार एक एक घर;
एक घर निराधारें, आपही दिखाइये ॥
सो तौ घर साक्षरूप, घर घर में अनूप,
ताहू घर मध्य कोऊ, दिन ठहराइये ॥
ताके परे साक्षी न, असाक्षी न सुंदर कछु;
वचन अतीत कहुं, आइ है न जानियें ॥ २६ ॥
एकतौ श्रवण ज्ञान, पावक ज्यूं देखियत;
माया जल परसत, वेगिं बुझि जात है ॥
एक है मनन ज्ञान, विजली ज्यूं घन मध्य;
माया जल बरषत, तामै न बुझात है ॥

---

१ शक्ति । २ अंदाज । ३ सहारा । ४ वेसहारेके । ५ अग्नि । ६ शीघ्र ।

एक निदिध्यास ज्ञान, बडवाअनल जैसे;
प्रगट समुद्रमांहिं, माया जल खात है ॥
अनुभव साक्षात ज्ञान, प्रलयकी अग्निसम;
सुंदर कहत द्वैत, प्रपंच विलात है ॥ २७ ॥
भोजनकी बात सुनि, मनमें मुदित भयो;
मुखमें न परे जौलौं, मेलिये न ग्रास है ॥
सकल सामग्री आनि, पाककूं करन लागो;
मनन करत कब, जीमहूं ये आस है ॥
पाक जब भयो तब, भोजन करन बैठो;
मुखमें मेलत जाइ; यही निदिध्यास है ॥
भोजन पूरन करि, तृपत भयो है जब;
सुंदर साक्षातकार, अनुभव प्रकाश है ॥ २८ ॥
श्रवण करत जब, सबसूं उदास होइ;
चित्त एकाग्रह आनि, गुरुमुख सुनिये ॥
बैठिके एकांत ठौर, अंतह्करणमांहिं;
मनन करत फेर, उहै ज्ञान गनिये ॥
ब्रह्म अपरोक्ष जानि, कहत है "अहं ब्रह्म"
सोहं सोहं होइ सदा, निदिध्यास धुनिये ॥
सुंदर साक्षातकार, कीटहीते होइ भृंग;
यह अनुभव यह, स्वस्वरूप भनिये ॥ २९ ॥
जबही जिज्ञासा होइ, चित्त एक ठौर आनि;
मृग ज्यूं सुनन नाद, श्रवण सो कहिये ॥
जैसे स्वाति बूँदहूकुं, चातक रटत पुनि;
ऐसेहि मनन करै, कब बूँद लहिके ॥
रातिमें चकोर जैसे, चंद्रमाको धरै ध्यान;
ऐसे जानि निदिध्यास; दृढ करि गहिये ॥

---

१ एकजगहकर। २ कीडा।

यहै अनुभव यहै, कहिये साक्षात्कार;
सुंदर पारेते गलि, पानी होइ रहिये ॥ ३० ॥
काहूकूं पूछत रंक, धन कैसे पाइयत;
कान देके सुनत, श्रवण सोई जानिये ॥
उन कह्यो धन हम, देख्यो है फलानी ठौर;
मनन करत भयो, कब घर आनिये ॥
फेरि जब कह्यो धन, गड्यो तेरे घरमाहिं;
खोदन लाग्यो है जब, निदिध्यास ठानिये ॥
धन निकस्यो है जब, दारिद् गयो है तब;
सुंदर साक्षातकार, नृपति[1] बखानिये ॥ ३१ ॥
चकमक ठोंकेते, चमतकार[2] होत कछु;
ऐसेही श्रवण ज्ञान, तबही लौं जानिये ॥
कफमाहिं लागै जब, प्रगटै पावक[3] ज्ञान;
सुलगत जाइ वह, मनन बखानिये ॥
वर्त्तमान भये काठ, कर्मनकूं जरावत;
यही निदिध्यास ज्ञान, ग्रंथनमें गानिये ॥
सकल प्रपंच यह, झौंरिके[4] समाइ जात;
सुंदर कहत यह, अनुभौ प्रमानिये ॥ ३२ ॥

॥ इति आत्मअनुभवको अंग संपूर्ण ॥ ३३ ॥

अथ आश्चर्यको अंग ३४.

मनहर छन्द।

वेदको विचार सोई, सुनिके संतन मुख;
आपहू विचार करि, सोइ धारियतु है ॥
योगकी युगति जानि, जगते उदास होइ;
शून्यमें समाधि लाइ, मन मारियतु है ॥

१ राजा। २ प्रकाश-द्युति-रोशनी। ३ अग्नि। ४ सब-समाप्त।

ऐसे ऐसे करत करत, केते दिन बीते;
सुंदर कहत अजहूं, विचारियतु है ॥
कारोही न पीरो न तौ, तातोही न सीरो कछु;
हाथ न परत ताते, हाथ झारियतु है ॥ १ ॥
मनको अगम अति, वचन थकित होत;
बुद्धिहू विचार करि, बहु खंडियतु है ॥
श्रवण न सुनै ताहि, नैनहू न देखै कछु;
रसनाकौ रस सब, रस छाँडियतु है ॥
त्वंकको सपर्श नाहिं, घ्राणको न विषै होइ;
पगनहू करि जित, तित हिंडियतु है ॥
सुंदर कहत अति, सूक्षम स्वरूप कछु;
हाथ न परत ताते, हाथ मिंडियतु है ॥ २ ॥
गुफाकूं संवारत हैं, आसनहू मारि करि;
प्राणहीकूं धारि, धारणा कसीटियतु है;
इंद्रिनकूं घेरि करि, मनहूकूं फेरि पुनि ॥
त्रिकुटीमें हेरि हेरि, हियो चीटियतु है;
सब छटिकाय पुनि, शून्यमें समाय तहाँ;
समाधि लगाय करि, आँख मीटियतु है ॥
सुंदर कहत हम, औरहू किये उपाय,
हाथ न परत ताते, हाथ छीटियतु है ॥ ३ ॥
बोलैही न मौन धरै, बैठो है न गौनें करै.
जागैही न सोवे न तौ, दूर है न तीरो है ॥
आवैही न जात न तौ, थिर अकुलात पुनि,
भूखोही न खात कछु, तातोही न सोरी है ॥
लेत है न देत कछु, हेत न कुहेत पुनि;
श्यामही न श्वेत अरु, रातौ है न पीरो है ॥

१ ठंढा। २ अथाह। ३ जिह्वा। ४ त्वचा-खाल। ५ चलना। ६ सफेद
७ लाल।

दूबरो न मोटो कछु, लाँबोही न छोटो ताते;
सुंदर कहत कछु, काँचही न हीरो है ॥ ४ ॥
भूमिही न आप न तौ, तेजही न ताप न तौ;
वायुही न व्योम न तौ, पंचको पसारो है ॥
हाथही न पाँव न तौ, नैन बैन भाव न तौ;
रंकही न राव न तौ, वृद्धही न बारो है ॥
पिंडही न प्राण न तौ, ज्ञान न अज्ञान न तौ;
बंध निरवान न तौ, हरवो न भारो है ॥
द्वैत न अद्वैत न तौ, मीत न अमीत न तौ;
सुंदर कह्यो न जाइ, मिल्योही न न्यारो है ॥ ५ ॥

इंदव छंद ।

पाप न पुण्य न स्थूल न शून्य न, बोलै न मौन न सोवै न जागै ॥
एक न दोइ न पुर्व न जोइ, कहै कहाँ कोइ न पीछे न आगै ॥
वृद्ध न बाल न कर्म न काल, न ह्रस्व विशाल न जूझै न भागै ॥
बंध न मोक्ष अमोक्ष न प्रोक्ष न, सुंदर है न असुंदर लागै ॥६॥
तत्त्व अतत्त्व कह्यो नहिं जात, जु शून्य अशून्य उरै न परै है ॥
ज्योति अज्योति न जानि सकै कोउ, आदि न अंत जिवै न मरैहै ॥
रूप अरूप कछू नहिं दीसत, भेद अभेद करै न हरै है ॥
शुद्ध अशुद्ध कह्यो पुनि कौन जु, सुंदर बोलै न मौन धरै है ॥७॥
खोजत खोजत खोजि गये पुनि, खोजत है अरु खोजहि आने ॥
गावत गावत गाइ रहे सब, गावत है पुनि गाइहि गाने ॥
देखत देखत देखि थके सब, दीसें नहीं कछु ठौर ठिकाने ॥
बूझत बूझत बूझिके सुंदर, हेरत हेरत हेर हिराने ॥ ८ ॥
पिंडमें है पर पिंड मिलै नहिं, पिंड परे पुनि त्यूंहि रहावै ॥
श्रोत्रमें है पर श्रोत्र सुनै नहिं, दृष्टिमें है पर दृष्टि न आवै ॥
बुद्धिमें है पर बुद्धि न जानत, चित्तमें है पर चित्त न पावै ॥
शब्दमें है पर शब्द थक्यो कहि, शब्दहु सुंदर दूर बतावै ॥९॥

---

१ मोटा ।

एकहि ब्रह्म रह्यो भरपूर तु, दूसर कौन बतावनहारो ॥
जो कहि जीव करै परमान तु, जीव कहा कछु ब्रह्मते न्यारो ॥
जो कहि जीव भयो जगदीशते, तौ रविमाहिँ कहाँको अँधारो ॥
सुंदर मौन गही यह जानिकै, कौनहु भाँति न ह्वै निरधारो ॥१०॥
भूमिहु तैसेहि आपहु तैसेहि, तैसेहि तेज रु तैसेहि पौनाँ ॥
व्योमहु तैसेहि आहि अखंडित, तैसेहि ब्रह्म रह्यो भरि भौनाँ ॥
देह सँयोग वियोग भयो तब, आयोसो कौन गयो तोहि कौना ॥
जो कहिये कहते न बनै कछु, सुंदर जानि गही मुख मौनाँ ॥११॥
जो हम खोज करैं अभिअंतर, सो वह खोज उरेहि बिलावै ॥
जो हम बाहिरकूं उठि दौरत, तौ कछु बाहिर हाथ न आवै ॥
जो हम काहूकूँ पूछत हैं पुनि, सोहि अगोध अगाध बतावै ॥
ताहिते कोउ न जानि सकै तिहि, सुंदर कौनसि ठौर रहावै ॥१२॥
नैन न बैन यै चैन न आश न, वास न खास न प्यास न याते॥
शीत न घाम न ठौर न ठाम न, पुर्ष न बाँम न मात न ताते ॥
रूप न रेख न शेर्ष अशेष, न श्वेत न पीत न श्याम न राते ॥
सुंदर मौन गही सिद्ध साधक, कौन कहै उसकी मुख बाते ॥१३॥
वेद थके कहि तंत्र थके कहि, ग्रंथ थके निशि वासर गाते ॥
शेष थके शिव इंद्र थके पुनि, खोज कियो बहु भाँति विधाँते ॥
पीर थक पुनि मीर थके पुनि, धीर थके बहु बोलि गिराते ॥
सुंदर मौन गही सिद्ध साधक, कौन कहै उसकी मुख बाते ॥१४॥
योगि थके कहि जैन थके ऋषि, तापस थाकि रहे फल खाते ॥
संन्यासि थके वनवासि थके जु, उदासि थके बहु फेर फिराते ॥
शेषहु शालिक और हु लाइक, थाकि रहे मनमें मुसकाते ॥
सुंदर मौन गही सिद्ध साधक, कौन कहै उसकी मुख बाते ॥१५॥

इति आश्चर्यको अंग संपूर्ण ॥ ३४ ॥

इति श्रीसुन्दरविलास समाप्त ।

---

१ ठीक । २ वायु । ३ घर । ४ अथाह । ५ स्त्री । ६ बाकी । ७ प्रजा ।

श्रीपरमात्मने नमः ।

ज्ञानसमुद्र.

अथ गुरुशिष्यलक्षण निरूपणो नाम प्रथमोल्लासः १.

मंगलाचरण । छप्पय छंद ।

प्रथम बंदि परब्रह्म, परम आनंद स्वरूपं ॥
द्वितिय बंदि गुरुदेव, दियो जिहिं ज्ञान अनूपं ॥
तृतिय बंदि सब संत, जोरि कर तिनके आगे ॥
मन वच काय प्रणाम, करत भय भ्रम सब भागे ॥
इहिभांति मंगलाचरणकरि, सुंदर ग्रंथ बखानिये ॥
तहँ विघ्न कोउ उपजे नहीं, यह निश्चय करि मानिये ॥ १ ॥

दोहा छन्द ।

ब्रह्म प्रणम्य प्रणम्य गुरु, पुनि प्रणम्य सब संत ॥
करत मंगलाचरण इह, नाशत विघ्न अनंत ॥ २ ॥
उहै ब्रह्म गुरु संत उह, वस्तु विराजत एक ॥
वचनविलास विभाग त्रय, वंदन भाव विवेक ॥ ३ ॥

ग्रंथवर्णन । दोहा ।

वरण्यो चाहत ग्रंथको, कहां बुद्धि मम क्षुद्र ॥
अति अगाध मुनि कहतहैं, सुंदर ज्ञान समुद्र ॥ ४ ॥

---

१ नमस्कार । २ अद्भुत । ३ हाथ । ४ बाधा । ५ बेशुमार । ६ हिस्साखंड । ७ तीन । ८ छोटी-स्वल्प ।

चौपाई छंद ।

ज्ञानसमुद्र ग्रंथ अब भाषों । बहुत भाँति मनमें अभिलोषों ॥
यथाशक्ति हो वरणि सुनाऊं । जो सद्गुर पहिं आज्ञा पाऊं॥५॥

सोरठा छंद ।

है यह अति गंभीर¹, उठत लहरि² आनंदकी ॥
मिष्ट सु याको नीर³, सकल पदारथ मध्य है ॥ ६ ॥

इंदव छन्द ।

जाति जिती सब छदनकी बहु, सीप भई इहि सागरमाहीं ॥
है तिनमें मुकताफल⁷ अर्थ, लहै उनको हितसों अवगाहीं ॥
जे नर जान कहावतहैं अति, गर्व भरे तिनकी गमि नाहीं ॥
सुंदर पैठि सकै नहिं जीवत, है बुडकी मारि जीवहिं जाहीं॥७॥

जिज्ञासुलक्षण । सवैया छंद ।

जे गुरु भक्त विरक्त जक्तसों, है तिनके संतनको भाव ॥
वे जिज्ञासु उदास रहत हैं, गिनत न काहू रंक न राव ॥
वाद विवाद करत नहिं कबहूँ, वस्तु जानिवेको अति चावे ॥
सुंदर जाकी मति है ऐसी, सो पैठेंगे यहि दरियाव ॥ ८ ॥

छप्पय छंद ।

सुत कलत्र निज देह, आपको बंधन जानत ॥
छूटों कौन उपाय, यहै उर अंतर आनत ॥
जन्म मरणकी शंक, रहै निशि दिन मनमाहीं ॥
चौरासीके दुःख, नहीं कछु वरणे जाहीं ॥
इहि भांति रहत शोचत सदा, संतनको पूछत फिरै ॥
है कोइ ऐसो सतगुरू, जो मेरो कारज करै ॥ ९ ॥

---

१ इच्छा । २ बलानुसार । ३ गहरा । ४ तरंग । ५ पानी । ६ वस्तु
७ मोती । ८ स्नान करना ।

गुरुदेवकी दुर्लभता । चौपय्या छन्द ।

गुरुदेव बिना नहिं मारग सूझै, गुरुबिन भक्ति न जाने ॥
गुरुदेव बिना नहिं संशै भाजै, गुरु बिनु लहै न ज्ञाने ॥
गुरुदेव बिना नहिं कारज होई, लोक वेद यों गावै ॥
गुरुदेव बिना नहिं सतगति कोई, गुरु गोबिंद बतावै ॥ १० ॥

तोटक छन्द ।

गुरुदेव बिना नहिं भाग जगै, गुरुदेव बिना नहिं प्रीति लगै ॥
गुरुदेव बिना नहिं शुद्ध हुई, गुरुदेव बिना नहिं मोक्षपई ॥११॥

मनहर छंद ।

गुरुके प्रसाद बुद्धि, उत्तम दशाको गहै;
गुरुके प्रसाद भँव, दुःख बिसराइये ॥
गुरुके प्रसाद प्रेम, प्रीतिहु अधिक बढै;
गुरुके प्रसाद राम, नाम गुण गाइये ॥
गुरुके प्रसाद सब, योगकी जुगति जानै;
गुरुके प्रसाद शून्य में, समाधि लाइये ॥
सुंदर कहत, गुरुदेव जो कृपालु होई;
गुरुके प्रसाद, तत्त्वज्ञान पुनि पाइये ॥ १२ ॥

दोहा छंद ।

गुरुके शरणाहिं आइये, तबहीं उपजै ज्ञान ॥
तिमिरें कहो कैसे रहै, प्रकट होइ जब भान ॥ १३ ॥

गुरुलक्षण । रोला छन्द ।

चित्त ब्रह्म लय लीन, नित्त शीतलसो हिर्दैयें ॥
क्रोधरहित सब साधि, साधु पद नाहिंन निर्दय ॥

---

१ रास्ता । २ मुक्ति । ३ संसार । ४ अंधकार । ५ अंतःकरण ।

अहंकार नहिं लेश[1], महंत[2] सबन सुख दिज्जय ॥
शिष्य परिक्ष्य विचारि, जगत महिं सो गुरु किज्जय ॥१४

छप्पय छन्द ।

सदा प्रसन्न स्वभाव, प्रगट सर्वोपर राजय ॥
तृप्ति ज्ञान विज्ञान, अचल कूटस्थ विराजय ॥
सुखनिधान सर्वज्ञ, मान अपमान न जाने ॥
सारासार विवेक, सकल मिथ्या भ्रम माने ॥
भिद्यंते[3] हृदय ग्रंथिको, छिद्यंते[4] सब संशया ॥
कहि सुंदर सो सतगुरु सही, चिदानंद घनचिन्मया[5] ॥१५

पमंगल छंद ।

शब्द ब्रह्म परिब्रह्म, भली विध जानिये ।
पांचतत्त्व गुण तीन, मृषा करि मानिये ॥
बुद्धिवंत सब संत, कहैं गुरु सोइ रे ।
और ठौर शिष जाइ, भ्रमे जिनि कोइ रे ॥ १६ ॥

नदि छंद ।

ब्रह्मभूत अवस्था जा महिं होई, सुंदर सोई सतगुरु जाने कोई ॥१७

सोरठा छंद ।

ऐसे गुरुपै आइ, प्रश्न करै कर जोरिकै ॥
शिष्य मुक्त ह्वै जाइ, संशय कोई ना रहै ॥ १८ ॥

गुरुदेवकी प्राप्ति । चौपाई छन्द ।

खोजत खोजत सतगुरु पायो । भूरिभाग्य[6] जाग्यो शिष्य आयो
देखत दृष्टि[7] भयो आनंदा । यह तो कृपा करी गोविंदा॥१९

---

१ जरासा । २ महात्मा । ३ विदीर्ण-करना । ४ काटना । ५ ई[...] चैतन्य । ६ बडीभाग्य । ७ नजर ।

दोहा छन्द ।

गुरुको दरशन पायके, शिष पायो संतोषु ॥
कारज मेरो अब भयो, मनमें मान्यो मोषु ॥ २० ॥

शिष्यकृत प्रार्थनाष्टक । सोरठा छन्द ।

शीश नाइ कर जोरि, शिष्य सु प्रारथना करी ॥
हे प्रभु लीजै छोरि, अभयदान मोहिं दीजिये ॥ २१ ॥

अर्द्धभुजंगी छंद ।

अहो देव स्वामी, अहैं अंध कामी ॥
कृपा मोहिं कीजै, अभैदान दीजै ॥ २२ ॥
बडे भाग मेरे, लहे अंघ्रि[1] तेरे ॥
तुम्हैं देखि जीजै, अभैदान दीजै ॥ २३ ॥
प्रभू हौं अनाथा[2], गहो क्यों न हाथा ॥
दया क्यों न कीजै, अभैदान दीजै ॥ २४ ॥
दुखी दीन प्रानी, कहो ब्रह्म वानी ॥
हुदो प्रेम भीजै, अभैदान दीजै ॥ २५ ॥
जिते जैन देखे, सबै वेष पेखे ॥
तुम्हैं चित्त धीजै, अभैदान दीजै ॥ २६ ॥
फिरचों देश देशा, किये दूरि केशा ॥
नहीं यों पतीजै, अभैदान दीजै ॥ २७ ॥
गयो आयु सारो, भयो शोच भारो ॥
वृथा देह छीजै, अभैदान दीजै ॥ २८ ॥
करो मौज ऐसी, रहै बुद्धि वैसी ॥
सुधा[4] नित्य पीजै, अभैदान दीजै ॥ २९ ॥

---

१ चरण । २ यतीम । ३ पकरो । ४ अमृत ।

गुरुदेवकी प्रसन्नता । सोरठा छंद ।

मुदित भये गुरुदेव, देखि दीनता शिष्यकी ॥
सबै बताऊं भेव, जोई जो तू पूछिहै ॥ ३० ॥

शिष्यकी प्रसन्नता । पद्धरी छन्द ।

कर जोरि उभै शिष करि प्रणाम, तब प्रश्न कीन मन धरि विराम ॥
हो कौन कौन यह जगत आहि, पुनिजन्म-मरण प्रभु कहहु काहि ॥३१॥

श्रीगुरुरुवाच । बोधक छन्द ।

है चिदानंदघन ब्रह्म तु सोई, देह सँयोगते जिवत भ्रम होई ॥
जगत है सकल यह अनछतो जानो, जनम अरु मरण यह स्वप्न करि मानो ॥ ३२ ॥

शिष्य उवाच । गीतक छन्द ।

जो चिदानंद स्वरूपस्वामी, ताहि भ्रम कहो क्यों भयो ।
तिहि देहके संयोग ह्वैके, जिवत मानी क्यों लह्यो ॥
यह अनछतो संसार कैसे, जो प्रत्यक्ष प्रमानिये ।
जनम मरण प्रवाँह जैसो, स्वप्नकरि क्यों जानिये ॥३३॥

श्रीगुरुरुवाच । दोहा छन्द ।

भ्रमहीको भ्रम ऊपजे, चिदानंद रस एक ॥
मृगजल प्रत्यक्ष देखिये, तैसे जगत विवेक ॥ ३४ ॥

चौपाई छन्द ।

निद्रामें सूतो है जौलों । जनम मरणको अंत न तौलों ॥
जागि परे तब स्वप्न बखाना । तब मिटि जाइ सकल अज्ञाना ॥३५॥

---

१ प्रसन्न । २ दोनों । ३ धारा । ४ ज्ञान । ५ आखिर । ६ मूर्खता ।

शिष्य उवाच । सोरठा छंद ।

स्वामी यह संदेह, जागै सोवै कौन सो ॥
यह जो जड मन देह, भ्रमहीको भ्रम क्यों भयो ॥ ३६ ॥

श्रीगुरुरुवाच । कुंडलिया छं ।

शिष्य कहाँलों पूछि है, मैं तो उत्तर दीन ॥
जबलगि चित्त न आइ है, तबलगि हृदय मलीन ॥
तबलगि हृदय मलीन, यथारेथ कैसे जाने ॥
भ्रमे त्रिगुणमें बुद्धि, आप नहीं पहिचाने ॥
कहिबो सुनिबो करत, ज्ञान नहिं उपजे जहँलों ॥
मैं तो उत्तर दीन शिष्य, पूछैगो कहँलों ॥ ३७ ॥

इति श्रीसुंदरदासविरचिते ज्ञानसमुद्रे गुरुशिष्यलक्षणनिरूपणं नाम प्रथमोल्लासः ॥ १ ॥

अथ उत्तम मध्यम कनिष्ठ भक्तियोग निरूपणं नाम द्वितीयोल्लासः २.

शिष्य उवाच । दोहा छन्द ।

स्वामी हृदय मलीन मम, शुद्ध कवन विधि होइ ॥
सोई कहो विचारिकै, संशय रहै न कोइ ॥ १ ॥

श्रीगुरुरुवाच । चौपाई छंद ।

सुनहु शिष्य यह तीनि उपाई । भक्तियोग हठयोग कराई ॥
पुनि सांख्य सुयोगहि तोहिं बतावै । तब तू शुद्ध स्वरूपहि पावै ॥ २ ॥

शिष्य उवाच । पद्धरी छंद ।

अब भक्ति कहो गुरु कै प्रकार, हठयोग अंग पाऊं विचार ॥
पुनि सांख्य सुयोग बताउ नाथ, भवसागर बूडत गहहु हाथ ॥३॥

---

१ मैला । २ जैसाहै तैसा । ३ द्विविध । ४ तरह । ५ पकरो ।

श्रीगुरुरुवाच । सवैया छंद ।

शिषि प्रथमहिं नवधाभक्ति कहतों, नवप्रकार है ताको भेद ॥
दशवीं प्रेमलक्षणा कहिये, सो पावै जो है निर्वेद ॥
पराभक्ति है ताके आगे, सेवक सेव्य न होइ विछेद ॥
उत्तम मध्य कनिष्ठ तीनि विधि, सुंदर मिटी है इतने खेद॥४॥

शिष्य उवाच । छप्पय छंद ।

अब नवधा भक्ति बखानि, कहो गुरु भिन्नकरि।
प्रेमलक्षणा कौन, सुनावहु शीशं हाथ धरि ॥
पराभक्तिको भेद, कहो गुरु कौन प्रकारा ।
को उत्तम को मध्य, कौन कनिष्ठ निरधारा ॥
यह दयासिंधु मोसों कहो, तुम समान नहिं कोइ है ।
जब कृपा कटाक्षहि देखिहो, तब मम कारज होइ है ॥५॥

श्रीगुरुरुवाच । चौपाई ।

सुन शिषि नवधा भक्ति विधान । श्रवण कीर्त्तन सुमिरण जान ।
पाद सेवनहु अर्चन वंदन । दास्यभाव सख्यत्व समरपन ॥ ६ ॥

सोरठा छंद ।

यह नव अंगनिं जानि, सहित अनुक्रमैं कीजियो ।
सबहिनको सुखदानि, भक्ति कनिष्ठा यह कही ॥ ७ ॥

शिष्य उवाच । मालती छंद ।

श्रवण प्रभु कौनको कहिये । कीर्त्तन कौन विधि लहिये ॥
अरु सुमिरण कौन कहि दीजे । चरण सेवा सो क्यों कीजे ॥८॥
अर्चना कौन विधि होई । वंदना कहो गुरु सोई ॥
दास्य सख्यत्व पहिचानो । निवेदन आतमा जानो ॥ ९ ॥

---

१ छोटा । २ दुःख । ३ अलग अलग । ४ हमारा । ५ रीत । ६ गाना । ७ रीतवार । ८ पूजन ।

सोरठा छंद।

एक एक को भेव, मोहिं अनुक्रम सों कहो ॥
तुम कृपालु गुरुदेव, पूछत विलग न मानिये ॥ १० ॥

श्रीगुरुरुवाच। चंपक छन्द।

शिष्य तोहिं कहों सुनु वानी। सब संतनि साखि बखानी ॥
द्वै रूप ब्रह्मके जानो। निर्गुण सगुण पहिचानो ॥ ११ ॥
निर्गुण निजरूप नियारा। पुनि सगुण संत अवतारा ॥
निर्गुणकी भक्ति सु मनसों। संतनकी मन अरु तनसों ॥ १२ ॥

श्रवणभक्ति वर्णन।

एकाग्रेहि चित्त जु राखै। हरिगुण सुनि रसना चाखै ॥
पुनि सुनै संतके बैना। यह श्रवणभक्ति सुखचैना ॥ १३ ॥

कीर्त्तन भक्ति वर्णन।

हरिगुण रसना गिन गावै। अतिही कर प्रेम बढावै ॥
यह भक्ति जु कीर्त्तन कहिये। पुनि गुरु प्रसादते लहिये ॥ १४ ॥

स्मरण भक्ति वर्णन।

अब सुमिरण दोय प्रकारा। इक रसना नाम उचारा ॥
इक हृदय नाम ठहरावै। यह सुमिरणभक्ति कहावै ॥ १५ ॥

पादसेवन भक्ति वर्णन।

निज चरणकमल महि लोटै। मनसा कारि पाइँ पलोटै ॥
यह भक्ति चरणकी सेवा। समुझावत हैं गुरु देवा ॥ १६ ॥

अर्चन भक्ति वर्णन। चामर छन्द।

अब अर्चनाको भेद सुनु, शिषि देउँ तोहिं बताइ ॥
आरोपिकै तहँ भाव अपनो, सेइये मन लाइ ॥

---

१ एकान्त। २ जीभ। ३ वचन, बात। ४ कृपा।

रचि भावको मंदिर अनूपम¹, सकल मूरति मांहि ॥
पुनि भाव सिंहासन विराजै, भाव बिनु कछु नाहिं ॥ १७ ॥
निज भावकी तहँ करै पूजा, बैठि सन्मुख दास ॥
तहँ भावहीको कलश भरि धरि, नित्य स्वामी पास ॥
त्यों भावहीको उबटनो करि, भाव नीर नह्वाइ ॥
करि भावहीके बसन बहुविधि, अंग अंग बनाइ ॥ १८ ॥
तहँ भाव केशर भाव चंदन, भाव करि घसि लेहु ॥
पुनि भावही करि चरचि स्वामी, तिलक मस्तक देहु ॥
लै भावहीके पुष्प उत्तम, गुहै माल अनूप ॥
पहिराइ प्रभुको निरखि नखशिख, भावसे दे धूप ॥ १९ ॥
तहँ भावही लै धरै भोजन, भाव लावे भोग ॥
पुनि भावही करिके समर्पै, सकल प्रभुको योग ॥
तहँ भावहीको जोइ दीपक, भाव घृत करि सींच ॥
तहँ भावहीकी करै थारी, धरै ताके बीच ॥ २०
तहँ भावकी घंटा रु झालरि, शंख ताल मृदंग ॥
तहँ भावहीके शब्द नाना, रहे अति सों रंग ॥
तहँ भावहीकी आरती करि, कराहि बहुत प्रणाम ॥
तहँ स्तुति बहुविधि उच्चर, धुनि सहित लै लै नाम ॥ २१ ॥

अथ स्तुत्यष्टक। मोतीदाम छंद।

अहो हरि देव न जानत सेव, अहो हरि राइ परो तेरे पाइ ॥
सुनो यह गाथ गहो मर्म हाथ, अनाथ अनाथ अनाथ अनाथ ॥२२॥
अहो प्रभु नित्य अहो प्रभु सत्य, अहो अविनाशि अहो अविगत्य ॥
अहो प्रभु भिन्न दिसेजु प्रकृत्य, निहत्य निहत्य निहत्य निहत्य॥२३॥
अहो प्रभु पावन नाम तुम्हार, भजै तिनके सब जाहिं विकार ॥

१ विचित्र। २ देखना। ३ प्रशंसा। ४ मेरा। ५ अमर। ६ पवित्र। ७ मलीनता।

करी तुम संतनकी जु सहाइ, अहो हरि हो हरि हो हरि राइ ॥ २४ ॥
अहो प्रभु हो सर्वज्ञ[1] सयाँन[2], दिवो तुम गर्भहिते पय[3] पान ॥
सो त्यों अब क्यों न करो प्रतिपाल, अहो हरि हो हरि हो हरि लाल २५
भजै प्रभु ब्रह्म पुरंद्र महेश, भजै सनकादिक नारद शेश ॥
भजै पुनि और अनेकहि साध, अगाध अगाध अगाध अगाध ॥२६॥
अहो सुखधाम कहै गुणि नाम, अहो सुखदैन कहै मुनि बैन ॥
अहो सुखरूप कहै मुनि भूप, अरूप[4] अरूप अरूप अरूप ॥ २७ ॥
अहो युग आदि अहो युग अंत, अहो युग मध्य कहैं सब संत ॥
अहो युग जीवन हो युग जंत, अनंत अनंत अनंत अनंत ॥ २८ ॥
अहो प्रभु बोलि सके कहो कौनु, गृही सिद्ध साधकही मुख मौन ॥
गिरा[5] मन बुद्धि न होइ विचार, अपार[6] अपार अपार अपार ॥ २९ ॥

दोहा छन्द ।

बहुत प्रशंसा[7] करि कहूं, हौं प्रभु अति अज्ञान ।
पूजा विधि जानौं नहीं, शरण राखु भगवान ॥ ३० ॥

वंदना भक्तिवर्णन । लीला छन्द ।

वंदन दोइ प्रकार कहे शिष संभलियं ।
दंड समान करै तिनसों कर दंड दियं ॥
ज्यों मन त्यों तन मध्य प्रभूके पायँ परै ।
विधि दोय प्रकार सु वंदन भक्ति करै ॥ ३१ ॥

दासत्व भक्तिवर्णन । हंसाल छन्द ।

नित्य भवसों रहे हस्त[8] जोरे कहे;
कहा प्रभु मोहिं आज्ञा सु होई ॥
पलक पतिव्रता पतिवचन खंडे नहीं;
भक्ति दासत्व[9] शिष जानि सोई ॥ ३२ ॥

---

१ सब जाननेवाले । २ चतुर । ३ दुग्ध-दूध । ४ निराकार । ५ वाणीवचन । ६ असीम । ७ बडाई तारीफ । ८ हाथ । ९ सेवकाई ।

सख्यत्व भक्तिवर्णन । दुमिला छन्द ।

सुनु शिष्य शिषापन ताहिं कहैं, हरि आतमके नित संग रहै ॥
पल छांड़त नाहिं समीप सदा, जिनहीं तिनकूं यह जीव बहै ॥
अब तूं फिरिके हरिसों हित राख हि, होहि सखा दृढ़ भाव गहै॥
जिमि सुंदर मित्रनि मित्र जपे, यह भक्ति सखापन वेद कहै ॥३३॥

आत्मनिवेदन भक्तिवर्णन । दोहा छन्द ।

प्रथम समर्पण मन करै, द्विविय समर्पण देह ॥
तृतिय समर्पण धन करै, चतुर समर्पण गेह ॥ ३४ ॥

मोतीदाम छन्द ।

गेहं दारां धनं, दास दासी जनं;
वाँजि हाथी गनं, सर्व देवो भनं ॥
और जे में तनं, है प्रभू ते तनं;
शिष्य वाणी सुनं, आतमा अर्पनं ॥ ३५ ॥

दोहा छन्द ।

नवधा भक्तिसु यह कही, भिन्न भिन्न समुझाइ ॥
याको नाम कनिष्ठ है, शिष्य सुनहु चितलाइ ॥ ३६ ॥

प्रेमलक्षणा वर्णन ।

शिष्य उवाच । रासा छन्द ।

हे प्रभु मोसों कही तुम नौधाभक्ति अह ॥
फेरि कहो समुझाइ सुजान कनिष्ठ यह ॥
मध्यहिं भक्ति सुनाय कृपा करि क्यों न अब ॥
जानत हो गुरुदेव जु औसर होइ कब ॥ ३७ ॥

---

१ शिक्षा । २ मजबूत । ३ अर्पण देना । ४ चौथा । ५ घर । ६ स्त्री । ७ घोडा । ८ देना ।

श्रीगुरुरुवाच । सोरठा छंद ।

शिष्य सुनाऊँ तोहिं, प्रेम लक्षणा भक्तिको ॥
सावधान अब होहिं, जो तेरे शिर भाग्य है ॥ ३८ ॥

इंदव छंद ।

प्रेम लग्यौं परमेश्वरसों तब, भूलि गयो सिगरो घर वारा ॥
ज्यों उनमैत्त फिरै जितही तित, नेक रही न शरीर सँभारा ॥
श्वास उसांस उठे सब रोम, चलै दृग नीर अखंडितँ धारा ॥
सुंदर कौन करै नवधा विधि, छाकि परचौ रस पी मतवारा॥ ३९॥

नाराच छंद ।

न लाज मीन लोककी न वेदको कह्यो करे ।
न शंक भूत प्रेतकी न देव यक्षते डरे ॥
सुने न कान औरकी द्रसै न और इच्छना ।
कहै न मूख और वात, भक्ति प्रेमलच्छना ॥ ४० ॥

रंगीक्ता छंद ।

निशि दिन हरिसों चित्तासक्ती, सदा लग्यो सो रहिये ॥
सुंदर कोइ न जानि सके यह, भक्ति सु प्रेमलक्षणा कहिये ॥ ४१ ॥

बीजुमाला छंद ।

प्रेम अधीनों छाक्यो डोलै । क्योंको क्योंहीं वाणी बोलै ॥
जैसे गोपी भूलीं देहा । तैसो चाहे जासों नेहा ॥ ४२ ॥

छप्पय छंद ।

कबहुँ हँसी उठि नृत्य, करै रोवन फिर लागे ।
कबहुँक गद्गदकंठ, शब्द निकसे नहिं आगे ॥
कबहुँक हृदय उमंग, बहुत ऊंचे स्वर गावे ।
कबहुँक ह्वै मुख मौन, गर्गन ऐसे रहि जावे ॥ ४३ ॥

---

१ बावला । २ उलटी साँस । ३ आँख ।४ अटूटा ।५ मुक्तकंठ ।६आकाश ।

चित्त वित्त हरिसों लग्यो, सावधान कैसे रहै ।
यह प्रेमलक्षणाभक्ति है, शिष्य सुनहु सुंदर कहै ॥ ४३ ॥

मनहर छन्द ।

नीर विनु मीनं दुखी, क्षीर विनु शिशुं जैसे,
पीरँकी औषँधि विनु, कैसे रह्यो जात है ॥
चातक ज्यों स्वाति बूंद, चंदको चकोर जैसे;
चंदनकी चाहि करि, सर्प अकुलांत है ॥
निर्धनं ज्यों धन चाहे, कामिँनीको कँत चाहे;
ऐसी जाके चाह नाहिं, कछु न सुहात है ॥
प्रेमको प्रवाह ऐसो, प्रेम तहाँ नेम कैसे;
सुंदर कहत यह, प्रेमहीकी बात है ॥ ४४ ॥

चौपैया छन्द ।

यह प्रेम भक्ति जाके घट होई, ताहि कछू न सुहावै ॥
पुनि भूख तृषाँ व्यापि नहिं ताके, निशिदिन नींद न आवै ॥
मुख ऊपर श्वासा पीरीसी है, नैन नीर झर लायो ॥
यह प्रगटै चिह्न दीसत है जाको, प्रेम न दुरै दुरायो ॥ ४५ ॥

दोहा छन्द ।

प्रेम भक्ति सो यह कही, जानत बिरला कोइ ॥
हिये कलुषतौं क्यों रहै, जा घट ऐसी होइ ॥ ४६ ॥

पराभक्तिवर्णन–शिष्य उवाच ।

चौपाई छंद ।

हे प्रभु प्रेमभक्ति यह गाई । सो तो तुम मध्यमा सुनाई ॥
उत्तम भक्ति परा प्रभु कैसी । करहु अनुंग्रह कहिये जैसी ॥ ४७ ॥

---

१ मछली । २ लडका–पुत्र । ३ पीडा । ४ दवा । ५ घबडाना । ६ दरिद्र । ७ स्त्री । ८ स्वामी । ९ धारा । १० प्यास । ११ जाहिर । १२ अंधता–मलीनता पाप । १३ कृपा ।

श्रीगुरुरुवाच दोहा छंद।

शिष्य तेरि श्रद्धा बडी, सुनिबेकी अति प्यास ॥
पराभक्ति तोसों कहों, जाते होइ प्रकास ॥ ४८ ॥

गीतक छंद।

विच्छेप¹ कबहुँ न होइ हरिसों, निकटवृत्य निवृत्यहीं ॥
तहँ सदा सनमुख रहै आगे, हाथ जोरे भृत्यहीं² ॥
पल एक कबहुँ न होइ अंतर, टकटकी लागी रहै ॥
यह पराभक्तिप्रकाश परिचय³, शिष्य सुन संतगुरु कहैं ॥४९॥

इंदव छंद।

सेवक सेव्य मिल्यो रसु पीवत, भिन्न नहीं अरु भिन्न सदाहीं ॥
ज्यों जल पिंड धर्यो जल बीचसु, पिंड रु नीरें⁴ जुदे कछु नाहीं ॥
ज्यों दृगमें पुतरी दृग एक, नहीं कछु, भिन्न रु भिन्न दिखाहीं ॥
सुंदर सेवकभाव सदा यह, भक्ति परा परमातम माहीं ॥ ५० ॥

छप्पय छंद।

श्रवण बिना धुनि सुनै, नयन बिनु रूप निहारे।
रसनाँ बिनु उच्चरै, प्रशंसा⁶ बहु विस्तारै ॥
नृत्य चरण बिनु करै, हस्त बिनु ताल बजावै।
अंग बिना मिलि संग, बहुत आनंद बढावै ॥
बिनु शीश नवे जहँ सेव्यको, सेवकभाव लिये रहै।
मिलि परमातमसों आतमा, पराभक्ति सुंदर कहै ॥ ५१ ॥

चंदना छंद।

सेव्यको जायके दास एसे मिले। एकसो होयपै एक द्वै ना मिले ॥
आपनो भाव दासत्व छांडे नहीं। सो पराभक्तिहै भाग्य पावै कहीं ॥५२॥

---

१ बिछोह-जुदाई। २ नौकर। ३ पहिचान। ४ पानी। ५ जिह्वा। ६ यश।

हरिसंपाणा छंद ।

मिलै एक संगा । नहीं भिन्न अंगा ॥
करै यों विलासा । धरै भाव दासा ॥ ५३ ॥

चौपाई छंद ।

ज्यों मृगतृष्णा धूप मँझारी । एक भेक अरु दीसे न्यारी ॥
त्योंही सेवक स्वामी एका । सुखविलास यह भिन्न विवेका ॥५४॥

तोटक छंद ।

हरिमें हरिदास विलास करै । हरिसों कबहूं न बिछोह परै ॥
हरि अक्षर त्यों हरिदास सदा । रस पीवनकूं यह भाव जुदा ॥५५॥

मनहर छंद ।

तेजोमय स्वामी तहूं, सेवकही तेजोमय;
तेजोमय चरणनीको, तेजो शिर नावही ॥
तेजोमय सब अंग, तेजोमय मुखारविंद;
तेजोमय निरखि नैन, तेजोमय भावही ॥
तेजोमय ब्रह्मकी, प्रशंसा करै तेजोमय;
तेजहीकी रसना, गुणानुवाद गावही ॥
तेजोमय सुंदरहू, भाव पुनि तेजोमय;
तेजोमय भक्तिहूंको, तेजोमय पावही ॥ ५६ ॥

दोहा छंद ।

त्रिविध भक्ति लक्षण कहैं, उत्तम मध्य कनिष्ठ ॥
शिष्य सुनहु सिद्धांत यह, उत्तम भक्ति गरिष्ठ ॥ ५७ ॥

इति श्रीसुंदरदासविरचिते ज्ञानसमुद्रे उत्तम मध्यम कनिष्ट भक्तियोग निरूपणं नाम द्वितीयोल्लासः ॥ २ ॥

---

१ दिखाई दे । २ मुखकमल । ३ मत ।

अथ अष्टांगयोग निरूपणं नाम तृतीयोल्लासः ३.

शिष्य उवाच । चौपाई छंद ।

हे प्रभु नवधा कही कनिष्ठा । प्रेमलक्षणा मध्य सुपष्ठा ॥
पराभक्ति उत्तमा बखानी । सो तीनों मैं नीके जानी ॥ १ ॥
अब प्रभु योग सिद्धांत सुनाओ । तिनके अंग मोहिं समुझाओ ॥
तुम सर्वज्ञ¹ जगतगुरु स्वामी । करहु कृपा अब अंतरयामी ॥ २ ॥

श्रीगुरुरुवाच । दोहा छन्द ।

तैं शिष पूछ्यो चाहि करि, योग सिद्धांत प्रसंग ॥
तोहिं सुनाऊं हेत करि, अष्ट योगके अंग ॥ ३ ॥
तिनके अंतरभूत है, मुद्राबंध समस्त² ॥
नाडी चक्र प्रभाव सब, आवै तेरे हस्त ॥ ४ ॥

छप्पय छंद ।

प्रथम अंग यम कहौं, दूसरो नेम बताऊं;
तिसरो आसन भेद, सुनो सब तोहिं सुनाऊं ॥
चतुरथ प्राणायाम, पंचमें प्रत्याहारं;
षष्ठम सुनि धारणा, ध्यान सप्तम विस्तारं ॥
पुनि अष्टहु अंग समाधि है, भिन्न भिन्न समुझावहूँ;
अब सावधान ह्वै शिष्य सुनु, सो सब तोहिं बतावहूँ ॥ ५ ॥

दोहा छन्द ।

दश प्रकारके यम कहौं, दश प्रकारके नेम ॥
उभय³ अंग पहिले संधे, तब पाछे ह्वै प्रेम⁴ ॥ ६ ॥

---

१ सर्व बातोंके जाननेहारे । २ सम्पूर्ण । ३ दोनों । ४ प्रीति ।

प्रथमहिं यम दृढ[1] कीजिये, तब ऊपर विस्तार[2] ॥
महिलायत जु डिगै नहीं, यों यम लेहु विचार ॥ ७ ॥

अथ यमको निर्णय । छप्पय छन्द ।

प्रथम अहिंसा सत्य, जानि अस्तेयकुं त्यागै;
ब्रह्मचर्य दृढ गहै, धृति क्षमसों अनुरागै ॥
दया बडो गुण माग, आर्यव रुद पुनि आनै;
मिताहार नित करै, सोइ नीकी विधि जानै ॥
यह दश प्रकारके यम कहे, हठप्रदीपिका ग्रंथमें;
जो पहिले इनको गहै, सो चलत योगके पंथमें ॥ ८ ॥

प्रथम अहिंसाको लक्षण । दोहा छन्द

मन करि दोष न कीजिये, वचन न लावै कर्म ॥
घात न कीजे देहसों, यहै अहिंसा[3] धर्म ॥ ९ ॥

द्वितीय सत्यको लक्षण । सोरठा छंद ।

सत्यसु दोय प्रकार, एक सत्य जो बोलिये ॥
मिथ्यों[4] सब संसार, दूजो सत्य सु ब्रह्म है ॥ १० ॥

तृतीय अस्तेयको लक्षण । चौपाई छन्द ।

सुनिये शिष अबहीं अस्तेयं, चोरी द्वै प्रकारकी हेयं ॥
तनुकी चोरी सबहिं बखानै, मनकी चोरी मनहीं जानै ॥ ११ ॥

चतुर्थ ब्रह्मचर्यको लक्षण । प्लवंगम छंद ।

ब्रह्मचर्य इहि भांति भली विधि जानिये ।
काम जु अष्ट प्रकार सही करि मानिये ॥
बाच काँछ दृढ वीर्य यतीही होयरे ।
और बात अब नाँहिं जितेंद्रिय कोयरे ॥ १२ ॥

---

१ मजबूत । २ फैलाव । ३ जानका न मारना । ४ झूठा ।

पंचम अष्टप्रकार मैथुनको लक्षण।

दोहा छंद।

नारी सुमिरण श्रवण सुनि, दृष्टि रु भाषण होइ ॥
नह्य वृतांत रु हास्य रति, बहुरि सपर्शहि कोइ ॥ १३ ॥

सोरठा छंद।

शिष्य सुनहु यह बेद, मैथुनै अष्ट प्रकार तजि ॥
कह्यो मुनीश्वर वेद, ब्रह्मचर्य तब जानिये ॥ १४ ॥

षष्ठ क्षमाका लक्षण । मालती छंद ।

क्षमा अब सुन शिष्य मोसों । सहनतो सब कहों तोसों ॥
दुःख दुष्ट दे ही ज्यों भारी । दुःसह मुख वचन पुनि गारी ॥१५॥
कबहुँ नाहिं क्षोभको पावै । उदधि ज्यों अग्नि बुझावै ॥
बहोरी तनु त्रास दै कोई । क्षमा करि सहे शिष्य सोई ॥ १६ ॥

सप्तम धृतिको लक्षण । इंदव छंद ।

धीरज धारि रहै अभिअंतर, जा दुख देहहि आय परै जू ॥
ऊठत बैठत बोलत चालत, धीरजही धरि पाँव धरै जू ॥
जागत सोवत जीवत पीवत, धीरजसों धरि योग करै जू॥
देव दई तहि भूतहि प्रेतहि, कालहुते कबँहू न डरै जू ॥ १७ ॥

अष्टम दयाको लक्षण । तोटक छंद ।

सब जीवनके हितका जु कहे, मन वाचक काय दयालु रहे ॥
सुखदायकहू सब भाव लिये, शिष्य जानि दया निरबैर हिये॥१८॥

नवम आर्जवको लक्षण ।

कोमल हृदय रहै निशिवासर, कोमल बोलै बानी ॥

१संभोग । २ सनहशील-सुशील । ३ शरीर ।

कोमल दृष्टि निहारै सबको, कोमलतां सुखदानी ॥
कोमल भूमि करै नीकी विधि, बीज वृद्धिं है आवै ॥
त्यों यह आर्जव लक्षण सुन शिष्य, योग सिद्धको पावै ॥ १९ ॥

दशम मिताहारको लक्षण । पद्धरी छंद ।

जो सात्विकं अन्न सु करे भक्षि ॥
अति तिक्तं न मधुं रस निरखि अँक्षि ॥
तजि भाग चतुरथ गहैं सार ॥
सुनु शिष्य कह्यो यह मिताहार ॥ २० ॥

शौचको लक्षण । चर्पट छंद ।

बाहिर भीतर मज्जंन करिये, मृतिकों जल करि वपुमलं हरिये ॥
रागादिक त्यागि हृद शुद्धं, शौच उभय शिष जानु प्रबुद्धं ॥ २१ ॥

दोहा छंद ।

दश प्रकार यह यम कहे, प्रथम योगकी अंग ॥
दश प्रकार अब नियम सुनु, भिन्न भिन्न परसंग ॥ २२ ॥

दशविधि नियम वर्णन । छप्पय छंद ।

तप संतोषहि गहै, बुद्धि आस्तिक जो आनै ॥
दान समुझिं कर देय, मानसी पूजा ठानै ॥
श्रवण सिधांते सुनै, लाज मति दृढ करि राखै ॥
जाप करै मुख मौन, तहाँ लगि वचन न भाखै ॥
पुनि होम करै इहविधिं तहाँ, जैसी विधि सतगुरु कहैं ॥
दश प्रकारको नियम यह, भाग्य विना कैसे लहैं ॥ २३ ॥

प्रथम तपको लक्षण । पाइक्त छंद ।

शब्द स्पर्श रूपहि तजनं, त्यों रस गंध नाहि भजनं ॥

---

१ मुलायम । २ सुकुमारता । ३ उन्नति–तरक्की । ४ सत्यवक्ता । ५ कडुवा । ६ मीठा । ७ आँखें । ८ छांडना । ९ मूल । १० स्नान । ११ मिट्टी । १२ शरीरका मैल ।

इंद्रिय स्वाद ऐसे हरणं; सो तप जानै नित्यं समरणं ॥ २४ ॥

द्वितीय संतोषको लक्षण। हंसाल छन्द।

देहकी प्रारब्धं आइ आगे रहै, कलपनां छांडि निश्चित होई ॥
पुनि यथा लाभसों वेद मुनि कहत हैं, परम संतोष शिष जानि सोई २९

तृतीय आस्तिक्यको लक्षण। सैवया छन्द।

शास्त्र रु वेद पुराण कहत हैं, शब्द ब्रह्मको निश्चय धार ॥
पुनि गुरुसंत सुनावत सोई, बारबार शिष ताहि विचार ॥
होइ कि नाहिं शोच मत आनहिं, अप्रतीतं हृदयते टारि ॥
करि प्रतीत विश्वासं आनि उर, यह आस्तिक्य बुद्धि निरधारि ॥२६॥

चतुर्थ दानको लक्षण। कुंडलिया छंद।

दान कहतहैं उभय विधि, सुनु शिष करिहि प्रवेश ॥
एक दान कर दीजिये, एक दान उपदेश ॥
एक दान उपदेश, सु तो परमारथ होई ॥
दुसरो जल अरु अन्न, बसनं करि पोषै कोई ॥
पात्र कुपात्र विशेष भली, भूमि उपजे धानं ॥
सुंदर देखि विचारि, उभय विधि कहिये दानं ॥ २७ ॥

पंचम पूजाको लक्षण। त्रिभंगी छंद।

तो स्वामी संगा। देव अभंगां। निर्मलं अंगा। सेवेजू ॥
करि भाव अनूपं। पाती पुष्पं। गंधं धूपं। खेवेजू ॥
नाहिं कोइ आशा। काटे पाशा। इहि विधि दासा। निष्कामें ॥
शिष ऐसे जानै। निश्चय आनै ॥ पूजा ठानै। दिन यामं ॥ २८ ॥

---

१ सजा। २ छोडना। ३ स्मरण। ४ भाग्य। ५ फर्ज करना। ६ अविश्वा
७ वस्त्र। ८ दोनों–दो। ९ अखंड। १० स्वच्छ। ११ निष्प्रयोजन।
२ प्रहर या पहर।

षष्ठ श्रवण सिद्धांतको । कुंडलिया छन्द ।

बाणी बहुत प्रकार हैं, तिनको नाहीं अंत ।
जोई अपने कामकी, सोइ सुनै सिद्धांत ॥
सोइ सुनै सिद्धांत, संत जन गावत होई ।
चित्त आनिके ठौर, सुनै जो नित मति सोई ॥
यथा हंस पयें पिये, रहै ज्योंकी त्यों पानी ।
ऐसे लेहै विचारि शिष्य, बहुविधै है वानी ॥ २९ ॥

सप्तम ह्रीको लक्षण । चामर छंद ।

लज्जा करै गुरु संतकी जब, तब सँरै सब काज ।
तन मन न डुलावे आपनो, करै लोकहूते माज ॥
लज्जा करै कुलकुटुंबकी, लांछन लगावै नाहिं ।
यह लाजते सब काज होई, लाज गहि मनमाहिं ॥ ३० ॥

अष्टम मतिको लक्षण । सैवया छंद ।

नाना सुख संसार जानिं तजि, तिनहिं देखि लोलुप ना होई ॥
स्वर्गादिककी करै न इच्छा, इहांमुत्र त्याग सुख दोई ॥
पुजा मान बडाई आदर, निंदा करै आन जो कोई ॥
या प्रकार मति निश्चय जाकी, सुंदर दृढ मति कहिये सोई॥३१॥

नवम जापको लक्षण–प्लुवंगल छंद ।

जाप नित्य व्रत धारि, करै मुख मौनसों ।
एक दोय घटिका जु, गहै मन पौनसों ॥
जो अधिका कछु होय, बडा अति भाग है ।
शिष्य तोहिं कहि दीन, भलो यह भाग है ॥ ३२ ॥

दशम होमको लक्षण । चामर छंद ।

अब होम दोय प्रकार सुनु शिष्य, कहों तोहिं बखानि ॥

---

१ दूध । २ बहुत प्रकार । ३ वचन, बात । ४ सिद्धि होना, अंजाम ।

इक अग्निमें संकल्प होमै, सो तौ प्रवृत्ती जानि ॥
जो निवृत्ति जिज्ञास, होई ताहि और न पोम ॥
सो ब्रह्म अग्नि प्रज्वालनीके, करै इंद्रिय होम ॥३३॥

दोहा छन्द।

दश प्रकार संयम कहे, दश प्रकार यह नेम ॥
योग ग्रंथमें लिखतुहै, मो समुझाये क्षेम॥३४॥

सोरठा छन्द।

शिष्य सुनाये तोहिं, उभय अंग यह योगके ॥
सावधान अब होहिं, अबहिं षडंग बखानि हों ॥ ३५ ॥

चौपाई छन्द।

प्रथम कहों शिष आसन भेदा। जाते रोग मिटें बहु खेदा ॥
ऋषि मुनि योगी ब्रह्म अराधे। तिन सब पहिले आसन साधे ३६

तोटक छन्द।

शिव जानत हैं सब योगकला। नित संग शिवा पुनि है अचला ॥
दृढ आसनते नहिं बिंद खसें। दृग देखत दंपति लोक हँसें ॥ ३७ ॥

कुण्डलिया छंद।

चौरासी लक्ष जीवकी, जाति कहतहैं वेद।
तितनेहीं आसन सबै, जानतहैं शिव भेद ॥
जानतहैं शिव भेद, और जानत नहिं कोई।
आपु दया तिन करी, सुगम करि दीने सोई ॥
लक्ष लक्षमें एक, एक काढें यम पासी।

---

१ लीन होना। २ अलग होना। ३ जलाना। ४ कुशल। ५ पार्वती। ६ स्त्रीपुरुष।

सुगम सबहिको किये, प्रगट आसन चौरासी ॥ ३८ ॥

दोहा छन्द ।

चतुरासी आसननिमें, सारभूत द्वै जानि ।
सिद्धासन पद्मासनै, नीके कहौं बखानि ॥ ३९ ॥

सिद्धासन लक्षण । मनहर छंद ।

एडी वाम पाँवकी, लगावै सिवनीके बीच;
वाही योनिठौर ताहि, नीके करि जानिये ॥
तैसेहिं जुगति करि, विधिसों भले प्रकार;
मेढ्हूके उपर दक्षिण, पाँव आनिये ॥
सरल शरीर दृढ, इंद्रिय संयम करि;
अचल उरध दृष्टि भ्रूके मध्य ठानिये ॥
मोक्षके कपाटको उघारत अवश्यमेवं,
सुंदर कहत सिद्ध आसन बखानिये ॥ ४० ॥

पद्मासन । छप्पय छन्द ।

दक्षिण उरु उपरेहि प्रथम वामहिं पग आनै ।
वामहिं उरु ऊपरे तबहिं दक्षिण पग ठानै ॥
दोऊ कर पुनि फेरि पृष्ठ पीछे करि आवे ॥
दृढकै गहै अंगुष्ठ चिबुके वक्षस्थल लावे ॥
इहि भांति दृष्टि उनमेष करि, अग्र नासिका राखि है ॥
सब व्याधि हरण योगीनकी, पद्मासन यह भाखि है ॥४१॥

पद्धरी छन्द ।

शिष्य और जु आसन हरे रोग । इन दोय आसन साधै योग ॥
तातें तूं ए अब उभय साधि । जबलगि पहुँचै निर्भय समाधि॥४२॥

---

१ सहज । २ विदित–जाहिर । ३ चौरासी । ४भग । ५ सीधा । ६निश्चल । ७ ऊपर । ८ किवांड । ९ जरूर वा निश्चै । १० पीठ । ११ ठुड्डी । १२ छाती ।

प्राणायाम लक्षण। बिजूमाला छन्द।

आगे कीजे प्राणायामं। नाडीचक्रं पावै ठामं॥
पूरै राखे रेचक कोई। हो निष्पापं योगी सोई॥ ४३॥

दोहा छन्द।

नाडी कही अनेक विधि, हैं दश मुख्य विचार॥
इडा पिंगला सुषुमना, सबसे ए त्रय सार॥ ४४॥

तीननाड़ी वर्णन। छप्पय छंद।

बाम इडा स्वर जानि चंद्र, स्वर कहिये वाको॥
दक्षिण स्वर पिंगला, सूर्यमय जानौ ताको॥
मध्य सुषुमना बहै, ताहि जानत नहिं कोई॥
है यह अग्नि स्वरूप, काज याहीते होई॥
जब इडा पिंगला गति थकै, प्राणायाम प्रभावते॥
तब चलै सुषुमना उलटिकै, सुख पावै घट चावसे॥ ४५॥

दशवायु वर्णन। दोहा छन्द।

दश प्रकारके पवन हैं, भाषौं ताके नाम॥
केह बिना नाहिं जानिये, कौन ठौर निश्रॉम॥ ४६॥

चौपाई छन्द।

प्राणापान समानहिं जानौ। व्यानोदान पंच मन मानौ॥
नाग कूर्म रु कृकल सु कहिये। देवदत्त सु धनंजय लहिये॥ ४७॥

कुंडलिया छन्द।

प्राण हृदयमें बसत है, गुद मंडलै अपान।
नाभि समानहिं जानिये, कंठहि बसै उदान॥

---

१ अनघ, पापरहित। २ भाँति। ३ प्रधान। ४ आराम।

कंठहि बसै उदान, व्यान व्यापक ग्रद सारे ॥
नाग करैं उद्गारे, कूर्म सु पलक उघारे ॥
कृकलसों उपजे क्षुधा, देवदत्तहि जंभानं ॥
मरे धनंजय होइ, पंच पूरव सो प्रानं ॥ ४८ ॥

दोहा छन्द ।

चक्र अनुक्रम कहतहों, सुनु शिष ताके नाम ॥
पीछे तोहिं बतायहों, विधिसों प्राणायाम ॥ ४९ ॥

चक्र अनुक्रम । पद्धरी छंद ।

शिष प्रथम चक्र आधार जानि, तहँ अक्षर चारि चतुर्दसानि ॥
पुनि व श ष स वर्ण विचारि लेहु, है सब शरीर आधार येहु॥५०॥
पुनि स्वधिष्ठान सु द्वितीय चक्र, तहँ षट दल षट अक्षर अवक्र ॥
गानि ब भ म य र ल ये वर्ण मध्य, सो ब्रह्मचक कहिये प्रसिद्ध॥५१॥
मणिपूरक चक्र दल दल प्रभाव, पुनि अक्षर दशते उक्त नांव ॥
तहँ ड ढ ण त थ द ध न प फ प्रमानि, इन वर्णसहित तृतिये बखानि॥
पुनि अनहत चक्र है हृदय माहिं, दल अक्षर द्वादश अधिक नाहिं ॥
क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ समेत, शिष्य चक्र चतुर्थय समझि हेत॥
सुनि पंचम चक्र विशुद्ध आहि, दल अक्षर षोडशैं लगे ताहि ॥
तहँ आदि अकार अःकार अंत, शुभ षोडशस्वर ताके गनंत॥५४॥
अब आज्ञाचक्रसु भुव मँझार, लखि द्वै दल द्वै अक्षर विचार ॥
तहँ हंसँ वर्ण अक्षर अनूप, यह षष्ठहुचक्र कह्यो स्वरूप ॥ ५५ ॥
जब इन षटचक्रन वेधि जाइ, तब उहै सुषमना सुख समाइ ॥
याहीते प्राणायाम सार, सुनु शिष्य कहों ताको विचार ॥५६॥

---

१ डकार । २ भूख । ३ लगातार । ४ अतिपवित्र । ५ सोऽहं । ६ आत्मा ।

प्राणायामकी क्रिया । दोहा छंद ।

इडा नाडि पूरक करै, कुंभक राखै माहिं ।
रेचक करिये पिंगला, सब पातक कटि जाहिं ॥ ५७ ॥

सोरठा छंद ।

बीज मंत्र संयुक्त, षोडश पूरक पूरिये,
चौसठ कुंभक युक्त, द्वात्रिंशत् करि रैचना ॥ ५८ ॥

चौपाई छंद ।

बहुरि विपर्यय ऐसे धारै । पुरी पिंगला इडा निकारै ॥
कुंभक राखि प्राणको जीतै । चतुर्वार अभ्यास व्यतीतै ॥ ५९ ॥

चामर छंद ।

यह ऋषिन युक्ति सुनाइ है, यह भाँति प्राणायाम ॥
सतगुरु कृपाते पाइये, मन होइ अति विश्राम ॥
अब सब मतांतर कहत हौं, सुनु शिष्य आनि प्रभाव ॥
गोरखउक्ति बखानि हौं, तिहि सुनत उपजै चाव ॥ ६० ॥

अथ गोरखउक्ति । चर्पट छन्द ।

सोहं सोहं सोहं हंसो, सोहं सोहं सोहं अंसो ॥
श्वासो श्वासं सोहं जापं, सोहं सोहं आपे आपं ॥६१॥
द्वादश मात्रा पूरक भरणं, द्वादश मात्रा कुंभक करणं ॥
द्वादश मात्रा रेचक जानं, पूर्वा पूर्व विपर्यय ठानं ॥६२॥
अधमें मात्रा द्वादश युक्तं, मध्यम मात्रा द्विगुणा युक्तं ॥
उत्तम मात्रा त्रिगुणी कहिये, प्राणायाम सु निर्णय लहिये ॥ ६३ ॥

सोरठा छन्द ।

कुंभक अष्टसु विद्ध, मुद्रा दशहि प्रकारकी ॥
बंध तीन तिन मध्य, उत्तम साधन योगके ॥ ६४ ॥

---

१ पाप । २ साथ । ३ बत्तीस । ४ फिर । ५ मैंहूं ।

कुंभकप्रकार वर्णन । छप्पय छंद ।

सूर्य भेद न प्रथम, द्वितीय ऊजाई कहिये ॥
शीतकार पुनि तृतिय, शीतली चतुरथ अहिये ॥
पंचम है भद्रिका, भ्रामरी षष्ठम जानहु ॥
मूर्छ नाम सप्तमं, अष्टमं केवल मानहु ॥
यह कुंभक अष्ट प्रकारके, होइ पवन अवरोधनं ॥
तब मुद्राबंध लगाइये, प्रथम करै घटं शोधनं ॥ ६५ ॥

मुद्रानाम । गीतक छंद ।

सुनि महामुद्रा महाबंधक, महाबोधक खेचरी ॥
उडियानबंधक, सुमूल बंधक बंध जालंधर करी ॥
विपरीतं करनी पुनि वज्रोली, शक्ति चालन कीजिये ॥
इमि होय योगी अमर काया, शशिकला नित पीजिये॥ ६६॥

प्रत्याहार नाम । कुंडलिया छंद ।

श्रवण शब्दको गहतु है, नैन गहतु है रूप ।
गंध गहतु है नासिका, रसना रसकी चूप ॥
रसना रसकी चूप, त्वचा सपरसही चाहै ।
इन पंचनको जीति, आतमा नित आरा है ॥
कूर्म अंगही गहै, प्रभा रवि कर्षण द्रवनं ।
इमि करि प्रत्याहार, विषय शब्दादिक श्रवनं ॥ ६७ ॥

अथ पंचतत्त्वकी धारणा ।

पृथ्वी तत्त्वकी धारणा । छन्द ।

यह चारों कौन लकारहि युक्तं, जानहु पृथ्वीरूपं ॥
पुनि पीतवर्ण हृदि मंडल कहिये, विधि अंकित सु अनूपं ॥

१ गला साफ करना । २ उलटा । ३ इस प्रकार ।

तहँ घटिका पंचप्राण करि लीनं¹, चित्त स्तंभन² होई ॥
सुनु शिष्य अवनि³ जय करै नित्यही, भूमि धारणा सोई॥६८॥

जलतत्त्वकी धारणा।

अक्षर वकार सहित संयुक्तं, चन्द्र खंड निरधारं ॥
पुनि हृषीकेश अंकित अति अति शोभित, कंठ पारदाकारं ॥
तहँ घटिका पंचप्राण करि लीनं, चित्त धारि करि रहिये ॥
विष कालकूट⁴ व्यापै नहिं कबहूँ, वारि धारणा कहिये ॥ ६९ ॥

तेजतत्त्वकी धारणा।

यह अग्नि त्रिकोण रेफ संयुक्तं, पद्मराग आभासं ॥
पुनि इंद्रगोप द्युति मध्य तालुका, कहियतु रुद्र निवासं ॥
तहँ घटिका पंचप्राण करि लीनं, ग्रंथहि उक्त बखानं ॥
सुनु शिष्य अग्नि भयहंता कहिये, तेज धारणा जानं ॥ ७० ॥

वायुतत्त्वकी धारणा।

भ्रुव मध्य जकार सहित षट कोनं, ऐसी लच्छ विचारं ॥
पुनि मेघवर्ण ईश्वर करि अंकित, वारंवार निहारं ॥
तहँ घटिका पंचप्राण करि लीनं, खेचरि सिद्धहि पावै ॥
सुनु शिष्य धारणा वायुतत्वकी, जो नीके करि आवै ॥ ७१ ॥

आकाशतत्त्वकी धारणा।

यह ब्रह्मरंध्र आकाश तत्त्व है, शुभ्र वर्तुलाकारं ॥
तहँ निश्चय जानि सदाशिव तिष्ठति, अक्षर सहित हकारं ॥
तहँ घटिका पंचप्राण करि लीनं, परमभक्तिकी दाता ॥
सुनु शिष्य धारणा व्योमतत्त्वकी, योग ग्रंथ विख्याता ॥७२॥
यह एक थंभनी एक दावनी, एक सुदहनी कहिये ॥

---

१ युक्त। २ रुकावट। ३ धरती। ४ हलाहल।

पुनि एक शोषनी एक भ्रामनी, सतगुरु विना न लहिये ॥
यह पंचतत्त्वकी पंचधारणा, तिनके भेद सुनैये ॥
अब आगे ध्यान कहों बहुविधि करि, योग ग्रंथमें पैये ॥७३॥

ध्यान वर्णन । दोहा छन्द ।

प्रथमहिं ध्यान पदस्थ है, द्वितिय पिंड आधीत ॥
तृतिय ध्यान रूपस्थ है, चतुरथ रूपातीत ॥ ७४ ॥

पदस्थ ध्यान वर्णन । इंदव छन्द ।

जे पद चित्र रचै अतिगूढ़, सुजानि महापरमारथ जामै ॥
ते अवलोकि विचार करै पुनि, चित्त धरै निहचै करि तामै ॥
रेकरि कुंभक मंत्र जपै उर, अक्षरते पुनि जानि अनामै ॥
सुंदर ध्यान पदस्थ यहै मन, निश्चल होय सरै सब कामै ॥ ७५ ॥

पिंडस्थ ध्यान । चौपाई छन्द ।

सुनहु शिष्य कहुँ ध्यान पिंडस्थं । पिंडको शोधन करिये स्वस्थं ॥
षट्चक्रनको धरिये ध्यानं । पुनि सद्गुरुको ध्यान प्रमानं ॥ ७६ ॥

रूपस्थ ध्यान । नाराच छन्द ।

निहारिके त्रिकट मध्य, विस्फुलिंग देखिहै ॥
पुनि प्रकाश दीप ज्योति, दीपमाल पेखिहै ॥
नक्षत्र माल बीजुरी, प्रभा प्रत्यक्ष होइहै ॥
अनंत कोटि चंद्र सूर, ध्यान मध्य जोइ है ॥ ७७ ॥
मरीचिका समान शुभ्र, और लक्ष जानिये ॥
झलामलं समस्तं विश्व, तेजमै बखानिये ॥
समुद्रमध्य डूबिके, उघारे नयन दीजिये ॥
दशों दिशा झलामलं, प्रतक्ष ध्यान कीजिये ॥ ७८ ॥

---

१ देखि । २ जिसका नाश न हो नीरोग परमेश्वर । ३ बनजावै । ४ सम्पूर्ण

रूपातीतध्यान। पद्धरी छंद।

यह रूपातीत जु शून्य ध्यान। कछु रूप न रेख न है निदान ॥
तहँ अष्ट प्रहर लों चित्त लीन। पुनि सावधान है अति प्रवीन॥७९॥
ज्यों पक्षीकी गति गगनमाहिं। कहुँ जात जात दिठ परै नाहिं ॥
पुनि आप दिखाई देत सोय। वा योगीकी गति यहै होय ॥८०॥
यह शून्य ध्यान सम और नाहिं। उत्कृष्ट ध्यान सब ध्यान मांहिं॥
है शून्याकार जु ब्रह्म आप। दशहू दिशि पूरण अति अमाप॥८१॥
यों करै ध्यान सो योगि होइ। तबलगि समाधि सु अखंड होइ ॥
पुनि यहै योगनिद्रा कहाय। सुनु शिष्य देउँ तोको बताय ॥८२॥

समाधि वर्णन। गीतिका छंद।

सुनु शिष्य अब समाधि लक्षण, मुक्ति योगी वर्त्तते ॥
तहँ सिद्ध साधक एक है, करि क्रिया कर्म निवर्त्तते ॥
निरुपाधि नित्य उपाधि रहित जु, यही निश्चय मानिये ॥
कछु भिन्नभाव रहै न कोई, सो समाधि बखानिये ॥ ८३ ॥
नहिं शीत उष्ण तृषा क्षुधा, मूर्च्छा न भ्रम आलस रहै ॥
नहिं जागरण नहिं स्वप्न सुषुप्ति, तत्त्वपद योगी लहै ॥
ज्यों नीरमहँ मिलि जाय लवण सु, एकमेकहिं जानिये ॥
कछु भिन्न भाव रहै न कोई, सो समाधि बखानिये ॥ ८४ ॥
नहिं हर्ष शोक न दुःख सुख, नहिं मान अरु अपमान यों ॥
पुनि मनोइंद्रिय वृत्ति नष्ट रु, ज्ञान नहिं अज्ञान यों ॥
नहिं जाति कुल नहिं वर्ण आश्रम, जीव ब्रह्म न जानिये ॥
कछु भिन्न भाव रहै न को , सो समाधि बखानिये ॥ ८५ ॥
नहिं शब्द परश रु रूप रस नहिं, गंध जानिय रंचहू ॥
नहिं काल कर्म स्वभाव है, नहिं उदय अस्त प्रपंचहू ॥

---

१ चिकित्सा–अतिशय करके। २ चतुर। ३ उत्तम। ४ किंचित्
५ प्रकृतिभादव।

जिमि क्षीर क्षिरमें आज्य घृतमें, जलहिमें जल जानिये ॥
कछु भिन्नभाव रहै न कोई, सो समाधि बखानिये ॥ ८६ ॥
नहिं देव दैत्य पिशाच राक्षस, भूत प्रेत न संचरै ॥
नहिं पवन पानी अग्निको डरु, सर्प सिंहसों ना डरै ॥
नहिं यंत्र मंत्र न शस्त्र लागहिं, यह अवस्था मानिये ॥
कछु भिन्नभाव रहै न कोई, सो समाधि बखानिये ॥ ८७ ॥

दोहा छंद ।

सुन्यो योग सिद्धांत ते, अष्ट अंग संयुक्त ॥
यों साधत ब्रह्महि मिलै, सोऊ कहिये मुक्त ॥ ८८ ॥

इति श्रीसुंदरदासविरचिते ज्ञानसमुद्रे अष्टांगयोगनिरूपणं नाम तृतीयोल्लासः ॥ ३ ॥

अथ सांख्यनिरूपणं नाम चतुर्थोल्लासः ४.

शिष्य उवाच । चौपाई छंद ।

हे प्रभु बहुत कृपा तुम कीन्हीं । ऐसी बुद्धि दया करि दीन्हीं ॥
मोको योग सिद्धांत सुनायो । जो पूछ्यों सो उत्तर पायो ॥ १ ॥
अब प्रभु सांख्य सु मोहिं सुनावहु । मेरे सब संदेहें मिटावहु ॥
यह गुरुदेव कृपा करि कहिये । तुम बिन और कहो कित लहिये २

श्रीगुरुरुवाच । सोरठा छंद ।

शिष्य कहौं समुझाय, जो तैं पूछ्यो प्रीति करि ॥
सांख्य सु देउँ बताय, तो सुनिबेके योग है ॥ ३ ॥

सांख्यवर्णन । दुमिला छंद ।

सुनु शिष्य यहै मत सांख्यहिको जु, अनातम आतम भिन्न करै ॥

---

१ कृपा २ द्विविधा । ३ लेव ।

न आतम है जडरूप लिये, नित आतम चेतन भाव धरै ॥
आतम सूक्ष्म स्थूल सदा, पुनि आतम सूक्षम स्थूल परै ॥
को निर्णय अब तोहिं कहूँ, जिन जानत संशय शोक हरै ॥ ४ ॥

कुण्डलिया छंद ।

प्रकृति पुरुषमय जगत है, ब्रह्म कीट पर्यंत ।
चतुर्खानि लौं जीव सब, शिवशक्ती वरतंत ॥
शिवशक्ती वरतंत, अंत दुहुँवनिको नाहीं ।
एक आहि चिद्रूप, एक जड दीसत छाहीं ॥
चेतन सदा अलिप्त, रहै जड नित्य कुलूषं ।
शिष्य समुझि यह भेद, भिन्न करि जानहु पुरुषं ॥ ५ ॥

शिष्य उवाच । हंसाल छन्द ।

हे प्रभू कह्यो तुम पुरुष चैतन्यमय, बहुरि ऐसे कह्यो भिन्न जानो ॥
समुझिके प्रकृति जडरूप करिके कही, जगत कैसे भयो सो बखानो ६

श्रीगुरुरुवाच । छप्पय छंद ।

पुरुष प्रकृति संयोग, जगत उपजतहै ऐसे ।
रवि दर्पण दृष्टांत, अग्नि उपजतहै जैसे ॥
सोइ होय चैतन्य, यथा चुंबकके संगा ।
यथा पवन संयोग, उदधिमें उठै तरंगा ॥
पुनि यथा सूर संयोगते, चक्षु रूपको गहतु है ।
यौं जड चैतन संयोगते, सृष्टि उपजति कहतु है ॥ ७ ॥

शिष्य उवाच । सवैया छन्द ।

हे प्रभु पुरुष प्रकृतिते प्रथमहिं, कौन तत्त्व उपज्यो समुझाई ॥
विधि करि तत्त्व अनुक्रमसौं सब, ज्यों उपजे त्यों देहु बताई ॥

---

१ निचोड । २ संसार । ३ कीडा । ४ तक । ५ चिदाकाररूप । ६ अलग । अलाहिदा । ७ आयना । ८ श्रीसूर्यनारायण । ९ नेत्र-नयन-आँखें ।

सूक्ष्म थूल भयो कैसे कारि, कारण कारज मोहिं सुनाई ॥
तुम गुरुदेव सकल विधि जानत, अन आतम आतमा दिखाई ॥८॥

श्रीगुरुरुवाच । दोहा छन्द ।

पुरुष प्रकृति संयोगते, प्रथम भयो महतत्त्व ॥
अहंकार ताते प्रगट, विविध रजोत्तम सत्व ॥ ९ ॥

चामर छन्द ।

तिहि तामसाहंकारते, दश तत्व उपजे आइ ॥
सो पंचविषय रु पंचभूतानि, कहौं शिष समुझाइ ॥
जो शब्द स्पर्श रु रूप रस, अरु गंध विषयसुजानिं ॥
पुनि व्योम मारुतं तेज जल क्षिंति, महाभूत बखानि॥१०॥

चौपाई छंद ।

यह दश तमगुणते तुम जानहु । दिव्य शक्ति याकी पहिचानहु ॥
अब इनके लक्षण समझाऊं । भिन्न भिन्नकारि अर्थ बताऊं ॥११॥

छप्पय छन्द ।

शब्द सगुण आकाश एक गुण कहिये जामहिं,
शब्द स्पर्श जु वायु उभय गुण लहिये तामहिं ॥
शब्द स्पर्श रु रूप तीनिगुण पावक माहीं,
शब्द स्पर्श रस रूप चतुर्गुण अपमें आहीं ॥
पुनि शब्द स्पर्श रु रूप रस, ये पांचोंगुण अवंनि है;
शिष यह अनुक्रम ले जानि तू, सांख्य सुमति ऐसे कहै१२

पंचतत्त्व स्वभाव । चौपाया छंद ।

यह कठिनं स्वभाव अवनिको कहिये, द्रावक उदकहि जानै ॥
पुनि उणो स्वभांव अग्निमहि वरते, चलन पवन पहिचानै ॥

---

१ पतला–बारीक । २ मोटा । ३ वायु–हवा । ४ पृथ्वी । ५ पृथ्वी।
६ सुन्दरबुद्धिवाले । ७ दृढ । ८ पानी । ९ गर्भ । १० आदत ।

आकाश स्वभाव सुमिर कहियेतु है, पुनि अवकाश दिखावै ॥
यह पंचतत्त्वके पंचस्वभाव हैं, सतगुरु बिना न पावै ॥ १३ ॥

राजसाहंकार। चौपाया छंद।

अब राजसाहंकारतें उपजी, दश इंद्रिय सु बताऊं ॥
अरु पंचवायु तिनके [1]समीपही, यह व्यौरौ समुझाऊं ॥
अरु [2]भिन्न भिन्न है क्रिया सु तिनकी, भिन्न भिन्न है नामू॥
सुनु शिष्य कहों नीके कारि तोकों, ज्यों पावै विश्रामू॥१४॥

छप्पय छंद।

श्रवण त्वचा दृग घ्राण रु, रस पुनि जिनके संगा।
ज्ञान सु इंद्रिय पंच भई, अप अपने रंगा ॥
वाणि पाणि अरु पाद, उपस्थ रु गुदहू कहिये।
कर्म सु इंद्रियन पंच, भली विधि जाने रहिये ॥
पुनि प्राणापान समानहू, व्यानोदान सु वायु है ॥
दशपंच रसोगुणते भये, सु क्रिया शक्तिकोपाय है ॥ १५ ॥

सात्त्विकाहंकार। गीतक छंद।

अब सात्त्विकाहंकारते मन, चित्त बुद्धि अहं भये ॥
पुनि इंद्रियनके अधिष्ठाता, देवता बहुविधि ठये ॥
दिगपाल मारुत अर्क अश्वनि; वरुण ज्ञान सु इंद्रियं ॥
पुनि अग्नि इंद्र उपेंद्र मित्र सु, प्रजापति कर्मेन्द्रियं ॥१६॥

दोहा छन्द।

शशि[3] विधि[4] अरु क्षेत्रज्ञ पुनि, रुद्र सहित पहिचानि ॥
भये चतुर्दश[5] देवता, ज्ञान शक्ति यह जानि ॥ १७ ॥
त्रिविध शक्ति है त्रिगुणमय, तम रज सत्त्व सु एह ॥
इनकरि पिंड स्थूल है, इनकरि सूक्षम देह ॥ १८ ॥
कारण देह सु तीसरो, सबको कारण मूल ॥
वाहीते दोऊ भये, सूक्षम देह स्थूल ॥ १९ ॥

---

१ निकट। २ जुदा-जुदा। ३ चन्द्रमा। ४ ब्रह्मा। ५ चौदह।

देहस्थूल वर्णन । चौपाई छंद ।

व्योम वायु पावँक जल धरनी, स्थूल देह इनहींकी बरनी ॥
एक तत्त्वमहँ पंच बंताऊं, पंच पंच पच्चीस सुनाऊं ॥ २० ॥
अँस्थि अवनि त्वक उदकहि जानौ, मांस अग्नि नीके पहिचानौ ॥
नाडी वायु रोम आकाशं, पंचअंश पृथ्वी जु प्रकाशं ॥ २१ ॥
भेदसु अवनि मूत्र जल कहिये, रक्त अग्नि यह जाने रहिये ॥
शुक्रे सुवाय श्लेषम व्योमं, पंचअंश ए उदक समोमं ॥ २२ ॥
क्षुत पृथ्वी तृट जलकी अंशा, आलस अग्नि न आनहु संशा ॥
सँगम वायु निंद नभ जानं, पंचअंश यह आग्नि प्रमानं ॥ २३ ॥
रोधक अवनि भ्रमन जलमाहीं, ऊरध गवन अग्नि महि आहीं ॥
अति निर्गवँन वायु पहिचानहु, उर्ध्वस्थिति आकाशहि जानहु॥२४॥
भय पृथ्वी मोहादिक नीरं, क्रोध अग्नि पुनि काम समीरं ॥
लोभाकाश कहा समुझाये, पंचअंश यह नभके पाये ॥ २५ ॥

अन्यभेद । दोहा छंद ।

गुदा कर्म इंद्रियन महि, नासा इंद्रिय ज्ञान ॥
ए दोऊ भूते प्रकट, शिष्य लेहु पहिचान ॥ २६ ॥
चरण कर्म इंद्रियन महि, लोचन इंद्रिय ज्ञान ॥
ए दोऊ वसुते प्रकट, शिष्य लेहु पहिचान ॥ २७॥
उपस्थ कर्म इंद्रियन महँ, रसना इंद्रिय ज्ञान ॥
ए दोऊ जलते प्रकट, शिष्य लेहु पहिचान ॥ २८ ॥
पार्णि कर्म इंद्रियन महि, त्वक इंद्रिय है ज्ञान ॥
ए दोऊ पेवनहिं प्रकट, शिष्य लेहु पहिचान ॥ २९ ॥
वचनं कर्मइंद्रियनमें, श्रोत्र सु इंद्रिय ज्ञान ॥
ए दोऊ नैंभते प्रगट, शिष्य लेहु पहिचान ॥ ३० ॥

---

१ आकाश-गगन । २ हवा । ३ अग्नि-कृशानु । ४ हाड । ५ वांय । ६ संधि । ७ अचल । ८ हाथ । ९ वायु । १० आकाश ।

ज्ञानेंद्रिय त्रिपुटी। दोहा छंद।

श्रोत्र सु अध्यातम प्रकट, श्रोतव्यं अधिभूत॥
दिशा तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यहि सूत॥ ३१॥
त्वक अध्यातम जानि यह, सपरस है अधिभूत॥
वायु तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यहि सूत॥ ३२॥
चक्षु अध्यातम जानि यह, द्रष्टव्यं अधिभूत॥
सूर्य तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यहि सूत॥ ३३॥
घ्राण सु अध्यातम प्रकट, घ्राणव्यं अधिभूत॥
अश्विनि तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यहि सूत॥ ३४॥
रसना अध्यातम प्रकट, रसग्रहणं अधिभूत॥
वरुण तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यहि सूत॥ ३५॥

कर्मेंद्रिय त्रिपुटी। दोहा छंद।

वचन सु अध्यातम प्रकट, वक्तव्यं अधिभूत॥
अग्नि तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत॥ ३६॥
पाणि सु अध्यातम प्रकट, दातव्यं[1] अधिभूत॥
इंद्र तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत॥ ३७॥
चरण सु अध्यातम प्रकट, गंतव्यं[2] अधिभूत॥
विष्णु तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत॥ ३८॥
उपस्थ सु आतम प्रकट, आनंदं अधिभूत॥
प्रजानती तहँ देवता, यह त्रिपुटी यह सूत॥ ३९॥
गुदा सु अध्यातम प्रकट, मल त्यागं अधिभूत॥
मित्र तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत॥ ४०॥

अहंकार त्रिपुटी। दोहा छंद।

मन अध्यातम जानिये, संकल्पं अधिभूत॥

---

१ देनेयोग्य। २ चलने योग्य।

चंद्र तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ॥ ४१ ॥
बुद्धि सु अध्यातम प्रकट, बोद्धव्यं अधिभूत ॥
ब्रह्मा तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ॥ ४२ ॥
चित्त सु अध्यातम प्रकट, चितवनि है अधिभूत ॥
वासुदेव है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ॥ ४३ ॥
अहंकार अध्यातम है, अहंकृत्य अधिभूत ॥
रुद्र तत्र है देवता, यह त्रिपुटी यह सूत ॥ ४४ ॥

लिंग शरीर । चौपाई छंद ।

नवतत्त्वनिको लिंग पंचधा । शब्द स्पर्श रूप रस गंधा ॥
मन अरु बुद्धि चित्त अहंकारा । यह नवतत्त्व भेद निर्धारा ॥४५॥

दोहा छंद ।

पंद्रहतत्त्व स्थूल वपु, नवतत्त्वनिको लिंग ॥
इन चौबीसहु तत्त्वको, बहुविधि कही प्रसंग ॥ ४६ ॥

चौपाया छंद ।

शिष ए चौबीसतत्त्व जड जानहु, ताको क्षेत्र जु कहिये ॥
पुनि चेतन एक और पच्चीसहि, सांख्य हि मतसों लहिये ॥
सो है क्षेत्रज्ञ सबको प्रेरके, पुनि साक्षी यह जानौ ॥
यह प्रकृति पुरुषंको कियो निरणै, सतगुरु कहै सु मानौ ॥ ४७ ॥

जाग्रत् अवस्था वर्णन । चंपक छंद ।

यह देह स्थूल विराटं । है पंचतत्त्वको घाटं ॥
नभ वायु तेज जल धरणी। पाछे बहुविधि करि वरणी ॥ ४८ ॥
जे शब्द स्पर्शही रूपा । रस गंध मिलै तिन जूपा ॥
यह तन्मात्रिका सहेता । जो पंचविषयको हेता ॥ ४९ ॥
अरु पांचों इंद्रिय ज्ञाना । श्रवणादि मिली विधि नाना ॥

१ प्रेरणा करनेवाले । २ माया । ३ ईश्वर । ४ इन्द्रियोंका विषय ।

पुनि कर्म सु इंद्रिय पंचा। वचनादि मिली जु प्रपंचो ॥ ५० ॥
मन बुद्धि चित्त अहंकारा। यह अंतःकर्ण विचारा ॥
पुनि देव चतुर्दश जानौ। दश वायु मिली तिन मानौ ॥ ५१ ॥
है सत्त्व रज तम गुणमाहीं। ये भिन्न भिन्न बरताहीं ॥
पुनि कालहु कर्म स्वभावा। तब जीव स्वरूप दिखावा ॥ ५२ ॥
अरु काल उपाइ खपावै। यह कर्मसु आनि मिलावै ॥
तहँ सूत्रसु सुख दुख मानै। सो पाप पुण्यको ठानै ॥ ५३ ॥
है जीव सचेतन करता। जड सकल पदारथ धरता ॥
मिलि सबहिनको संघाता। यह जाग्रदवस्था ताता ॥ ५४ ॥
सो आहि विश्व अभिमानी। तहँ ब्रह्मादेव प्रमानी ॥
है राजस गुण अधिकारा। पुनि भोग स्थूल सब सारा ॥ ५५ ॥
यह कहिये नयन स्थानं। वाणी बैखरिया जानं ॥
यह जाग्रतवस्था निर्णय। सुनु शिष्य स्वप्न अब वर्णय ॥ ५६ ॥

स्वप्नावस्था वर्णन। चौपाया छन्द।

दशवायु प्राण नागादिक कहिये, पंच सु इंद्रिय ज्ञानं ॥
पुनि पंच कर्मेन्द्रिय आही, तिनकी स्थिती बखानं ॥
अरु पंच विषय शब्दादिक जानौ, अंतःकर्ण चतुष्टं ॥
पुनि देव चतुर्दश है तिनमाहीं, सब इंद्रिय संतुष्टं ॥ ५७ ॥
यह कालहु कर्म स्वभाव सकल मिलि, लिंग शरीर कहावै ॥
शिष नाम हिरण्यगर्भ है ताको, तेजोमय तनु पावै ॥ ५८ ॥
अब स्वप्न अवस्था याको कहिये, सो तैजस अभिमानी ॥
तहँ सतगुण विष्णु देवको जानहु, भोग वासना ठानी ॥ ५९ ॥
सो कंठस्थान मध्यमा वाचा, जीवातमा समेता ॥
यह स्वप्न अवस्थाको है निर्णय, समुझि देख यह हेता ॥ ६० ॥

---

१ संसार। २ निद्रावस्थाकी वाणी। ३ शब्द-स्पर्श-रस-रूप-गंध। ४ चार।

सुषुप्त्यवस्था वर्णन । छप्पय छन्द ।

सुषुपति कारण देह, तत्त्व सबही तहँ लीनं ॥
लिंग शरीर न रहै, घोरनिद्रा वश कीनं ॥
प्राज्ञ पुनि अभिमान, अव्याकृत तमे गुण रूपा ॥
पुनि ईश्वर तहँ देव, भोग आनंदस्वरूपा ॥
पुनि पश्यंती वाणी गुपत, हृदय स्थानक जानिये ॥
यह कहत अवस्था सुषुपति, शिष्य सत्य करि मानिये॥ ६१॥

तुरीयावस्था वर्णन । चर्पट छन्द ।

तुरियावस्था चैतन तत्त्वं, स्वस्वरूप अभिमानीपत्त्वं ॥
परमानंद भोग इमि कहिये, सोहं देव तहाँ सो लहिये ॥ ६२ ॥
सर्वोपाधि विवर्जित मुक्तं, त्रिगुणातीतं साक्षी युक्तं ॥
मूर्द्धनि स्थिती परा पुनि वाणी, तुरियावस्था निश्चय जानी॥ ६३॥

इंदव छंद ।

जाग्रत रूप लियो सब तत्त्वनि, इंद्रिय द्वार करै व्यवहारो ॥
स्वप्न शरीर भ्रमै नवतत्त्वको, मानत है सुख दुःख अपारो ॥
लीन सबै गुण होय सुषोपति, जान्यो नहीं कछु घोर अँध्यारो ॥
तिनको साक्षि रहै तुरियातित, सुंदर सोई स्वरूप हमारो ॥ ६४ ॥

सोरठा छंद ।

शिष्य तु ऐसे जानि, है असंग साक्षी सदा ।
आपुहि चेतन मानि, और पदारथ जड सबै ॥ ६५ ॥

दोहा छंद ।

यह शिष मैं तोसों कह्यो, सांख्यहुको सिद्धांत ।
जो तेरी शंका रही; सो अब पूछ वृत्तांत ॥ ६६ ॥

इति श्रीसुंदरदासविरचिते ज्ञानसमुद्रे सांख्यनिरूपणं नाम चतुर्थोल्लासः ॥ ४ ॥

---

१ तमोगुण । २ विकाररहित । ३ तीनोंगुणोंसे परे । ४ माथा?र । ५ चौथी अवस्था । ६ घूमै । ७ कठिन-विकराल । ८ साखी ।

अथ गुरुशिष्यसंवादे अद्वैतनिरूपणार्थं नाम पंचमोल्लासः ५.

शिष्य उवाच । चौपाई छंद ।

हे स्वामी तुम ब्रह्म अनूपा । मैं करि जाने देह स्वरूपा ॥
यह मोते जु भयो अपराधा । क्षमा करौ मम मेटो बाधा ॥ १ ॥
मैं तो भयो कृतारथ तबहीं । तुमसे सतगुरु भेटे जबहीं ॥
वचन सुनाय कपाट[1] उघारे । मेरे संशय सकल निवारे[2] ॥ २ ॥
किंचित मात्र रही आशंका । सो यह तुमते जैहै पंका ॥
जे तुम तीन सिद्धांत बखाने । ते सब मैं नीके करि जाने ॥ ३ ॥
अब प्रभु तुरियातीत बतावहु । तो पाछे अद्वैत सुनावहु ॥
तुम बिनु और कहै नहिं कोई । तुमहीते तुमहीसों होई ॥ ४ ॥

श्रीगुरुरुवाच । दोहा छंद ।

साधु साधु शिष धन्य तू, भलो प्रश्न त कीन ॥
याका उत्तर अब कहों, द्वैत मिटै भ्रम लीन ॥ ५ ॥

चौपाई छंद ।

श्रवण मनन[3] कीनो तैं नीको । निदिध्यास राख्यो तैं ठीको ॥
अब साक्षात्कार तू होई । तब संदेह रहै नहिं कोई ॥ ६ ॥

दोहा छंद ।

तुरिया साधन ब्रह्मको, अहंब्रह्म सो होय ॥
तुरियातीत अनुभव यहै, मैं तूँ रहै न कोय ॥ ७ ॥

इंदव छंद ।

जाग्रत तो नहिं मेरेविषे पुनि, स्वप्न सु तो नहिं मेरेविषे है ॥
नाहिं सुषोपति मेरेविषे पुनि, विश्वहू तैजस प्राज्ञ पखे है ॥

---

१ केवाड । २ दूरकरे । ३ मनमें-विचारना ।

मेरेविषे तुरिया नहिं दीसति, याहिते मेरे स्वरूप अखै है ॥
दूरिते दूरि परेते परे अति, सुंदर कोई न मोहि लखै है ॥ ८ ॥

शिष्य उवाच । दोहा छंद ।

हे प्रभु दूरि परे कह्यो, उरे कह्यो अब और ॥
यह तो भ्रमे भारी भयो, गुरु सु बतावहु ठौर ॥ ९ ॥

श्रीगुरुरुवाच । दोहा छंद ।

उरे परे कछु वै नहीं, वस्तु रही भरपूर ॥
चतुरभाव तोसों कहों, तब भ्रम जैहै दूर ॥ १० ॥

शिष्य उवाच । चौपाई छंद ।

हे प्रभु चतुर्भाव समुझावहु । भिन्नें भिन्न करि अर्थ बतावहु ॥
द्वैत मिटै सबही भ्रम छीजै । निःसंदेह मोहिं अब कीजै ॥ ११ ॥

श्रीगुरुरुवाच । चौपाई छंद ।

शिष प्रागभाव सो प्रथमहिं कहिये, नीकी विधि समुझाऊं ॥
पुनि अन्यो अन्याभाव दूसरो, सोऊ तोहिं सुनाऊं ॥
अरु सुनहु प्रध्वंसाभाव तीसरो, ताको कहों विचारा ॥
जब चतुर्भाव अत्यंतहि जाने, तब छूटै भ्रम लारा ॥ १२ ॥

चतुर अभाव वर्णन । सवाया छंद ।

मृतिकामाहिं अभाव घटनिको, प्रागभाव यह जाने रहिये ॥
ता मृतिकाके भाजन बहुविध, अन्योअन्याभाव सु गहिये ॥
मृतिका मध्य लीनता सबकी, यह उध्वंसाभाव सु लहिये ॥
ना कछु भयो न अब कछु है, यह अत्यंताभाव जु कहिये ॥ १३ ॥

प्रागभाव । मनहर छंद ।

पहिले जब कछु नाहिं होतो परपंच यह;

---

१ सन्देह । २ स्थान-जगह । ३ पूर्ण । ४ अलग । ५ पात्र-कुम्भ ।

एकही अखंड ब्रह्म विश्वको अभाव है ॥
जैसे काठ पाहनको लंघ अति देखियत;
तिनमें तो नाहिं कछु पूतरी बनाव है ॥
कंचनकी राशीते ज्यों कंचन विशेषियत;
ताके मध्य नहीं कछु भूषण प्रभाव है ॥
जैसे नभ माहिं कछु बादर न देखियत;
सुंदर कहत शिष्य यही प्रागभाव है ॥ १४ ॥

अन्योन्याभाव सवाया छंद ।

एक भूमिके भाजन बहुविधि, कूंडा करवा हँडिया माट ॥
चपनी ढकनी सरवा गगरी, कलशें कहाली नाना घाट ॥
तीहि नाम रूप गुण न्यारे, पुनि व्यवहार भिन्नही ठाट ॥
सुंदर कहत शिष्य सुनु ऐसे, अन्योअन्याभाव विराट ॥ १५ ॥

मनहर छन्द ।

एक भूमिको विकार कंचन कहावत है;
ताहूके विविध भाँति भूषण अनंतु है ॥
मुद्रिका कंकण कंठमाला शीशफूल पुनि;
कुंडल वलय क्षुद्रघंटिका गनंतु है ॥
नाम गुणरूप व्यवहार सब भिन्न भिन्न;
अंग अंग आपनीही ठोरले ठनंतु है ॥
ऐसे भाँति शिष्य सुनु सुंदर कहत तोहिं;
विदुषहिं अन्योअन्याभाव यों भनंतु है ॥ १६ ॥

चौपाया छन्द ।

एक भूमिको ताम्र विकारा, ताके पात्र कहावहिं ॥

---

१ जगत्-संसार । २ पर्वत-पहाड । ३ आकाश । ४ घट, घडा, गगरी । ५ अलग अलग । ६ साज । ७ बृहत्-बडा । ८ पृथ्वी । ९ सोना । १० अँगूठी । ११ बाळा । १२ कडा हाथका । १३ कर्धनी ।

पुनि चरवी चरखा तश्ती तबला, ऊरी लोट गावहिं ॥
तिहि नाम रूप गुण भिन्न भिन्नही, दीसत विविधप्रकारा ॥
यह अन्योअन्याभाव सुनु शिष, बहुत भाँति विस्तारा ॥१७॥

कुंडलिया छंद ।

लोहा प्रत्यक्ष देखिये, सोऊ भूमि विकार ।
विविध भाँति ताके भये, जगतमाहिं हथियार ॥
जगतमाहिं हथियार गुरज[१] शमशेर[२] कटारी ।
बरछी बुमदा भालि कतरनी छुरी सवाँरी ॥
नाम रूप गुर्ण भिन्न जहाँ जैसे तहँ सोहा ।
अन्यो अन्याभाव शिष्य सुनु एकहि लोहा ॥ १८ ॥

छप्पय छन्द ।

इक भूमि विकार कपास भया नाना विधि दरसै ।
खासा मलमल सहन सितारी उपजै मरसै ॥
सीरी साफ बाफता अधोतर भैरव कहिये ।
परकारा अरु गजा गनत कहुँ अंत न लहिये ॥
सुनु शिष्य कहाँलों वरणिये, अंत नहीं निशिदिन कहै ।
यह अन्यो अन्याभावते, कारण कारज सुनि लैहै ॥ १९ ॥

गीतक छंद ।

पुनि एक भूमि विकार तरु[३], विस्तार बहुविधि देखिये ॥
जर सूर शाँखा[४] पत्र[५] पुष्प[६] रु, फल अनेकनि पेखिये ॥
तिहि नाम रूप गुण भिन्न भिन्नहि, बहुत भाँति बखानिये ॥
यह भाव अन्योअन्य कहिये, शिष्य सत कार मानिये ॥ २० ॥

छप्पय छन्द ।

जल विकार अब सुनहु फेन बुदबुदाँ[७] तरंगाँ[८] ।

---

१ गदा । २ तलवार । ३ वृक्ष । ४ डाली । ५ पाती । ६ फूल । ७ बुलबुला ८ लहर ।

ओला पाला जानि, सुतौ जलहीको अगा ॥
अग्नि विकार मशाल, चिरागहु दीपक जोव।
वायु विकार सुजानि बीघुरा आँधी होवै ॥
आकाश विकार सु अभ्रहै, नानाविध देखिये।
अन्योअन्याभाव शिष्य सुनु, पंचतत्त्व यह पेखिये ॥ २१ ॥

दोहा छंद।

एकब्रह्म कारण जगत, कारज है बहु भाँति ॥
चतुरखानि विस्तार यह, लखचौरासी जाति ॥ २२ ॥

प्रध्वंसाभाव चौपाया छंद।

यह भूमि विकार भूमिमें लीनें, जल विकार जलमाहीं ॥
तेज विकार तेज मिलि जैहै, वायू वायु मिलाहीं ॥
आकाश विकार मिले आकाशहि, कारण रहै निदानं ॥
यह प्रध्वंसाभाव सुनु शिष, जो है सो ठहरानं ॥ २३ ॥

दोहा छंद।

जो जाते कारज भयो, सो ताहीमें छीन ॥
ऐसेही यह जगत सब, होइ ब्रह्ममें लीन ॥ २४ ॥

अत्यंताभाव वर्णन। मनहर छंद।

इच्छाही न प्रकृति न महत्तत्त्व अहंकार;
त्रिगुण न व्योम आदि, शब्दादि कोय हैं ॥
श्रवणादि वचनादि, देवता न मन आदि;
सूक्षम न थूल पुनि, एकही न दोय है ॥
स्वेदज न अंडज, जरायुज न उद्भिज;
न पशुहि न पंखिहि, न पुरुष न जोय है ॥

---

१ तूफान। २ माया, स्वभाव, आदत, खासियत। ३ घमंड-मद।

सुंदर कहत ब्रह्म, ज्योंको त्योंहि देखियत;
न तो कछु भयो अब, है न कछु होय है ॥ २५ ॥

छप्पय छंद ।

कहत शशाके[1] शृंग, झाँकि किनहूं नहिं देखे[3] ।
बहुरि कुसुम[2] आकाश, सु तो काहू नहिं पेखे ॥
त्योंहीं बंझापूत, पीघुर[4] झुलत न कहिये ।
मृगजल माहीं नीर[5] कहूं, ढूंढत नहिं लहिये ॥
रज्जु[6]माहिं नहिं सर्प कालत्रय, सुक्ति रजतसी लगतहै ।
शिष यह अत्यंताभाव सुनु, ऐसेही सब जगत है ॥ २६ ॥

पद्धरी छंद ।

शिष यही अत्यंताभाव होइ । नहिं उत्पत्ति प्रलय स्थिती कोइ ॥
नहिं आदि अंत नहिं मध्यभाव । नहिं स्रष्टा सृष्टिनको उपाव ॥२७॥
नहिं कारण कारज है उपाधि । नहिं ईश्वर जीव परै समाधि ॥
नहिं तत्त्वअतत्त्व विभाग भिन्न । नहिं जोति अजोति कछू न चिह्न२८
नहिं काल न कर्म सुभाव आहि। नहिं विद्या अविद्या लगीतांहि ॥
नहिं राग वैराग न बंध मुक्त । नहिं रूप अरूप अयुक्त युक्त ॥२९॥
नहिं आहि प्रमाताको प्रमान । नहिं है प्रमेय नहिं प्रमा जान ॥
नहिं लय विछेप नहिं निकट दूर । नहिं दिवस न रजनी चंदसूर३०॥
नहिं शुक्ल न कृष्ण न रक्त पीत । नहिं ह्रस्व[7] न दीर्घ[8] न घाम शीत ॥
नहिं अर्थ न धर्म न काम मोक्ष । नहिं पाप पुण्य अपरोक्ष प्रोक्ष३१॥
नहिं स्वर्गादिक नहिं नरकवास । नहिं त्रासक कोइ न होय त्रास ॥
नहिं वेद न शास्त्र न शब्दजाल । नहिं वर्ण अवर्ण न स्मृतिकि चाल३२
नहिं संध्या सूत्र न करन्यास । नहिं होम न यज्ञ न व्रत उपास ॥
नहिं इष्ट उपासन हार कोइ । नहिं निर्गुण सगुण भेद दोइ ॥ ३३ ॥

---

१ खर्गोश-खरहा । २ फूल । ३ देखै । ४ हिंडोल । ५ पानी । ६ जेवरी । ७ छोटा । ८ बडा ।

नहिं सेव्य न सेवक सेवकी न । नहिं हेतु प्रीति नहिं प्रेम लीन ॥
नहिं नवधा दशधा पराभक्ति । नहिं सालोक्यादिक चारि मुक्ति ३४॥
नहिं कर्त्ता कर्म क्रिया न कोइ । नहिं द्रष्टा दर्श न दृश्य होइ ॥
नहिं साधक साधन साध्य सार । नहिं सिद्ध असिद्ध न निर्विकार[1] ३५॥
नहिं व्यक्त[2] अव्यक्त[3] अशुद्ध शुद्ध । नहिं रक्त[4] विरक्त[5] अबुद्ध बुद्ध ॥
नहिं शून्य अशून्य अथीर थीर । नहिं तर्क वितर्क अधीर धीर॥३६॥
नहिं चिंत्य अचिंत्य अडोल डोल । नहिं माप अमाप अतोल तोल ॥
नहिं कृर्श[6] स्थूल[7] नहिं युवा बाल । नहिं जरा मृत्यु न अकाल काल ३७
नहिं जाग्रत स्वप्न सुषोपतिश्च । नहिं तुरिया साक्षी त्रय मतिश्च ॥
नहिं ज्ञेय ज्ञाता नहिं ज्ञान गम्य । नहिं ध्येय ध्याता नहिं ध्यान रम्य३८

दोहा छंद ।

जो कछु सुनिये देखिये, बुद्धि विचारै जाहि ॥
सो सब वाक्य विलास है, भ्रम करि जानि आहि ॥ ३९ ॥
यहै अत्यंताभाव है, यहै जु तुरियातीत ॥
यह अनुभव साक्षात है, यह निश्चय अद्वीत ॥ ४० ॥
नाहिं नाहिं करि करि कह्यो, है है कह्यो बखानि ॥
नाहिं है के मध्य है, सो अनुभवकरि जानि ॥ ४१ ॥
यहही है पर यह नहीं, नाहीं है है नाहिं ॥
यहै यहै जानिनुं यह, अनुभव है या माहिं ॥ ४२ ॥
अब कछु कहिबेको नहीं, कहैं कहाँलों वैन ॥
अनुभवही करि जानिये, यह गूँगेकी सैन ॥ ४३ ॥
जो तेरे संदेह कछु, रह्यो रंच जू होहि ॥
तो शिष अजहूं प्रश्न करु, फिरि समुझाऊं तोहि ॥ ४४ ॥

शिष्य उवाच । चौपाई छन्द ।

हे स्वामी संशय सब भाग्यो । वचन तुम्हारे सोवत जाग्यो ॥

---

१ विकार रहित । २ व्यापक । ३ अव्यापक । ४ लवलीन । ५ विहीन । ६ दुबला । ७ मोटा ।

अब तो सर्व स्वप्न करि जान्यो । निश्चय मम संदेह बिलान्यो ४५

चर्पट छंद ।

कोहं केत्वं कच[1] [2] । कच परमारथ कच [3] व्यवहारं ॥
कच मे जन्मं कच मे मरणं । कच मे देहं कच मे करणं ॥ ४६ ॥
कच मे अद्वय कच मे द्वीतं । कच मे निर्भय कच मे [4] भीतं ॥
कच माया कच ब्रह्म विचारं । कच मे प्रवृत्ति निवृत्ति विकारं ४७
कच मे ज्ञानं कच विज्ञानं । कच निर्विष कच मे विष जानं ॥
कच मे तृष्णा वैतृष्णयत्वं । कच मे तत्त्वं कच निस्तत्वं ॥ ४८ ॥
कच मे शिष्या कच मे दीक्षा । कच मे आस्तिक नास्तिक पक्षा ॥
कच मे कालं कच मे देशा । कच म गुरु शिष कच उपदेशा ४९॥
कच मे ग्रहणं कच में त्यागं । कच मे विरती कच वैरागं ॥
कच मे चपलं कच मे खेदं । कच मे द्वंद्वं कच निर्द्वंदं ॥ ५० ॥
कच मे बाह्याभ्यंतरभासं । कच अध ऊर्ध्व मध्य प्रकासं ॥
कच मे नाडी साधन योगं । कच मे लक्ष विलक्ष वियोगं ॥ ५१ ॥
कच नानात्वं कच एकत्वं । कच मे शून्याशून्य समत्वं ॥
जो अवशेषं सो मम रूपं । बहुना किं उक्तं च अनूपं ॥ ५२ ॥

दोहा छंद ।

यह म श्रीगुरुदेवको, अनुभव कह्यों सुनाय ॥
जो प्रभुको परिश्रम कियो, सो फल प्रकट्यो आय ॥५३॥

श्रीगुरुरुवाच । चौपाई छन्द ।

हे शिष जो इच्छा करु सोई । तोहि न कितहू बाधा होई ॥
तू निर्भ्रम भयो निर्दोषा । तू अब पायो जीवन मोषा ॥ ५४ ॥
जो मैं कह्यों सु हिर्दै आन्यो । ताहि कर्मते ब्रह्महि जान्यो ॥
आप ब्रह्म जग भेद मिटायो । ज्यों हैं त्योंही निश्चय आयो॥५५॥

---

१ कामहूं । २ को तुमहो । ३ यह संसार क्याहै । ४ डर ।

दखे सुनें रु पर्संत बोलै। सूंत्रत क्रिया कबहुँ करि डोलै
खान पान बस्त्रादिक जोई। यह प्रारब्ध देहको तोई ॥ ५६ ॥

दोहा छन्द।

निरालंब निर्वासना, इच्छाचारी येह ॥
संसकार पवनसों फिरै, शुष्कपर्ण ज्यों देह ॥ ५७ ॥
जीवनमुक्त सदेह सो, लिप्त न कबहूँ होइ ॥
ताको सोई जानि ले, तुम समान जे कोइ ॥ ५८ ॥
जो यह ज्ञानसमुद्रमें, बुडकी मारै आय ॥
सोई मुक्ताफल लहै, दुख दरिद्र सब जाय ॥ ५९ ॥
सुंदर ज्ञानसमुद्रकी, महिमा कहिये कौन ॥
अमृतरस सों है भरयो, तुम जनि जानौ लौन ॥ ६० ॥
सुंदर ज्ञानसमुद्रमहँ, बहुत रत्न अनमोल ॥
मृतक होय सो पैठिहै, पैठि न सकही लोल ॥ ६१ ॥
सुंदर ज्ञानसमुद्रको, पारावार न अन्त ॥
विषयी भाजै झिझकिकै, पैठे कोई संत ॥ ६२ ॥
सुंदर ज्ञानसमुद्रके, जो चलि आवै तीर ॥
देखतही सुख ऊपजे, निर्मल जल गंभीर ॥ ६३ ॥
यह तो ज्ञानसमुद्र है, यह गुरु शिष्य सँवाद ॥
सुंदर जोई कहै सुनै, ताके मिटहिं विषाद ॥ ६४ ॥
संवत सत्रह सौ गये, वर्ष दशोत्तर और ॥
भादों सुदि एकादशी, गुरुवासर शिरमोर ॥ ६५ ॥
ता दिन संपूरण भयो, ज्ञानसमुद्र सु ग्रंथ ॥
सुंदर अवगाहन करै, लहै मुक्तिको पंथ ॥ ६६ ॥

इति श्रीसुंदरदासविरचिते ज्ञानसमुद्रे गुरुशिष्यसंवादे अद्वैत-
निरूपणं नाम पंचमोल्लासः ॥ ५ ॥

समाप्तोयं ज्ञानसमुद्रः ॥

श्रीसुन्दरदासकृत-

ज्ञानविलास प्रारभ्यते।

गुरुदेव अंग। दोहा।

सुंदर सतगुरु वंदिये, सोई वंदन योग ॥
औषध शब्द दिवाइ करि, दूर कियो सब रोग ॥ १ ॥
सुंदर सतगुरु पलकमें, दूर करत अज्ञान ॥
मन वच क्रम जिज्ञासु हैं, शब्द सुनै जो कान ॥ २ ॥
वेद माहिं बहु भेद हैं, जाने बिरला कोइ ॥
सुंदर सो सतगुरु विना, निर्वारो नहिं होइ ॥ ३ ॥
परमातम सो आतमा, जुदे रहे बहुकाल ॥
सुंदर मेला कर दियो, सतगुरु मिले दलाल ॥ ४ ॥
सतगुरु शुद्ध स्वरूप है, शिष्य देखि गुरुदेह ॥
सुंदर कारज क्यों सरे, कैसे बढ़े सनेह ॥ ५ ॥

स्मरण अंग। दोहा।

सुंदर सतगुरु यों कह्यो, सकल शिरोमणि नाम ॥
ताको निशिदिन सुमिरिये, सुखसागर सुखधाम ॥ १ ॥
रंक हाथ हीरा चढ्यो, ताको मोल अमोल ॥
घर घर जो लै बेंचते, सुंदर यांही मोल ॥ २ ॥
राम नाम जाके हिये, ताहि नवैं सब कोइ ॥
ज्यों राजाकी शंकते, सुंदर अतिडर होइ ॥ ३ ॥

साधु अंग । दोहा ।

संत समागम कीजिये, तजिये और उपाइ ॥
सुंदर बहुतहिं उद्धरै, सतसंगतमें आइ ॥ १ ॥
सुरता जो हरि मिलनकी, तो करिये सतसंग ॥
विना परिश्रम पाइये, अविगत देव अभंग ॥ २ ॥
संत मुक्तिके पौरियाँ, तिनसों करिये प्यार ॥
कुंजी उनके हाथ है, सुंदर खोलहिं द्वार ॥ ३ ॥
सुंदर साधु दयालु है, कहै ज्ञान समुझाय ॥
पात्र विना नहिं ठौर है, शब्द निकरि बहिजाय ॥ ४ ॥
संतनके यह वणिज है, निशिदिन ज्ञान विचार ॥
ग्राहक आवे लेनको, ताहीके दातार ॥ ५ ॥

देहात्मा बिछोह अंग । दोहा ।

देह सुरंगी तब लगे, जबलागि प्राण समीप ॥
जीव ज्योति जाती रही, सुंदर बदरँग दीप ॥ १ ॥
सुंदर देह परी रही, निकसि गये जब प्रान ॥
सब कोऊ यों कहत हैं, अब ले जाहु मशानै ॥ २ ॥
सुंदर लोक कुटुंब सब, रहते सदा हुजूर ॥
प्राण गए लागे कहन, काढो घरते दूर ॥ ३ ॥
चेतनते चेतन भई, अतिगति शोभित देह ॥
सुंदर चेतन निकसते, भई खेहकी खेह ॥ ४ ॥

उपदेशचिंतवन अंग । दोहा ।

सुंदर मानुष देहकी, महिमा वरणै साध ॥
जामें पैये परमगुरु, अविगत देव अगाध ॥ १ ॥

---

१ मिलाप-मिलना । २ मुक्त होना-छूटना । ३ मिहनत । ४द्वारपाल दरवान । ५ मरघट । ६ संसार ।

सुंदर मानुष देहकी, महिमा कहिये काहि ॥
जाको बंछें देवता, तू क्यों खोवे ताहि ॥ २ ॥
सुंदर साँची कहत हों, मति आने कछु रोष ॥
जो तैं खोयो रतन यह, तो तोहीको दोष ॥ ३ ॥
बेर बेर नहिं पाइये, सुंदर मानुष देह ॥
रामभजन सेवा सुकृत, यह सौदा करि लेह ॥ ४ ॥
सुंदर मानुष देह यह, तामें दोइ प्रकार ॥
याते बूडे जगतमहँ, याते उतरें पार ॥ ५ ॥

कालचिंतवन अंग । दोहा ।

काल ग्रसंतहै बावरे, चेतत क्यों न अजान ॥
सुंदर काया कोटमें, क्यों हुओ सुलतान ॥ १ ॥
सुंदर काल महाबली, मारे मोटे भीर ॥
तू है कौन कि गिनतिमें, चेतत काहे न वीर ॥ २ ॥
मेरे मंदिर माल धन, मेरो सकल कुटुंब ॥
सुंदर ज्योंको त्यों रह्यो, सप्तलोक आडंब ॥ ३ ॥

सोरठा ।

शिव जु डर्‍यो कैलास, विष्णु डर्‍यो वैकुंठमें ॥
सुंदर मानी त्रास, इंद्र डर्‍यो अमरावती ॥ ४ ॥

दोहा ।

काल दियो जब बंधही, देवलोक सब देव ॥
सुंदर डर्‍यो कुबेर पुनि, देखि सबनकी छेव ॥ ५ ॥
एक रहे कर्त्ता पुरुष, महाकालको काल ॥
सुंदर वह विनशै नहीं, जाको यह सब ख्याल ॥ ६ ॥

---

१ इच्छा । २ पुण्य-सुकर्म । ३ पकडत । ४ किला । ५ देवपुरी । ६ अन्त-नाश ।

तृष्णाको अंग। दोहा।

पलपल छीजे देह यह, घटत घटत घटि जाइ ॥
सुंदर तृष्णा ना घटै, दिन दिन नूतन[1] भाइ ॥ १ ॥
नित नित डोलि ताकती, स्वर्ग मृत्यु पाताल ॥
सुंदर तीनों लोकते, भरयो न एको गाल ॥ २ ॥
सुंदर तृष्णा करत है, सबको बाँधि गुलाम ॥
हुकुम करे त्योंही चले, गिनत शीत नहिं घाम ॥ ३ ॥
सुंदर तृष्णा के लिये, पराधीन ह्वै जाइ ॥
दुःसह वचननिको सहे, जो परहाथ बिकाइ ॥ ४ ॥

देहमलीनको अंग। दोहा।

सुंदर देह मलीन अति, बुरी वस्तुको भौन[2] ॥
हाडमांसको कोथरा[3], भली कहै तिहि कौन ॥ १ ॥
सुंदर पंजर हाडको, चाम लपेटयो ताहि ॥
तामें बैठयो फूलिके, मो समान को आहि ॥ २ ॥
सुंदर न्हावे बहुतही, बहुत करै आचार ॥
देहमाहिं देखे नहीं, भरयो नरक भंडार ॥ ३ ॥

आधीन उराहनेको अंग। दोहा।

देह रच्यो प्रभु भजनको, सुंदर नख शिख साज ॥
एक हमारी बात सुनि, पेट दियो केहि काज ॥ १ ॥
श्रवण दिये यश सुननको, नैन देखने संत ॥
सुंदर शोभित नासिका, मुख शोभनको दंत ॥ २ ॥
और ठौर मन काढिके, करि है तुम्हरी भेट ॥
सुंदर क्योंकरि छूटिये, पाप लगायो पेट ॥ ३ ॥

---

१ नवीन। २ मैली-द्वेष-ईर्षा-कपट-मल-मूत्रका भवन। ३ थैली।

कूप भरे बापी भरे, पूरि भरे जलताल॥
सुंदर पेट न क्यों भरे, कौन बनायो ख्याल॥ ४॥
सुंदर प्रभुजी पेटकी, चिंता दिन अरु रात॥
साँझ खाइ करि सोइये, बहुरि लगे परभात॥ ५॥

विश्वासको अंग। दोहा।

सुंदर तेरे पेटकी, तोको चिंता कौन॥
विश्वभरन भगवंत है, पकरि बैठ तू मौन॥ १॥
सुंदर चिंता मति करे, पाँउ पसारे सोइ॥
पेट कियो है जिन प्रभू, ताको चिंता होइ॥ २॥
जलचर थलचर व्योमचर, सबकी देत अहार॥
सुंदर चिंता जनि करे, निशिदिन बारंबार॥ ३॥
सुंदर प्रभुजी देतहैं, पाहनमें पहुँचाइ॥
तू अब क्यों भूखो रहै, काहेको बिललाइ॥ ४॥

दुष्टको अंग। दोहा।

घर खोवत है आपनो, औरनहू को जाइ॥
सुंदर दुष्ट स्वभाव यह, दोऊ देत बहाइ॥ १॥
दुर्जन संग न कीजिये, सहिये दुःख अनेक॥
सुंदर सब संसारमें, दुष्ट समान न एक॥ २॥
गर्ज मोर तो नाहिं दुख, सिंह करै तनु भंगै॥
सुंदर ऐसो दुख नहीं, जैसो दुर्जन संग॥ ३॥
सुंदर दुर्जन सारिखा, दुखदायक नहिं और॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल हम, देखे सबै ढँढोर॥ ४॥
सुंदर दुर्जनको वचन, दुःसहै सह्यो न जाइ॥

---

१ बावली। २ व्याकुल। ३ कुंजर-हाथी। ४ नाश। ५ ढूँढि। ६ सहने योग्य नहीं।

सहैं सु विरले संत जन, जिनके राम सहाइ ॥ ५ ॥

मनको अंग । दोहा ।

मनको राखत हटक करि, सटकि कहूँ दिशि जाइ ॥
सुंदर लटकुर लालची, गटकि विषयफल खाइ ॥ १ ॥
पलहीमें मरिजात मन, पलमें जीवत सोइ ॥
सुंदर परिगो मुरछिके, बहुरि सजीवन होइ ॥ २ ॥
साधत साधत दिन गये, करहि औरकी और ॥
सुंदर एक विचार बिनु, मन नहिं पावै ठौर ॥ ३ ॥
सुंदर यह मन रंक है, कबहुँ होइ मन राव ॥
कबहूँ टेढो ह्वै चलै, कबहूँ सूधे पाव ॥ ४ ॥
पाप पुण्य मैंने किये, स्वर्ग नरक हौं जाउँ ॥
सुंदर सब कछु मानिले, याहीते मन नाउँ ॥ ५ ॥
मनको साधन एक है, निशिदिन ब्रह्मविचार ॥
सुंदर ब्रह्म विचारते, ब्रह्म होत नहिं बार ॥ ६ ॥
देहरूप मन ह्वै गयो, कियो देह अभिमान ॥
सुंदर समुझे आपको, आपु होय भगवान ॥ ७ ॥

शूरातनको अंग । दोहा ।

सुंदर सोई शूरमा, लोट पोट ह्वै जाइ ॥
ओट कछू राखै नहीं, चोट मूँह पर खाइ ॥ १ ॥
सुंदर शील सनाह करि, तोष दियो शिर टोप ॥
ज्ञान खड्ग पुनि हाथ करि, कियो जु मनपर कोप ॥ २ ॥
मारे सब संग्राम करि, पिशुन हुते घट माहिं ॥
सुंदर कोई शूरमा, साधु बराबर नाहिं ॥ ३ ॥
सुंदर निशदिन साधुके, मन मारन की मूठ ॥
मनके आगे भाजिके, कबहुँ न देवैं पूंठ ॥ ४ ॥

---

१ कोई एक । २ रोक । ३ चला । ४ लडाई । ५ चोर । ६ भाग ।

वचन विवेकको अंग। दोहा।

सुंदर तबहीं बोलिये, समुझि हियेमें[1] पैठि॥
कहिये बात विवेककी, नहिं तर चुप ह्वै बैठि॥ १॥
सुंदर मौन गहे रहै, जानि सकै नहिं कोइ।
बिन बोले गरुवा रहे, बोले हरुआ होइ॥ २॥
सुंदर वेही बोलिये, जा बोलेमें ढंग॥
नातर पशु बोलत सदा, कौन स्वाद रस रंग॥ ३॥
सुंदर वचन कुवचनमें, रात दिवस[3] को फेर॥
सुवचन सदा प्रकाशमय, कुवचन सदा अँधेर॥ ४॥
जा बाणीमें पाइये, भक्ति ज्ञान वैराग॥
सुंदर ताको आदरै, और सकलको त्याग॥ ५॥

निजभावको अंग। दोहा।

सुंदर अपनो भावहै, जो कछु दीसै[4] आन॥
बुद्धि योग विभ्रम भयो, दोउ ज्ञान अज्ञान॥ १॥
अपनी छाया देखिकै, कूकर जाने आन॥
सुंदर अतिही जोर करि, भूंकि मरत है श्वान॥ २॥
सिंह कूपमें आयके, देखै अपनी छाँह॥
सुंदर जान्यो दूसरो, बूडि मरचो तामाहँ॥ ३॥
फटिक शिलासों आयके, कुंजर तोरे दंत॥
आगे देखे और गज, सुंदर आगि अनंत॥ ४॥
सुंदर याको ऊपजे, काम क्रोध अरु मोह॥
याहीको है मामता, याहीको है द्रोह॥ ५॥

स्वरूप विस्मरणको अंग। दोहा।

सुंदर भूल्यो आपुको, खोइ आपनी ठौर॥
देहमांहि मिलि देहसों, भयो औरको और॥ १॥

---

१ हृदय। २ ज्ञान। ३ दिन। ४ दीखै।

ज्यों मणि काहू कंठमें, ढूँढत पावै नाहिं ॥
पूँछत डोलत औरको, सुंदर आपहि माहिं ॥ २ ॥
सुंदर चेतन आप यह, चालत जडकी चाल ॥
ज्यों लंकडीके अश्वं चढि, कूदत डोलत बाल ॥ ३ ॥
भूतनि माहीं मिल रह्यो, ताते होतहि भूत ॥
सुंदर भूल्यो आपुको, उरझानो मन सूत ॥ ४ ॥

सांख्यको अंग । दोहा ।

सुंदर सांख्य विचारि करि, समुझे अपनो रूप ॥
नहिं तो जडके संगते, बूडत है भ्रमकूप ॥ १ ॥
मायाके गुण जड सबै, आतम चेतन जानि ॥
सुंदर सांख्य विचारिकरि, भिन्न भिन्न पहिचानि ॥ २ ॥
पंचतत्त्वकी देह जड, सबगुण मिलि चौबीस ॥
सुंदर चेतन आतमा, ताहि मिले पच्चीस ॥ ३ ॥
देहरूपही ह्वै रह्यो, देह आपको मानि ॥
ताहीते यह जीव है, सुंदर कहत बखानि ॥ ४ ॥
देह भिन्न ह्वै भिन्न हो, जब यह करे विवेक ॥
सुंदर जीव न पाइये, होइ एकको एक ॥ ५ ॥
क्षीण सुपुष्ट शरीर है, शीतं उष्णं तिहिं लार ॥
सुंदर जन्म जरा लगै, ए षट देह विकार ॥ ६ ॥
क्षुधां तृषां गुण प्राणके, शोक मोह मन होइ ॥
सुंदर साखी आतमा, जाने बिरलां कोइ ॥ ७ ॥
जाकी सत्तां पाइ करि, सब गुण ह्वै चैतर्न्य ॥
सुंदर सोई आतमा, तुम जनि जानो अन्यं ॥ ८ ॥

---

१ घोडा । २ जाड़ा । ३ गरम । ४ भूख । ५ प्यास । ६ बाजे । ७ शक्ति । ८ सावधान । ९ दूसरा ।

विचारको अंग । दोहा ।

सुंदर साधन सब किये, उपज्यो हिये विचार ॥
श्रवण मनन निंदिध्यास पुनि, याही साधनसार ॥ १ ॥
सुंदर यह साधन बिना, दूजो नहीं उपाइ ॥
निशिदिन ब्रह्म विचारते, जीव ब्रह्म ह्वै जाइ ॥ २ ॥
दधि मथि घृतको काढिके, देत तक्रमें[1] डारि ॥
सुंदर बहुरि मिले नहीं, ऐसे लेहु विचारि ॥ ३ ॥
सुंदर ब्रह्मविचार है, सब साधनको मूल ॥
याहीमें आये सकल, डार पात फल फूल ॥ ४ ॥
सूतो जीव नरेश यह, सुख शय्या पर आइ ॥
बढी अविद्या[2] नींदमें, सुंदर अतिसुख पाइ ॥ ५ ॥
आयो कर्म खवास चलि, नृपति[3] जगावन हेत ॥
सुंदर दानी फूट परि, अतिगति भयो अचेत[4] ॥ ६ ॥
देखे भक्ति प्रधान जब, राजा जाग्यो नाहिं ॥
सुंदर शंका करि नहीं, पकरि झझेरा[5] बाहिं ॥ ७ ॥
तब उठि करि बैठो भयो, बहुरि जँभाई खात ॥
सुंदर कियो विचार जब, तब भाग्यो साक्षात ॥ ८ ॥

आत्मानुभवको अंग । दोहा ।

मुखते कह्यो न जात है, अनुभवको आनंद ॥
सुंदर समुझे आपको, जहाँ न कोई द्वंद ॥ १ ॥
सुंदर जैसे शर्करा[6], गूंगे खाई होइ ॥
मुखते कहि आवे नहीं, काँख पडावे सोइ ॥ २ ॥
रवि[7] शशि[8] तारा दीप[9] गण, हीरा होइ अनूप[10] ॥

---

१ छांछ। २ मूर्खता। ३ राजा। ४ बेहोश। ५ लडाई। ६ शकर। ७ सूरज। ८ चंद्रमा। ९ चिराग। १० अद्भुत।

सुंदर इनके तेजते, दीसै इनको रूप ॥ ३ ॥
त्यों आतमके तेजते, आतम करै प्रकासु ॥
सुंदर इंद्रिय जड सबै, कोइ न जानै तासु ॥ ४ ॥
सुंदर साधन सब करैं, कहैं मुक्तिमें जाहिं ॥
आतमके अनुभवे बिना, और मुक्ति कहुँ नाहिं ॥ ५ ॥
दूरि करैं सब बासना, आशा रहै न कोइ ॥
वाही सुंदर मुक्तिहै, जीवतही सुख होइ ॥ ६ ॥
श्रवण ज्ञान है तब लगे, शब्द सुनै चित लाइ ॥
सुंदर मायाजल परे, पावकें ज्यों बुझि जाइ ॥ ७ ॥
मनन ज्ञान नाहिं जातहै, ज्यों बिजुरी उद्योते ॥
मायाजल बरषत रहै, सुंदर चमका होत ॥ ८ ॥
निदिध्यासहै ज्ञान पुनि, बडवा अनल समान ॥
मायाजल भक्षण करै, सुंदर यह हैरान ॥ ९ ॥
आतम अनुभव ज्ञान है, प्रलैय कालकी अंच ॥
भस्म करै सब जारिकै, सुंदर द्वैत प्रपंच ॥ १० ॥
नित्य कहत गुरु आतमा, सो है शब्द प्रमान ॥
जैसे व्यापक व्योमं है, सुंदर यह उपमान ॥ ११ ॥
जाकी सत्ता इन्द्रियनि, यह कहिये अनुमान ॥
सुंदर अनुभव आतमा, यह प्रतक्ष परमान ॥ १२ ॥
सुंदर तत्त्व जुदे जुदे, राख्यो नाम शरीर ॥
ज्यों कदलीके खंभलौं, कौन वस्तु है बीर ॥ १३ ॥
है सो सुंदर है सदा, नहिं सो सुंदर नाहिं ॥
नहिं सो परकट देखिये, है सो कहिये नाहिं ॥ १४ ॥

१ ज्ञान। २ कामना। ३ कान। ४ अग्नि। ५ प्रकाश। ६ अग्नि। ७ नाश।
८ आकाश। ९ केला। १० चीज। ११ प्रत्यक्ष।

ज्ञानीको अंग। दोहा।

सुंदर ज्ञानी जगतमें, विचरै सदा अलिप्तै ॥
ए गुण जाने देहके, भूखे रहै कि तृप्त ॥ १ ॥
निंदा स्तुति है देहकी, कर्म शुभाशुभ देह ॥
सुंदर ज्ञानी ज्ञानमय, कछुइ न जाने एह ॥ २ ॥
अज्ञ क्रिया सब करत है, अहंबुद्धिको आनि ॥
सुंदर ज्ञानी करत है, अहंकार बिनु जानि ॥ ३ ॥
सुंदर अज्ञ रु तज्ञके, अंतर है बहु भाँति ॥
वाके दिवस अनूप है, वाहि अँधेरी राति ॥ ४ ॥
सुंदर ज्ञान प्रकाशते, धोखा रहै न कोइ ॥
भावै घर भीतर रहै, भावै वनमें होइ ॥ ५ ॥

इति श्रीसुंदरदासकृतो ज्ञानविलासः समाप्तः ॥

अथ श्रीसुंदराष्टकानि प्रारभ्यंते।

अथ गुरुमहिमाऽष्टक ॥ १ ॥

दोहा।

परमेश्वर अरु परमगुरु, दोनों एक समान ॥
सुंदर कहत विशेष यह, गुरुते पावै ज्ञान ॥ १ ॥
दादू सतगुरुके चरण, वंदत सुंदरदास ॥
तिनकी महिमा कहत हूं, जिनते ज्ञान प्रकाश ॥ २ ॥

भुजंगप्रयात छन्द।

प्रकाश स्वरूपं हृदै ब्रह्म ज्ञानं। सदाचार येही निराकारै ध्यानं ॥
निरीहं निजानंद जानौ जुगादू। नमो देव दादू नमो देव दादू ॥३॥

---

१ किसीमें लीन नहीं। २ मूर्ख। ३ आकाररहित। ४ चेष्टारहित।

अछेदं अभेदं अनंतं अपारं । अगाधं अबाधं निराधार सारं ॥
अजीतं अभीतं गहे है समादू । नमो देव दादू नमो देव दादू ॥४॥
हते काम क्रोधं तजे कालजालं । भगे लोभं मोहं गये सर्व सालं ॥
नहीं द्वंद् कोऊ डरै है यमादू । नमो देव दादू नमो देव दादू ॥५॥
गुणातीत देहादि इंद्री जहालं । किये सर्व संहार वैरी वहालं ॥
महा शूरवीरं नहीं को विषादू । नमो देव दादू नमो देव दादू ॥६॥
मनो काय वाचं तजे है विकारं । उदै भान होतं गयो अंधकारं ॥
अयोनी अनायास पाये अनादू । नमो देव दादू नमो देव दादू ७॥
क्षमावंत भारी दयावंत ऐसे । प्रमाणीक आगे भये संत जैसे ॥
गह्यो सत्य सोई लह्यो पंथ आदू । नमो देव दादू नमो देव दादू ८
किये आप आपे बडे तत्त्व ज्ञाता । बडी मौज पाई नहीं पक्षपाता ॥
बडी बुद्धि जाकी तज्यो है विवादू । नमो देव दादू नमो देव दादू॥
पढै याहि नित्यं भुजंगप्रयातं । लहै ज्ञान सोई मिलै ब्रह्म तातं ॥
मनोकामना सिद्ध पावै प्रसादू । नमो देव दादू नमो देव दादू१०॥

दोहा ।

परमेश्वरमें गुरु बसै, परमेश्वर गुरु माहिं ॥
सुंदर दोऊ परसपर, भिन्न भाव कछु नाहिं ॥ ११ ॥
परमेश्वर व्यापक सकल, घट धारे गुरु देव ॥
सब घटकूं उपदेश दे, सुंदर पावै भेव ॥ १२ ॥

इति गुरुमहिमाऽष्टक संपूर्ण ॥ १ ॥

अथ गुरुदयाऽष्टक ॥ २ ॥

दोहा ।

अलखं निरंजन वंदिकै, गुर दादूके पायँ ॥
दोऊ कर तब जोर कर, संतनकूं शिरनाय ॥ १ ॥

---

१ अथाह । २ किसीके जीतनेयोग्य नहीं । ३ निडर । ४ भेद । ५ अदृश्य ।

सुंदर मोहि दया करी, सतगुरु पकरो हाथ ॥
मातो था अति मोहमें, रातो विषया साथ ॥ २ ॥

त्रिभंगी छंद ।

तौ मैं मत माता विषया राता, बहिया जाता इन बाता ॥
तब गोते खाता डुबता जाता, होती घाता पछताता ॥
उन सब सुखदाता काढ्यो नाता, आप विधातां गहिलेला ॥
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ॥ ३ ॥
तौ सतगुरु आया पंथ बताया, ज्ञान गहाया मन भाया ॥
सब कृत्रिम माया यूं समुझायां, अलख लखाया सच पाया ॥
हूं फिरता धाया उन्मुनि लाया, त्रिभुवन राया दत देला ॥
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ॥ ४ ॥
तो माया छटके कालहि झटके, लेकरि पटके सब गटके ॥
ए चेटकें नटके जानहि तटके, नेक न अटके तब सटके ॥
जी डोलत भटके सतगुर हटके, बंधन घटके काटेला ॥
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ॥ ५ ॥
तौ पाई जरिया शिरपर धरिया, विषे उखरियां तन तरिया ॥
जी अब नहिं डरिया चंचल थिरिया, गुरु उच्चरिया सो करिया ॥
तब उमँग्यो दरियो अमृत झरिया, घट भरिया छूटै रेला ॥
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ॥ ६ ॥
तौ देख्या सीनैं मांझ नगीना, मारग झीनैं पग हीना ॥
अब होइ न दीना दिन दिन छीना, जलमें मीना यूं लीना ॥
जी सो परवीना रसमें भीना, अंतर कीना मन मेला ॥
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ॥ ७ ॥

---

१ मस्त । २ अनुराग । ३ मझा । ४ बनावट । ५ जादू । ६ टोटक । ७ रुकना। ८ भागनो । ९ निवारण । १० चपळ । ११ नदी । १२ छाती । १३ पतला, बारीक ।

तौ बैठा छाजं अंतर गाजं, रणमें राजं नहिं भाजं ॥
सो कीया काजं जोड्या साजं, तोडी लाजं यह पाजं ॥
उन सब शिरताजं तबहिं निवाजं, आनँद आजं आकेला ॥
दादूका चेला चेतन भेला, सुंदर मारग बूझेला ॥ ८ ॥

॥ इति गुरुदयाष्टक संपूर्ण ॥ २ ॥

अथ गुरुकृपाऽष्टक ॥ ३ ॥

दोहा।

दादू सतगुरुके चरण, अधिक अरुण अरविंद।
दुःखहरण तारण तरण, मुक्त करण सुखकंद ॥
नमस्कार सुंदर करत, निशिदिन बारंबार।
सदा रहौ मम शीश पर, सतगुरु चरण तुम्हार ॥ १ ॥

त्रिभंगी छंद।

तौ चरण तुम्हारा प्राण हमारा, तारण हारा भव पोतं ॥
जो गहै विचारा लगै न वारा, विन श्रम पारा सो होतं ॥ २ ॥
सब मिटै अँधारा होइ उजारा, निर्मल सारा सुखराशी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी ॥ ३ ॥

दोहा।

तन मन इन्द्रिय वशकरण, ऐसा सतगुरु शूरं ॥
शंक न आनै जगत की, हरिसूं सदा हुजूर ॥ ४ ॥

त्रिभंगी छंद।

तौ सदा हुजूरं अरिदल चूरं, भागै दूरं भकभूरं ॥
तब बाजै तूरं आतम मूरं, झिल मिल नूरं भरपूरं ॥

---

१ जिसका नाश कभी न हो। २ बली। ३ शत्रुकी सैन्य।

पुनि यहि अंकूरं नाहीं ऊरं, प्रेम हलूरं बरखासी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी ५॥

दोहा ।

द्वंद्वरहित निर्मल सदा, सुख दुख एक समान ॥
भेदाभेद न देखिये, सतगुरु चतुर सयान ॥ ६ ॥

त्रिभंगी छंद ।

तौ चतुर सयानं भेद न आनं, अविचल थानं जिन जानं ॥
अरु सब भ्रम भानं नाहीं छानं, पद निर्वाणं मन मानं ॥
जो रहै निदानं सो पहिचानं, पूरण ज्ञानं मम आसी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी ॥ ७ ॥

दोहा ।

समदृष्टी शीतल सदा, अद्भुत जाकी चाल ॥
ऐसा सतगुरु कीजिये, पलमें करै निहाल ॥ ८ ॥

त्रिभंगी छंद ।

तौ करै निहालं अद्भुत चालं, भया निरालं तजि जालं ॥
सो पिवै पियालं अधिक रसालं, ऐसा हालं यह ख्यालं ॥
पुनि वृद्ध न बालं कर्म न कालं, भागै सालं चतुराशी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी ॥ ९ ॥

दोहा ।

मनसा वाचा कर्मणा, सबहीसूं निर्दोष ॥
क्षमा[1] दया जिनके हृदय, लिये सत्य संतोष[2] ॥ १० ॥

त्रिभंगी छंद ।

तौ सत संतोषं है निर्दोषं, कितहु न रोषं सब पोषं[3] ॥

---

१ सहनशील । २ संतुष्टता । ३ भरण ।

पुनि अंतः कोषं, निर्मल चोषं, नाहीं दोषं गुण सोषं ॥
तिह सम सर जोषं, कोइ न होषं, जीवन मोषं दरशाशी ॥
दादू गुरु आया, शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी ॥ ११ ॥

दोहा।

भानु उदय ज्यूं होत है, रजनी तमको नाश ॥
सुखदायी शीतल सदा, जिनके हृदय प्रकाश ॥ १२ ॥

त्रिभंगी छन्द।

तौ हृदय प्रकाशं रटते श्वाशं, भया उजासं तम नाशं ॥
पुनि धरणि अकाशं मध्य निवासं, कीया वासं अनयासं ॥
सो है निज दासं प्रभुके पासं, करत विलासं गुणगासी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी ॥ १३ ॥

दोहा

सतगुरु प्रगटे जगतमें, मानहु पूरणचंद ॥
घटमाहीं घटसों पृथकें, लिपत न कोऊ द्वंद्व ॥ १४ ॥

त्रिभंगी छन्द।

तौ लिपत न द्वंद्वं पूरण चंदं, नित्यानंदं निष्पंदं ॥
सो गुरु गोविंदं एक पसंदं, गावत छंदं सुखकंदं ॥
जे है मतिमंदं बाधे फंदं, ये सब रंदं मुरझासी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी ॥ १५ ॥

दोहा।

सतगुरु सुधा समुद्र है, सुधामयी है नैन ॥
नखशिख सुधा स्वरूप है, सुधा सु वर्षै वैन ॥ १६ ॥

---

१ उत्तम। २ सूर्य। ३ रात्रि। ४ अंधकार। ५ अलग। ६ लीन। ७ अमृत।

त्रिभंगी छन्द ।

तौ जिनकी वानी संतन मानी, अंमृतखानी सुखदानी ॥
जी निकरी प्रानी हिरदय आनी, बुद्धि थिरानी उन जानी ॥
ए अकथं कहानी प्रकट प्रमानी, नाहिं न छानी गंगासी ॥
दादू गुरु आया शब्द सुनाया, ब्रह्म बताया अविनाशी ॥ १७ ॥

छप्पय छन्द ।

सतगुरु ब्रह्म स्वरूप, रूप धारे जगमाहीं ।
जिनके शब्द अनूप, सुनत संशय सब जाहीं ॥
उरमें ज्ञानप्रकाश, होत कछु लगै न बारा ।
अंधकार मिटि जाइ, कोटि सूरज उजियारा ॥
दादू दयालु दुहुँ दिशि प्रगट, झगरि झगरि द्वै पख थकी ॥
कहि सुंदर पंथ प्रसिद्ध यह, सांप्रदाय परब्रह्मकी ॥ १८ ॥

इति गुरुकृपाऽष्टक संपूर्ण ॥ ३ ॥

अथ भ्रमविध्वंसाऽष्टक ॥ ४ ॥

दोहा ।

सुंदर देख्या शोधिके, सब काहूका ज्ञान[1] ॥
कोई मन माने नहीं, विना निरंजन ध्यान ॥ १ ॥
षट्‌दर्शन हम खोजिया[2], योगी जंगम शेष ॥
संन्यासी अरु सेवडा, पंडित भक्ता भेष ॥ २ ॥

त्रिभंगी छन्द ।

तौ भक्त न भावै दूर बतावै, तीरथ जावै फिर आवै ॥
जो कृत्रिम[3] गावै पूजा लावै, झूठ दृढावै बहँकावै ॥
अरु माला लावै तिलक बनावै, क्यूं पावै गुरु बिन गैलां[4] ॥

---

१ कहनेम नहीं आवे । २ खोज । ३ बनावट । ४ रास्ता ।

दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा[1] है खेला ॥ ३ ॥
तौ योगी गहेलौ[2] देख सहेला, नाहिं लहेलौ[3] वे महेला ॥
वे मांस भखेला[4] मद्य[5] पिवेला, भूत जपेलौ[6] पूजेलौ[7] ॥
जो गोरख कहेला सोन करेला, बिनहि चहेला बोधेला ॥
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा है खेला ॥ ४ ॥
तौ तपी संन्यासी राख लगासी, जटा बढासी भटकासी ॥
जब यौवन जासी धौला[8] आसी, तब कर दासी बैठासी ॥
सब अकल गमासी लोक हसासी, माया पासी उरझेलो ॥
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा है खेला ॥ ५ ॥
तौ जंगम अंगा पडके लंगा, फिरै कुढंगा सब मंगा ॥
वे डसै अनंगो[9] बडे भुजंगा, दीप पतंगा[10] सरवंगा ॥
पुनि नाहीं चंगा देखै रंगा, उनको संगा छाडेला ॥
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा है खेला ॥ ६ ॥
तो अर्हत धर्मी भारी भर्मी, केश उपर्मी बेशर्मी[11] ॥
जी भोजन नर्मी खावै खुर्मी, मन्मथ[12] कर्मी अत ऊर्मी[13] ॥
अरु दृष्टि सु चर्मी अंतर गर्मी, नाहीं नर्मी गंठेला ॥
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा है खेला ॥ ७ ॥
तौ शेख मुलाना पढै कुराना, पश्चिम जाना उन ठाना ॥
जी भाँग मुलाना बग्ग निछाना, भये दिवानौ[14] शैताना ॥
अरु जीव दुखाना दर्द[15] न आना, कह्या न माना वरझेला ॥
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा है खेला ॥ ८ ॥
तौ पंडित आए वेद बुलाए, षट[16] कर्माये त्रपनाये ॥
जी संध्या गाए पढि उरझाए, राना राए ठगि आए ॥

---

१ अलग । २ पकडना । ३ पाना । ४ खाना । ५ शराब । ६ जप । ७ पूजता है । ८ सफेद । ९ कामदेव । १० पतंगा । ११ निर्लज्जता । १२ कामदेव: १३ लहरी–तरंग । १४ बावला । १५ पीडा । १६ छः ।

अरु बडे कहाए गर्व न जाए, राम न पाए थापेला ॥
दादूका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा है खेला ॥ ९ ॥
तो ये मत हेरे सबहिन केरे, गहि गहि घेरे बहुतेरे ॥
तब सतगुरु टेरे कानन मेरे, जाते फेरे आ घेरे ॥
औ शूर सबेरे उदय किंयेरे, सबै अँधेरे नाशेला ॥
दादका चेला भर्म पछेला, सुंदर न्यारा है खेला ॥ १० ॥

छप्पय छंद।

सतगुरु मिलै सुजान[२], श्रवण जिन शब्द सुनाया ॥
शिरपर दीया हाथ, भर्म सब दूर उडाया ॥
उपजा आतमज्ञान, ध्यान अभिअंतर[३] लागा ॥
किया ब्रह्मसूं नेह, जगतसूं तोरचा तागा ॥
तौ राम दत्त जब पाइया, छूटै वाद विवादते ॥
अब सुंदरदास सुखी भया, गुरु दादू परसादते[४] ॥ ११ ॥

॥ इति भ्रमविध्वंसाऽष्टक ॥ ४ ॥

अथ गुरुज्ञानोपदेशाऽष्टक ॥ ५ ॥

दोहा।

दादू सतगुरु शीशपर, उरमें जिनको नाम ॥
सुंदर आए शरण तकि, तिन पायो निजधाम ॥ १ ॥
बहे जात संसारमें, सतगुरु पकडे केश ॥
सुंदर काढे डूबते, दे अद्भुत उपदेश ॥ २ ॥

हरिगीत छंद।

उपदेश श्रवण सुनाय अद्भुत, हृदय ज्ञान प्रकाशियो ॥
चिरकालको अज्ञान पूरण, सकल भ्रम तम नाशियो ॥

---

१ अभिमान। २ चतुर। ३ अंतःकरण। ४ कृपा।

आनंददायक पुनि सहायक, करत जन निष्काम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥ ३ ॥

दोहा।

सुंदर सतगुरु हाथमें, करडी लई कमान ॥
मार्‍या खैंचिक शीशकर, वचन लगाये बान ॥ ४ ॥

हरिगीत छन्द।

जिन वचन बाण लगाय उरमें, मृतक फेरि जिवाइया ॥
सुखद्वार होइ उचार करि, निज सार अमृत पाइया ॥
अत्यंत करि आनंदमें, हम रहत आठौं याम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥ ५ ॥

दोहा।

सुंदर सतगुरु जगतमें, पर उपकारी होइ ॥
नीच ऊंच सब उद्धरै, शरण जु आवै कोइ ॥ ६ ॥

हरिगीत छन्द।

जो जाइ शरणहि होइ प्रापत, ताप तिन तनुको हरै ॥
पुनि फेर बदले घाट उनको, जीवते ब्रह्महि करै ॥
कछु ऊंच नीच न दृष्टि जिनके, सकलको विश्राम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥७॥

दोहा।

सुंदर सतगुरु सहजमें, किये सु पहिली पार ॥
और उपाय न तरिसकै, भवसागर संसार ॥८॥

हरिगीत छन्द।

संसारसागर महादुस्तर, ताहि कहु अब क्यूं तरै ॥
जो कोटि साधन करै कोऊ, वृथाही पचि पचि मरै ॥

जिन विन परिश्रम पार कीये, प्रकट सुखके धाम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥ ९ ॥

दोहा ।

सुंदर सतगुरु यूं कहै, याही निश्चय आन ॥
जो कछु सुनिये देखिये, सर्व स्वप्न करि जान ॥ १० ॥

हरिगीत छन्द ।

यह स्वप्न तुल्य दिखाइ दीयो, स्वर्ग नरक उभय कहे ॥
सुख दुःख हर्ष विषाद पुनि, मानापमानहि सब गहे ॥
जिन जाति कुल अरु वरण आश्रम, कहत मिथ्या नामहै ॥
दादू दयाल प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥ ११ ॥

दोहा ।

सुंदर सतगुरु यूं कहै, सत्य कछू नहिं रंच ॥
मिथ्या माया विस्तरी, जो कछु सकलप्रपंच॥ १२ ॥

हरिगीत छन्द ।

उपज्यो प्रपंच अनादिको, यह महामाया विस्तरी ॥
नानात्व है करि जगत भास्यो, बुद्धि सबहिनकी हरी ॥
जिन भ्रम मिटाइ, दिखाइ दीनो, सर्व व्यापक राम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥ १३ ॥

दोहा ।

सुंदर सतगुरु यूं कहै, भ्रमते भासै और ॥
सीपिमाहिं रूपो दृशै, सर्प रज्जुकी ठौर ॥ १४ ॥

हरिगीत छन्द ।

रज्जुमहँ ज्यूं सर्प भासै, सीपिमें रूपो यथा ॥
मृगतृषा जल मति देखही सो, विश्व मिथ्या है तथा ॥

जिन लह्यो ब्रह्म अखंड पद, अद्वैत सबही ठाम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥ १५ ॥

दोहा।

सुंदर सतगुरु यूं कहै, मुक्ति सहजही होइ ॥
या अष्टकते भ्रम मिटै, नित्य पढै जो कोइ ॥ १६ ॥

हरिगीत छंद।

जो पढै नित्यहि ज्ञानअष्टक, मुक्त होइ सु सहजही ॥
संशय न कोऊ रहै ताको, दास सुंदर यूं कही ॥
जिन है कृपालु अनेक तारे, सकल विधि उद्दाम है ॥
दादू दयालु प्रसिद्ध सतगुरु, ताहि मोर प्रणाम है ॥ १७ ॥

दोहा।

सुंदर अष्टक श्रेष्ठ यह, तुम जनि जानै आन ॥
अष्टक याहि कहै सुनै, ताकूं उपजै ज्ञान ॥ १ ॥

इति गुरुज्ञानोपदेशाऽष्टक संपूर्ण ॥ ५ ॥

अथ पीरमुर्शिदाऽष्टक ॥ ६ ॥

दोहा।

सुंदर खोजत खोजते, पाया मुर्शिद पीर ॥
कदम जाइ उसके गहे, देखा अति गंभीर ॥ १ ॥

शंकर (चामर) छंद।

अवली कदम उस्तादके म, गहे दोऊ दस्त ॥
उन मिहिर मुझपर करी ऐसी, ह्वै गया मैं मस्त ॥ २ ॥
जब सखुन करी मुझकूं कहा, तू बंदगी कर खब ॥
इस राह सीधा जायगा, तब मिलैगा महबूब ॥ ३ ॥

तब उठि अरज उस्तादसूं, मैं करी ऐसी रौंस ॥
तुम मिहिर मुझपर करी मुर्शिद मैं, तुम्हारी कौंस ॥ ४ ॥
वह बंदगी किस रौंस करिये ? मुझे देहु बताइ ॥
वह राह सीधा कौन है ? जिस राह बंदा जाइ ॥ ५ ॥
तब कहै पीर मुरीदसूं, तू हिरस राह गुजार ॥
यह बंदगी तब होयगी, इस नफ्सकूं गाहिमार ॥ ६ ॥
भी दूइ दिलते दूर करिये, और कछु नहिं चाह ॥
यह राह तेरा तुझी भीतर, चल्या तूंहीजाइ ॥ ७ ॥
तब फिर कहा उस्तादसूं, यह राह है बारीक ॥
क्यूं चलै बंदा बिगर देखे, सबैमूं फारीक ? ॥ ८ ॥
अब मिहिर करि उस राहकूं, दिखलाइ दीजे पीर ॥
मुझ तलब है उस राहकी, ज्यूं पिवै प्यासा नीर ॥ ९ ॥
तब कहै पीर मुरीदसेती, बंदगी करि येह ॥
यह राह पहुँचे चुस्तदम, कर नाम उसका लेह ॥ १० ॥
तू नाम उसका लेयगा, तब जायगा उस ठौर ॥
जहँ अरस ऊपर आप बैठा, दूसरा नहिं और ॥ ११ ॥
तब कह तालब सुनौ मुर्शिद, जहाँ बैठा आप ॥
वह होइ जैसा कहौ तैसा, जिसे माइ न बाप ॥ १२ ॥
बैठा उठा कहिये तिसेहि, वजूद जिसका होइ ॥
वेचून उसकूं कहत हैं, अरु बेनमूने सोइ ॥ १३ ॥
जब कहा तालब सखुन ऐसा, पीर पकरी मौन ॥
को कहैगा न कहा न किनहूं, अब कहै कहु कौन ॥ १४ ॥
तब देखि ओर मुरीदकी, उन पीर मूंदे नैन ॥
जो खूब तालब होयगा, तौ समुझि लेगा सैन ॥ १५ ॥
हैरान है हैरान है, हैरान निकट न दूर ॥
भी सुखन क्यूं करि कहै तिसकूं, सकल है भरपूर ॥ १६ ॥

सम्वाद पीरमुरीदका यह, भेदपावै कोइ ॥
यूं कहै सुन्दर सुनै सुन्दर, वही सुंदर होइ ॥ १७ ॥

इति पीरमुर्शिदाऽष्टक संपूर्ण ॥ ६ ॥

अथ रामजीअष्टक ॥ ७ ॥

मोहनी छंद ।

आदितुमहींहुतेऔरनहिंकोइजी । अकहअतिअगहगतिवरणनहिंहोइजी॥
रूप नहिं रेख नहिं श्वेत नहिं श्यामजी । तू सदा एकरस रामजी रामजी १
प्रथमहीं आपने मूल माया करी । बहुरि सो विविध है त्रिगुणमय विस्तरी
पञ्चहू तत्वते रूप अरु नाम जी । तू सदा एकरस रामजी रामजी॥ २॥
विधि रजोगुणलियेजगत उत्पन्न करै।विष्णु सतगुण लियेपालनाडर धरै॥
रुद्र तमोगुण लिये संहरै धाम जी । तू सदा एकरस रामजी रामजी॥ ३॥
इंद्र आज्ञा लिय करत नहिं और जी । मेघ बर्षा करै सर्वही ठौर जी ॥
शूर शशि फिरत है,आठहू यामजी । तू सदा एकरस रामजी रामजी॥ ४॥
देव अरु दानवा यक्ष ऋष सर्व जी।साध अरु सिद्ध मुनि होत निर्गर्व जी॥
शेषहू सहसमुख भजत निष्कामजी । तू सदा एकरस रामजी रामजी॥ ५॥
जलचरा थलचरा नभचरा जंत जी । चारिहू खानिके जीव अनगन्तजी॥
सर्व उपजै खपै पुरुष अरु बामजी । तू सदा एकरस रामजी रामजी॥ ६॥
भ्रमत संसार कितहू नहीं ठोरजी । तीनहू लोकमें कालको शोर जी ॥
मनुष तनु यह बडे भाग्यते पामजी । तू सदा एकरस रामजी रामजी ७॥
पूर्व दशहूदिशा सर्वमें आपजी । स्तुतीको करि सकै पुण्य नहिं पापजी ॥
दास सुंदर कहै देहु विश्राम जी । तू सदा एकरस रामजी रामजी ॥८॥

इति रामजीअष्टक सम्पूर्ण ॥ ७ ॥

अथ नामाऽष्टक ॥ ८ ॥

मोहनी छंद।

आदि तू अंत तू मध्य तू व्योमवत् । वायु तू तेज तू नीर तू भूमिवत् ॥
पंचहू तत्त्वते देह तैंही करे । हे हरे हे हरे हे हरे हे हरे ॥ १ ॥
चारिहू खानिके जीव तैंही सृजे । योनिही योनिके द्वार आई व्रजे ॥
ते सबै दुःखमें जे तुम्हें वीसरे । ईश्वरे ईश्वरे ईश्वरे ईश्वरे ॥ २ ॥
जो कछू ऊपजै आधि औ व्याधवे । दूर तूही करै सर्वही बाधवे ॥
वैद्य तू ओषधी सिद्ध तू साधवे । माधवे माधवे माधवे माधवे ॥ ३ ॥
ब्रह्म तू विष्णु तू रुद्र तू वेष जी । इन्द्र तू चन्द्र तू सूर तू शेष जी ॥
धर्म तू कर्म तू काल तू देशवे । केशवे केशवे केशवे केशवे ॥ ४ ॥
देवमें दैत्यमें दक्षमें यक्षमें । योगमें यज्ञमें ध्यानमें लक्षमें ॥
तीनहू लोकमें एक तूंही भजे । हे अजै हे अजै हे अजै हे अजै ॥ ५ ॥
रावमें रंकमें शाहमें चोरमें । कीरमें काकमें हंसमें मोरमें ॥
सिंहमें स्यालमें मच्छमें कच्छये । अक्षये अक्षये अक्षये अक्षये ॥ ६ ॥
बुद्धिमें चित्तमें पिंडमें प्राणमें । श्रोत्रमें वैनमें नैनमें घ्राणमें ॥
हाथमें पाँवमें शीरमें सोहने । मोहने मोहने मोहने मोहने ॥ ७ ॥
जन्मते मृत्युते पुण्यते पापते । हर्षते शोकते शीतते तापते ॥
रागते द्वेषते द्वन्द्वते है परे । सुन्दरे सुन्दर सुन्दरे सुन्दरे ॥ ८ ॥

इति नामाऽष्टक सम्पूर्ण ॥ ८ ॥

अथ आत्मअचलाऽष्टक ॥ ९ ॥

कुण्डलिया छंद ।

पानी चडस सदा चलै, चलै लाव अरु बैल ॥
खांभी चलता देखिये, कूप चलै नहिं गैल ॥

कूप चलै नहिं गैल, कह सब कूवो चालै ॥
ज्यूं फिरतो नर कहै, फिरै आकाश पतालै ॥
सुंदर आतम अचल, देह यह चलै न छानी ॥
कूप ठौरको ठौर, चलत हैं चडस रु पानी ॥ १ ॥
सृष्टि सवाई चलत है, चलै न कबहूं राह ॥
अपने अपने कामकूं, चलैं चोर अरु शाह ॥
चलैं चोर अरु शाह, कहैं सब मारग चालै ॥
जल हालत लगि पवन, कहैं मति बिंबहि हालै ॥
सुंदर आतम अचल, देह आवै अरु जाई ॥
राह ठौरको ठौर, चलत है सृष्टि सवाई ॥ २ ॥
तेल जरै बाती जरै, दीपक जरै न कोइ ॥
दीपक जरता सब कहैं, भारी अचरज होइ ॥
भारी अचरज होइ, जरै लकरी अरु घासा ॥
अग्नि जरत सब कह, होइ घर बडा तमासा ॥
सुंदर आतम अजर, जरै यह देह विजाती ॥
दीपक जरै न कोइ, जरत हैं तेल रु बाती ॥ ३ ॥
बादल दौरे जात हैं, दौरत दीसै चंद ॥
देह संगते आतमा, चलत कहैं मतिमंद ॥
चलत कहैं मतिमंद, आतमा अचल सदाहीं ॥
हलत चलत यह देह, थापिले आतम माहीं ॥
सुंदर चंचल बुद्धि, समुझि ताते नहिं बौरे ॥
दौरत दीसै चंद, जात हैं बादल दौरे ॥ ४ ॥
गंगा बहती कहत हैं, गंगा वाही ठौर ॥
पानी बहि बहि जात है, कहैं औरकी और ॥
कहैं औरकी और, परतहै देखत खाडी ॥

गाड़ी उखली कहैं कहैं, चलतीको गाड़ी ॥
सुंदर आतम अचल, देह हलचल है भंगा ॥
पानी बहि बहि जात, बहै कबहूं नहिं गंगा ॥ ५ ॥
कोल्हू चलता सब कहै, समुझत नहिं घटमाहिं ॥
पाट लाट मकरी चलै, बैल चले पुनि जाहिं ॥
बैल चले पुनि जाहिं, चलत है हाँकनहारो ॥
पैली गालत चलै, चलत सब ठाठ विचारो ॥
सुंदर आतम अचल, देह चंचल है मोलू ॥
समुझतनहिं घटमाहिं, कहत हैं चालत कोलू ॥ ६ ॥
बिन जाने नर कहत , चल्यो जाय बाजार ॥
लोक चले सब जात हाट न हिले लगार ॥
हाट न हिले लगार, विचार कछू नहिं लहते ॥
नदी तीरपै वृक्ष, कहैं पानीमें बहते ॥
सुंदर आतम अचल, देह यह चलै दिवाने ॥
चल्यो जाय बाजार, कहत हैं नर बिनु जाने ॥ ७ ॥
सब कोऊ ऐसे कह, काटत हैं हम काल ॥
काल नाश सबको करै, वृद्ध तरुण अरु बाल ॥
वृद्ध तरुण अरु बाल, साल सबहिनको भारी ॥
देह आप मानि, कहत हैं नर अरु नारी ॥
सुंदर आतम अमर, देह मर है घर खोऊ ॥
काटत हैं हम काल, कहत ऐसे सब कोऊ ॥ ८ ॥

इति आत्मअचलाऽष्टक संपूर्ण ॥ ९ ॥

अथ ब्रह्माऽष्टक ॥ १० ॥

जंगप्रयात छंद ।

अखंडं चिदानंद देवाधिदेवं, मुनींद्रादि रुद्रादि इंद्रादि सेवं ॥
मुनद्रीादि इंद्रादि चंद्रादि मित्रं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते पवित्रं ॥१॥

धरात्वं जलाग्नी मरुत्वं नमस्त्वं, घटस्त्वं पटस्त्वं अणुत्वं महत्वं ॥
मनस्त्वं वचस्त्वं दृशस्त्वं श्रुतस्त्वं, नमस्ते नमस्ते नमस्त्वं समस्त्वं॥ २ ॥
अडोलं अतोलं अमोलं अमानं, अदेहं अछेहं अनेहं निदानं ॥
अनापं अथापं अपापं अतापं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अमापं ॥ ३ ॥
न ग्रामं न धामं न शीतं न उष्णं, न रक्तं न पीतं न श्वेतं न कृष्णं ॥
न शेषं अशेषं न रेखं न रूपं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अनूपं ॥ ४ ॥
न छाया न माया न देशो न कालो, न जाग्रं न स्वप्नं न वृद्धो न बालो ॥
न ह्रस्वं न दीर्घं न रम्यं अरम्यं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अगम्यं ॥ ५ ॥
न बंधं न मुक्तं न मौनं न वक्तं, न धूम्रं न तेजो न यामी न वक्तं ॥
न युक्तं अयुक्तं न रक्तं विरक्तं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अशक्तं ॥ ६ ॥
न रुष्टं न तुष्टं न इष्टं अनिष्टं, न ज्येष्ठं कनिष्ठं न मिष्टं अमिष्टं ॥
न अग्रं न पृष्ठं न तुल्यं न गृष्टं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते अधिष्ठं ॥ ७ ॥
न वक्त्रं न घ्राणं न कर्णं न अक्षं, न हस्तं न पादं न शीशं न लक्षं ॥
कथं सुंदरं सुंदरं नाम ध्येयं, नमस्ते नमस्ते नमस्ते प्रमेयं ॥ ८ ॥

इति ब्रह्माऽष्टक अंग संपूर्ण ॥ १० ॥

अथ पंजाबीभाषाअष्टक ॥ ११ ॥

छंद।

बहु दिलदा मालिक दिलदी जाणैं, दिलमें बैठा देखै ॥
दुण तिसनौं कोई क्यूं करि पावै, जिसदे रूप न रेखै ॥
बै गौस कुतब पैगंबर थक्के, पीर अवलिया शेखै ॥
भी सुंदर कहि न सकै कोई तिसनौं, जिसदा साफि अलेखै ॥ १ ॥
बहु खोजनहारा तिसनौं पूंछै, जे बाहिरनौ दौडै ॥
बै कोई जाइ गुफामो बैठे, कोई भाजत चौडै ॥
भी दीछें शौक हजारानि दीछे, दीछे लख्यु करोडे ॥

कहि सुंदर खोजु बतावै प्रभुदा, वै केइ जगमौ थोडे ॥२॥
भी उसदा खोजु करैं बहुतेरे, खोजु तिणादे बोलै ॥
बहु भुलै नौ भुल्ला समुझावै, सोभी भुल्ला डोलै ॥
वै जिथैं किथैं फिरैं विचारा, फिरि फिरि छिलकुं छोलै ॥
कहि सुंदर अपना बंधनुं कापै, सोई बंधनु खोलै ॥ ३ ॥
भी खोजे यती तपी संन्यासी, सलोदि छे बड रोगी ॥
बहु उशदा खोजु न पाया किही, दिछे ऋषि मुनि योगी ॥
वै बहुते फिरैं उदासी जगभी, बहुते फिरैं वियोगी ॥
कहि सुंदर केई बिरले दिट्टे, अमृत रसदे भोगी ॥ ४ ॥
बहु खोजी बिन खोजु न निकले, खोजु न हथ्यौ आवै ॥
पंखिदा खोजु मीनदा मारगु, तिंसनौं क्यूं करि पावै ॥
है अति बारीकुं खोजु ना दरशै, नदरि किथौं ठहरावै ॥
कहि सुंदर बहुत होइ जब नन्हां, नन्हे नौं दरशावै ॥ ५ ॥
भी खोजत खोजत सभु जगु हठया, खोज किथैं नहिं पाया॥
तूं जिसनौ खोजै खोज तूझिमा, सतगुरु खोज बताया ॥
तैं अपुना आपु सही जब कीता, खोज इथांही आया ॥
जब सुंदर जागि पऱ्या सुपनैं, थौं सभु संदेह गमाया ॥ ६ ॥
भी जिसदा आदि अंतु नहिं आवै, मध्यहु तिसदा नाहीं ॥
बहु बाहिर भितरु सर्व निरंतरु, अगम अगोचर माहीं ॥
बह जागि न सोवै खाइ न भुख्या, जिसदै धुप्पु न छाहीं ॥
कहि सुंदर कापै आप अखंडित, शब्द न पहुँचै जाहीं ॥७॥
वै ब्रह्मा विष्णु महेश प्रलयमौं, जिसदिखिसै ना रूहीं ॥
भी तिसदा कोई पारु न पावै, शेष सहस फणु मूहीं ॥
भी यहु नहिं यहु नहिं यहु नहिं होवै, इसदै परै सु तूही ॥
बह अवशेष रहै जो सुंदर, सो तूंही सो हूंही ॥ ८ ॥

इति पंजाबीभाषाऽष्टक ॥ ११ ॥

अथ ज्ञानझूलनाऽष्टक ॥ १२ ॥

उस्तादके शिर धरौं, अब झूलना खूब बखानताहूं ॥
अरवाहमें आप विराजता है, वह जानका जान जानताहूं ॥
उसहीके झुलाये डोलता हूं, दिल खोलता बोलता मानताहूं ॥
उसहीके दिखाये देखता हूं, अरु सुंदर यों पहिचानताहूं ॥ १ ॥
कोई नेरे कहै कोई दूरे कहै, वह आपुही नेरे न दूर है रे ॥
दिल भीतर बाहर एकसा है, आसमान ज्यूं वो भरपूर है रे ॥
अनुभव बिना नहिं जानि सकै, निरसंध निरंतर नूर है रे ॥
उपमा उसकी अब कौन कहै, नहिं सुंदर चंदर सूर है रे ॥ २ ॥
कोइ वार कहै कोइ पार कहै, उसका कहूं वार न पार है रे ॥
कोइ मूल कहै कोइ डाल कहै, उसके कहूं मूल न डाल है रे ॥
काइ शून्य कहै कोइ थूल कहै, वह शून्य हू थूलत न्यार है ॥
कोइ एक कहै कोइ दोइ कहै, नहिं सुंदर द्वंद लगार है रे ॥ ३ ॥
कोइ योग कहै कोइ याग कहै, कोइ त्याग विराग बतावता है ॥
कोइ नाम रटै कोइ ध्यान जटै, कोइ खोजतही थकि जावताहै ॥
कोइ औरही और उपाव करे, कोइ ज्ञानगिरा करि बगावता है ॥
वह सुंदर सुंदर सुंदर है, कोइ सुंदर होइ सु पावताहै ॥ ४ ॥
नहिं बैठताहै नहिं ऊठताहै, नहिं आवनेका नहिं जावनेका ॥
नहिं बोलताहै न अबोलताहै, नहिं देखता है न दिखावनेका ॥
नहिं सूंघता है न असूंघता है, नहिं सूनता है न सुनावनेका ॥
नहिं सोवता है नहिं जागता है, नहिं सुंदर सखुन पावनेका ॥५॥
कहु कौन कहै कहु कौन सुनै, वह कहन सुननते भिन्न है रे ॥
कहुं ठौर नहीं कहुँ ठाम नहीं, कहुँ गाँव नहीं तिन किन्न है रे ॥
तहां शीत नहीं तहाँ घाम नहीं, तहाँ धाम न राति न दिन्न है रे ॥
तहां रूप नहीं तहां रेख नहीं, तहां सुंदर कछू न चिह्न है रे ॥६॥

नहिं रोम है रे नहिं नैन है रे, नाहि मुख है रे नहिं बैन है रे ॥
नहिं ऐन है रे नहिं गैन है रे नहिं सैन है रे न असैन है रे ॥
नहिं पेट है रे नहिं पीठ है रे, नहिं कडुवा है रे नहिं मीठ है रे ॥
नहिं दुश्मन है रे न मित्र है रे, नहिं सुंदर दीठ अदीठ है रे ॥७॥
नहिं शीश है रे नाहिं पाँव है रे, नहिं रंक है रे नहिं राव है रे ॥
नहिं खावनै पीवनै चाव है रे, नहिं हार नहिं जीत नहिं दाँव है रे ॥
नाहिं नीर है रे नहिं नाव है रे, नाहिं खाक है रे नहिं वायु है रे ॥
नहिं मोति है रे नहिं आब है रे, नहिं सुंदर भाव अभाव है रे ॥८॥

इति श्रीज्ञानझूलनाऽष्टक संपूर्ण ॥ १२

अथ अजबख्यालाऽष्टक ॥ १३ ॥

दोहा छन्द ।

जिसदा सिरजनहारको, मुरशिदकों ताजीम
सुंदर तालिब करत है, बंदोंको तसलीम ॥ १ ॥
सुंदर इस औजूदमें, अजब चीज है यांदें ॥
तब पावे इस भेदको, खूब मिलै उस्ताद ॥ २ ॥

गीतक छंद ।

उस्ताद शिरपर चुस्त दम, करम कर इक अल्लाह लाइयें ॥
गुजरान इसकी बंदीसों, इश्क बिन कां पाइये ॥
यह दिल फकीरी दस्तगारा, दस्त गुंज सिना लहै ॥
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है ॥ ३ ॥

दोहा ।

सुंदर रत्ता एकसों, दिलमों दूजा नेश ॥
इश्क मुहब्बति बंदगी, सो कहिय दुरवेश ॥ ४ ॥

गीतकछंद ।

दुरवेश दरकी खबर जाने दूर दिलकी काफिरी ॥

दरदवंद खिरा दुरूनै, उसी बीच मुसाफिरि ॥
है बेतमा इस मर्दुमीसें, पाक दिलदर हाल है ॥
यों कहत सुंदर कब्ज ढूंढर, अजब ऐसा ख्यालहै ॥ ५ ॥

दोहा छंद।

सुंदर सीने बीच में, बंदेका चौगान ॥
पँहुचावै उस हालको, इहै गूइ मैदान ॥ ६ ॥

गीतक छंद।

कम दस्त इस मैदानमें, चौगान खेलै खूब है ॥
असवार ऐसा तुरी वैसा, प्यार इस महबूब है ॥
इस गूइको ले जायके, पहुँचाइ दे उस हाल है ॥
यों कहत सुंदर कब्ज ढूंढर, अजब ऐसा ख्याल है ॥ ७ ॥

दोहा छंद।

सुंदर उसका नांव ले, एक उसीकी चाह ॥
रब्बु रहीम करीम वह, कहिये वही अल्लाह ॥ ८ ॥

त्रिभंगी छन्द।

अल्लाह खुदाइ करीम कादिर, पाक परवरदिगार है ॥
सुबहान तू सत्तार साहिब, साफ सिरजनहार है ॥
मुश्ताक तेरे नांव ऊपर, खूब खूबां लाल है ॥
यों कहत सुंदर कब्ज ढूंढर, अजब ऐसा ख्याल है ॥ ९ ॥

दोहा छंद।

सुंदर इस औजूदमों, इश्क लगाई झूक ॥
आशिक ठंढा होइ तब, आइ मिलै माशूक ॥ १० ॥

त्रिभंगी छन्द।

माशूक मौला हकताला, तूं जिमी असमानमों ॥

अरु औलिया अंबिया वे भी, गौस कुतब खडे रहैं ॥
को कहि सकै न कह्या न किनहू, सखुन परे निराल है ॥
यों कहत सुंदर कब्ज द्वंद्वर, अजब ऐसा ख्याल है ॥१७॥

दोहा छंद।

ख्याल अजब उस एकका, सुंदर कह्या न जाइ ॥
सखुन तहाँ पहुँचै नहीं, थक्या उरेंही आइ ॥ १८ ॥

इति श्रीअजबख्यालाऽष्टक सम्पूर्ण ॥ १३ ॥

इति सुन्दरदासकृतकाव्यसम्पूर्ण।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना--
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस, खेतवाडी-बम्बई.

"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखानाकी परमोपयोगी, स्वच्छ, शुद्ध और सस्ती पुस्तकें।

यह विषय आज २५।३० वर्षसे अधिक हुआ भारतवर्षमें प्रसिद्ध है कि, इस छापाखानाकी छपी हुई पुस्तकें सर्वोत्तम और सुन्दर प्रतीत तथा प्रमाणित हुई हैं। इस यन्त्रालयमें प्रत्येकविषयकी पुस्तकें जैसे–वैदिक, वेदान्त, पुराण, धर्मशास्त्र, न्याय, मीमांसा, छन्द, ज्योतिष, साम्प्रदायिक, काव्य, अलंकार, चम्पू, नाटक, कोश, वैद्यक, तथा स्तोत्रादि संस्कृत और हिन्दीभाषाके प्रत्येक अवसरपर विक्रीके लिये तैयार रहतेहैं। शुद्धता, स्वच्छता तथा कागजकी उत्तमता और जिल्द की बँधाई देशभरमें विख्यात है। इतनी उत्तमता होनेपर भी दाम बहुत ही कम रक्खे गये हैं और कमीशन भी पृथक् काट दिया जाता है। ऐसा अवसर पाठकोंको फिर मिलना असंभवहै। संस्कृत तथा हिन्दीके रसिकोंको अवश्य अपनी २ आवश्यकतानुसार पुस्तकों के मँगानेमें त्रुटि न करना चाहिये. ऐसा उत्तम, सस्ता और शुद्ध माल दूसरी जगह मिलना असम्भव है)॥ भेजकर 'बडा सूचीपत्र' मँगा देखो॥

पुस्तकोंके मिलनेका ठिकाना–

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना खेतवाडी–बंबई.

National Library
Calcutta-27.

है आब अरु इस बाद म्यानैं, खबरदार जहानमों ॥
मालिक मुल्क मालूम जिसको, दुरस दिल हरसालहै ॥
यों कहत सुंदर कब्ज ढूंढर, अजब ऐसा ख्याल है ॥ ११ ॥

दोहा छंद ।

सुंदर जो गाफिल हुवा, तो वह साईं दूर ॥
जो बंदा हाजिर हुवा, तो हाजिरउ हुजूर ॥ १२ ॥

गीतक छंद ।

हाजिरां हुजुर गुसाइहां, गाफिलौंको दूर है ॥
निरसंध इकरस आप वोही, तालिबां भरपूरहै ॥
बारीकसों बारीक कहिये, वडो बडा ओ विशालहै॥
यों कहत सुंदर कब्ज ढूंढर, अजब ऐसा ख्याल है॥ १३ ॥

दोहा छंद ।

सुंदर सांई हक है, जहाँ तहाँ भरपूर ॥
एक उसीके नूरसों, दीसैं सारे नूर ॥ १४ ॥

गीतक छंद ।

उस नूरते सब नूर दीसैं, तेजते सब तेज हैं ।
उस ज्योतिसों सब ज्योति चमकैं, हैजसों सब हैज हैं ॥
अफताब अरु महताब तारे, हुक्म उसके चाल है ।
यों कहत सुंदर कब्ज ढूंढर, अजब ऐसा ख्याल है ॥ १५ ॥

दोहा छन्द ।

सुंदर आलिम इलम सब, खूब पढ्या आखून ॥
पर उसको क्यूं कहि सकै, जो कहिये बेचून ॥ १६ ॥

गीतक छंद ।

बेचून उसको कहत बुजर, कवी मूरत उसे कहै ॥